प्राप्ति स्थान

श्री वासुपूज्य जैन पुस्तक भण्डार
मु० पो० सरत जि. जालोर (राज.)

मूल्य १०) रु.

मुद्रक :—
मनोहरलाल डाँगी
श्री वर्धमान प्रिंटिंग प्रेस, निम्बाहेड़ा (राज.)

सरत गांव स्थित श्री जैनमन्दिर के मूलनायक भगवान

श्रीवासुपूज्य स्वामी



विश्वोपकारकीभूत, तीर्थंकृतकर्मनिर्मितिः ।
सुरासुरनरैः पूज्यो वासुपूज्य पुनातुवः ॥

दो शब्द

हमारे सरत श्रीसघ की अत्याग्रह पूर्ण विनती स्वीकार कर पूज्य मुनिराज श्री बलभद्रविजयजी महाराज का सवत् २०३२ का चातुर्मास सरत में हुआ। आपश्री के वर्षावास में यहाँ विराजने के कारण धर्मध्यान, व्रत, पच्चक्खान आदि का अभूतपूर्व ठाठ रहा जिससे प्रेरित होकर श्रीसघ ने चातुर्मास की स्मृत्यार्थ कोई साहित्य प्रकाशित करने का विचार किया।

प्राणीमात्र अपने शुभाशुभ कर्मों के उदय से सुख अथवा दु.ख अवश्य भोगता है चाहे वह दु:खी होकर भोगे या शान्ति के साथ धैर्य धारण कर। ज्ञानियों का यह कथन अक्षरस सत्य है कि—

सुख दु:ख दोनों मानवा, हर काहू को होय।
ज्ञानी भुगते ज्ञान से, मूरख काटे रोय।।

ज्ञानी पुरुष सोचता है कि अवश्यमेव भोक्तव्यकृत कर्म शुभाशुभं अर्थात् शुभ अथवा अशुभ कर्म जैसे भी प्राणी बाँधता है उनको अवश्य भोगना ही पड़ता है अतः क्यो न धैर्य धारण कर इन्हे भोग लूं। ऐसा सोच कर वह शान्तिपूर्वक उन्हे सहन कर लेता है जिस से उसको वह कठिन मालूम नहीं होते और अपने कर्मों

के कर्ज को आसानी से उतार देता है इसके अतिरिक्त अज्ञानी प्राणी पर जव कोई कर्म की मार पडती है तो वह एकदम घवरा जाता है और आर्त्त रौद्र ध्यान द्वारा दुगुने कर्मो का वन्ध वाँध लेता है। वह दुख उसे पहाड़ - सा प्रतीत होने लगता है जिससे उन कर्मो का क्षयोपशम होने के स्थान पर उल्टे भारी कर्मवन्धन हो जाते है ।

ज्ञानियो ने दुर्गति मे गिरते हुए प्राणियो को वचाने के लिए अनेक मार्ग वतलाये है उनमे चरितानुवाद अर्थात् महान् आत्माओ के चरित्र पठनपाठन का भी एक ऐसा उत्तम और सरल मार्ग प्रदर्शित किया है जिसके माध्यम से विद्वान् और विचारशील प्राणी अपने जीवन पर दृष्टिपात कर अपने स्वयं के जीवन मे जो अवगुण समावेश हो गये हो उनको परिमार्जन कर परित्याग करके सन्मार्गानुगामी वन जाते हैं। वह जानते हैं वह ज्ञानी पुरुष धर्म के रहस्य को भली प्रकार समझने लगता है । ज्ञानियो का कथन है कि —

देख दूसरों की हालत को, खुद का करे विचार ।
वही जीव जगत में अपना, कर लेता है पूर्ण सुधार ।

इसी तरह चरितानुवाद मे अर्थात् धर्मकथाओं में महात्मा महावल एवं मलयासुन्दरी का चरित्र भी ऐसा

हृदयग्राही महान् चरित्र है जिसको पढ कर प्राणियो को कर्मसिद्धान्त पुनर्जन्म, विश्वासशल्य, मानव कर्त्तव्य, पतिव्रतधर्म, एक पत्नीव्रत और पतिपरायणता आदि का उत्तम बोध प्राप्त होता है ।

ज्ञान पिपासु और धर्म - जिज्ञासु प्राणी इस चरित्र से बोध प्राप्त करेंगे कि 'मगरमच्छ जैसा जलचर जीव भी अपने पूर्वभव के मलयासुन्दरी की धायमाता के भव मे पुत्रीप्रेम होने के कारण किस प्रकार अथाह समुद्र मे पड़ी हुई मलयासुन्दरी की सोतेली माता कनकवती के अपने पूर्व भव के वैरानुबन्धी कर्म के प्रभाव से किस तरह मलयासुन्दरी को अपने छल-कपट माया से घोर दुःख मे डाल कर उस दुष्कर्म द्वारा स्वय को भी किस तरह महान् दु.ख भोगना पड़ता है इस बात का बोध इस पुस्तक के पढने से विचारवान पुरुष स्वय बोध पा कर अपने आपको सुधारे के मार्ग पर आरूढ कर लेता है ।

महाबलकुमार ने किस तरह घोर सकट सहन कर के भी अपने एक पत्नीव्रत धर्म को निभाया और इसी तरह मलयासुन्दरी ने भी मरणान्त कष्ट आने पर भी अपने पतिव्रत धर्म को दृढता पूर्वक पालन किया इसका ज्वलन्त उदाहरण इस पुस्तक के पठन - पाठन से प्राप्त होता है ।

महात्मा महाबल एवं महा सती मलयाकुमारी वर्तमान चौवीसी के तेइसवें तीर्थङ्कर प्रभु श्री पार्श्वनाथ स्वामी के निर्वाण के एक-सौ वर्ष पश्चात् हुए जिसका सर्व प्रथम वर्णन प्रभु श्री पार्श्वनाथ भगवान के श्रीकेशी गणधर ने शङ्ख राजा के सन्मुख वर्णन किया ।

यह चरित्र कई भाषाओ मे अनुवाद होकर प्रकाशित हो गया । अतः पूर्वाचार्यो द्वारा प्ररूपित प्राकृत भाषा से पूज्यपाद आचार्य प्रवर श्री जयतिलकसूरीश्वरजी महाराज ने इस महान् चरित्र का सस्कृत मे अनुवाद कर प्रकाशित किया ।

स्व० वयोवृद्ध मुनिराज श्री सोमविजयजी महाराज का स० २०१० का चातुर्मास बीकानेर श्रीसघ की आग्रह भरी वीनती होने से स्व० मुनिराज श्री उम्मेदविजयजी म० सा० एवं मुनिराज श्री बलभद्रविजयजी म० सा० सहित शहर बीकानेर मे हुआ। व्याख्यान मे प्रथम विद्वान् मुनिराज श्री उम्मेदविजयजी महाराज सटीक स्थानाग सूत्र श्रवण कराते थे एवं द्वितीय व्याख्यान भावनाधिकार मे इस महाबल मलयासुन्दरी चरित्र की कथा सस्कृत भाषा से हिन्दी अनुवाद कर इस प्रकार हृदयग्राही और रोचक शैली मे व्याख्या फरमाते थे कि जिसे सुनने के लिए अनेक जैन-जैनेतर लोग लालायित होकर एकत्रित हो जाते थे । इस प्रकार इस चरित्र

को भावपूर्ण श्रवण कर बीकानेर श्रीसंघ ने इस चरित्र को आम जनता (भवि प्राणियो) के हितार्थ बोलचाल की भाषा हिन्दी मे अनुवाद करवा कर प्रकाशित करवाने का निश्चय किया ।

उपर्युक्त निश्चयानुसार इस चरित्र का संस्कृत से हिन्दी भाषा मे अनुवाद करने के लिए विद्वान् मुनिराज श्री उम्मेदविजयजी म० के शिष्यरत्न मुनि श्री सुमतिप्रभ विजयजी म० सा० को निवेदन किया अत. उक्त मुनि राज ने इसका हिन्दी की रोचक भाषा मे अनुवाद करने की कृपा की और मास्टर आत्मारामजी बी० जैन (धर्माध्यापक) रामपुरिया इण्टर जैन कॉलेज बीकानेर (राजस्थान) द्वारा प्रकाशित कराई गई ।

यद्यपि इस पुस्तक की प्रथमावृत्ति में २००० दो हजार प्रति मुद्रित कराई गई तथापि इस पुस्तक की उपयोगिता और रोचकता के कारण यह पुस्तक हाथों हाथ बिक गई अतः इस समय यह पुस्तक अप्राप्य है।

सरत श्रीसघ की प्रबल भावना को ध्यान मे ला कर मुनिराज श्री बलभद्रविजयजी म० ने इस पुस्तक को पुन प्रकाशित कराने की प्रेरणा की अत यह पुस्तक दुबारा छपवाई जा कर पाठको के हाथो में यह द्वितियावृत्ति मौजूद है ।

सरत श्रीसघ समस्त मुनिराज श्री बलभद्रविजयजी

महाराज का अत्यन्त आभारी है कि जिन्होंने हमारी आग्रहभरी विनती स्वीकार कर यहाँ चातुर्मास विराजने की कृपा की और अपने धर्मोपदेशो द्वारा अत्रस्थ श्रद्धालु श्रावक-श्राविकाओ के दिलो मे धर्मजागृति पैदा कर असीम आनन्द पूर्वक त्याग तप धर्मध्यान व्रत नियमादि का वातावरण पैदा किया और अपनी शुभ प्रेरणा से इस पुस्तक की द्वितियावृत्ति प्रकाशित करवा कर इस चातुर्मास की स्मृति को अक्षुण्ण बनाया ।

इस पुस्तक की प्रथमावृत्ति मे शीघ्रता के कारण प्रूफ सशोधन मे असावधानी से अनेक अशुद्धिया और भाषादोष रह गया था । प्रस्तुत सस्करण मे श्री वर्धमान प्रिन्टिग प्रेस के कुशल सचालक श्री माधवलाल मनोहरलाल डागी निम्बाहेड़ा के ध्यानपूर्वक प्रूफसशोधन एव मुद्रण सम्बन्धी सफाई मे सावधानी रखने से कार्य सन्तोपप्रद वन गया एतदर्थ प्रेस के कार्यकर्ता धन्यवाद के पात्र है । दृष्टिदोष के कारण यदि कोई अशुद्धि रह गई हो तो पाठक सुधार कर पढे यही विनय है ।

अन्त मे इस पुस्तक को पढ कर भवि जीव अपने जीवन को सन्मार्गानुगामी वनाने का प्रयत्न करे इसी सद्भावना के साथ—

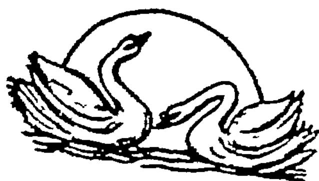
—समस्त श्री जैन श्वेताम्बर श्रीसङ्घ
मु० सरत (राजस्थान)

पं० श्री कल्याणविजयजी म.



जन्म स० १९४४ लास (राज.) दीक्षा स० १९६३ जालोर
पन्यास पद स० १९९४ अहमदावाद (गुजरात)
स्वर्गवास स. २०३२ आषाढ सुदि १२ जालोर (राजस्थान)

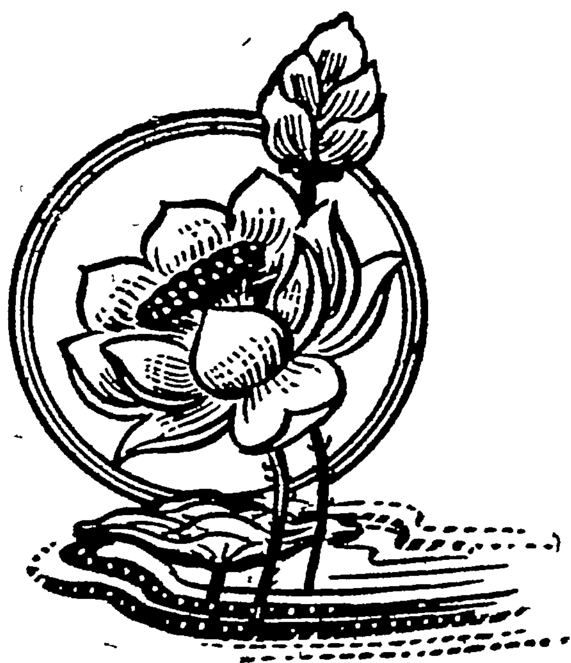
विषयानुक्रमणिका





पूज्यवर हिमाचलसूरीश्वरजी म० सा० के शिष्यरत्न

मुनिराज श्रीबलभद्रविजयजी महाराज



समर्पण—



परम पूज्य तारक गुरुदेव

श्री नाकोडा तीर्थोद्धारक, मेवाड़-केसरी, ज्योतिषमार्तण्ड

शासन-शृङ्गार आचार्य भगवन् श्री श्री श्री १००८श्री

मद्विजय हिमाचलसूरीश्वरजी

महाराज साहब के

चरणकमलों में--

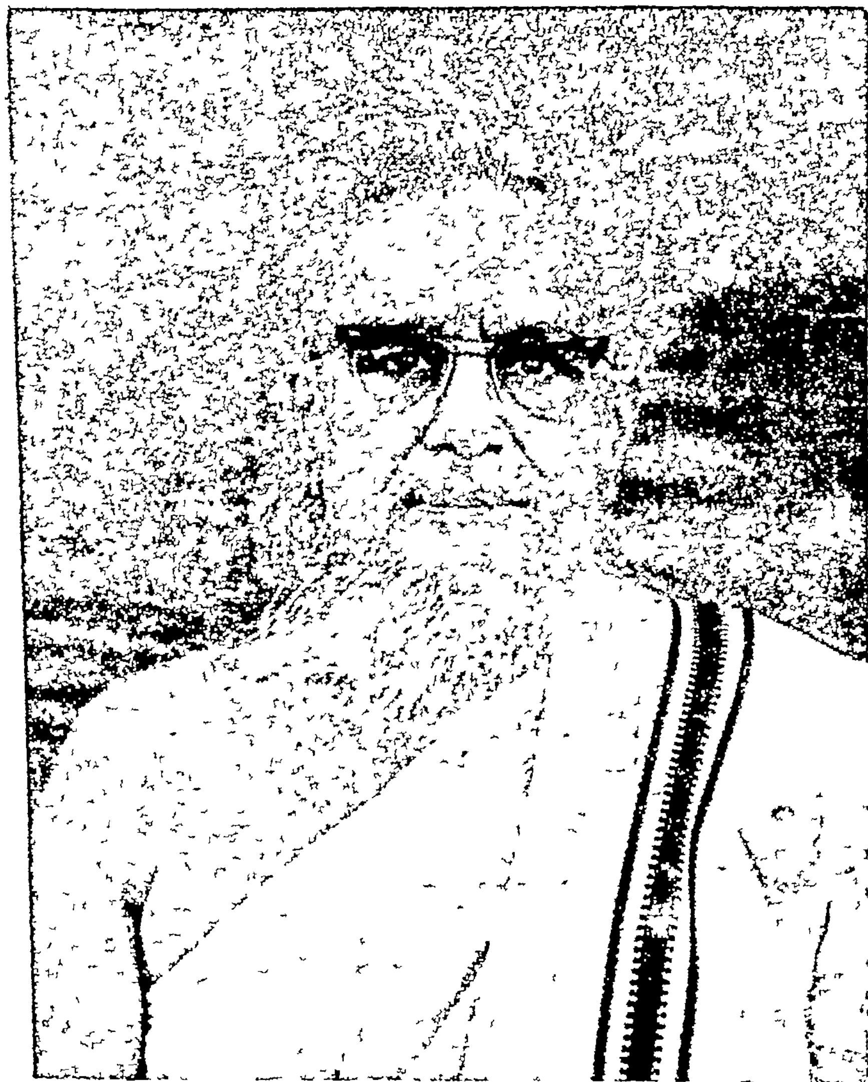
सादर समर्पित !

चरणरेणु—

मुनि बलभद्रविजय

मेवाड़ केसरी श्री नाकोड़ा तीर्थोद्धारक श्रीमद्–

विजय हिमाचलसूरीश्वरजी म०



जन्म स० १९६४ केलवाडा (राज.) दीक्षा स० १९८० घाणेराव (राज) पन्यास पद सं० १९८५ घाणेराव (राज.) आचार्यपद सं० २००० घाणेराव (राज)

॥ ॐ अर्हन्नमः ॥

मलयासुन्दरी चरित्र

(१)

धर्म का प्रभाव

चतुरङ्गो जयत्यर्हन् दिशन् धर्मं चतुर्विधम् ।
चतुष्काष्टासु प्रसृतां जेतुं मोह चमूमिव ।

चारों दिशाओं मे फैली हुई मोहराजा की सैना को जीतने के लिए ही मानो चार शरीर को धारण कर चार प्रकार के धर्म का उपदेश करते हुए अरिहन्त भगवन्त जय को प्राप्त करते है ।

ससार में धर्म सर्वोत्कृष्ट मंगल है । समृद्धि को देने वाला, अनेक प्रकार के सुख प्राप्त कराने वाला सन्तान को तारने वाला, पूर्वजों को पवित्र करनेवाला अपकीर्ति को हरने वाला, और जगत् में कीर्ति की

वृद्धि करने वाला एक मात्र धर्म ही है। नमानि की इच्छा करने वालो को सम्पत्ति देने वाला, सौभाग्य चाहने वालो सौभाग्य प्राप्त कराने वाला, पुत्रार्थियो को पुत्र और राज्यार्थियो को राज्यऋद्धि प्राप्त कराने वाला भी केवल धर्म ही है। विशेष क्या कहा जाय ? जगत में कोई ऐसी वस्तु नही कि जो धर्म के द्वारा धर्मकर्ता को प्राप्त न हो सके। अर्थात् स्वर्ग और अपवर्ग मुक्ति की प्राप्ति भी धर्म से ही होती है।

धर्म का प्रभाव कथन या श्रद्धा मात्र से ही नहीं है, किन्तु विचारक मनुष्य ससार की विषमता का विचार करके इसका भली प्रकार निर्णय कर सकते हैं। प्रत्यक्ष देख पडता है कि संसार में एक मनुष्य सुखी, दूसरा दु खी, एक मूर्ख दूसरा ज्ञानी, एक निरोगी दूसरा रोगी, एक धनवान् दूसरा निर्धन, एक दाता दूसरा भिक्षु, एक मनुष्य लाखो लोगो का पूज्य और दूसरा लाखो मनुष्यो द्वारा तिरस्कृत। इत्यादि अनेक प्रकार की विचित्रता का अनुभव क्यो होता है? मनुष्यता समान होने पर भी इस तरह का भेद क्यो

देखा जाता है ? एक ही कार्य के लिए सब तरह के साधन द्वारा समान प्रयत्न करने पर भी एक को उस कार्य मे विजय और दूसरे की पराजय दीख पड़ती है। समान साधन और समान ही प्रयत्न करने पर विजय और पराजय का कारण क्या ? विचारक मनुष्य विचार द्वारा इस कारण को शोधते हुए स्वयं निश्चय कर सकता है कि इन तमाम बातो मे कारणभूत मात्र एक धर्म ही है। धर्म का विषय बहुत गहन है। उसके कार्य और कारण के नियमों का अभ्यास बहुत सूक्ष्मता से करना चाहिये। धार्मिक सूक्ष्म ज्ञान के सिवा मनुष्य बहुत बार गम्भीर भूले कर बैठता है, और उससे अपनी धार्मिक श्रद्धा को शिथिल कर लेता है।

दृष्टान्त के तौर पर धर्म श्रद्धा के शिथिल होने का बहुत बार यह कारण बनता है कि पाप बुद्धि से आजीविका करने वाले, कपट प्रपंच रचने वाले और पाप में अधिक प्रवृत्ति करने वाले बहुत-से मनुष्य सुखी दीख पडते है। व्यवहारिक कार्य प्रपच मे भी कदाचित्

उन्हे सफलता प्राप्त होती दिखाई पड़ती है। इत्यादि प्रत्यक्ष कारणो को देख कर बहुत-से व्यक्ति अपने दिल में शंकाशील बनते हैं कि धर्म है या नही ? धर्म का फ़ल मिलता है या नही ? पापो लोग सुखी क्यों है ? धर्म करने वाले दु.खी क्यों हैं ? इत्यादि शंका की नजर से धर्म तथा उसके फल को देखते है। सच पूछो तो इस प्रकार की शंका करने वाले मनुष्यो को धर्म और उसके कार्य कारण के नियमों का पूर्ण परिज्ञान ही नही हो पाया इसीसे बाह्य व्यवहार को देख कर उनके दिल में शकाएँ पैदा होती हैं, परन्तु उन्हें सोचना चाहिये कि संसार में कोई भी कार्य कारण के विना निष्पन्न नहीं होता।

जमीन में बीज बोये बाद हवा पानी और खाद आदि निमित्त सर्वथा अनुकूल हों तो वह बीज अल्प समय मे ही अकुरित हो शाखाएँ, पत्तियाँ आदि पैदा हो कर एक वृक्ष के रूप में नजर आता है, और समय पर फल भी देने में समर्थ होता है परन्तु पर्याप्त अनुकूल साधन होने पर भी वह बीज एक ही दिन में

महान् वृक्ष के रूप में नहीं दीख सकता। क्यों कि कारण को कार्य के रूप मे आने के लिए कुछ भी समयान्तर या व्यवधान की आवश्यकता है। इसी प्रकार इस दृष्टान्त के समान धर्मवृक्ष के मीठे फल प्राप्त करने के लिए व्यवधान की जरूरत होती है। एवं पाप रूपी वृक्ष के कड़वे फलों के साथ भी इस व्यवधान की समानता समझ लेना चाहिये। जिस प्रकार वृक्ष की वृद्धि में और उसके शीघ्र फल देने में अनुकूल कारणों की आवश्यकता होती है उसी तरह उग्र पुण्य और उग्र पाप वाले कर्मों का फल थोड़े ही समय में तीव्र मिलता है और मन्द परिणाम से किये हुए पुण्य पाप वाले कर्मो का फल कालान्तर मे अल्पसुख दुःख रूप से मिलता है।

उपर्युक्त विवेचन से यह सिद्ध होता है कि जो पापवृत्ति करने वाले प्रपञ्ची मनुष्य इस समय सुखी दिखाई देते है और व्यवहार मे सफलता प्राप्त करते हैं यह उनके पूर्वोपार्जित शुभ कर्मों का फल है। उन का पूर्व कर्म जो इस समय पापाचरण करते हुए भी

उन्हे सुख और सफलता दे रहा है। इस समय के अशुभ कर्मों के फलो के बीच पूर्व के शुभ कर्मों का व्यव-धान पडा हुआ है। यह व्यवधान या अन्तर पूर्ण होने पर अर्थात् पूर्वकृत शुभ कर्म का फल समाप्त होने पर और वर्तमान काल के या पूर्व काल के अ-शुभ कर्म उदय होने पर इस समय सुखी दिखाई देने वाले मनुष्यो के तीव्र या मन्द पाप परिणाम के परि-माण मे दु ख की न्यूनाधिकता अवश्य परिवर्तन हो जाती है।

क्रिया अच्छी हो बुरी उसका फल अवश्य मिलता है। अच्छी क्रिया का अच्छा फल और बुरी क्रिया का बुरा फल प्राप्त होता है। इसको साबित करने के लिए अनेक दृष्टान्त नजर के सामने मौजूद है इसलिए धर्म सत्य है और उसका फल अवश्य ही मिलता है। मनुष्यो के लिए धर्म की परम आवश्यकता है और वह धर्म इस मनुष्य जिन्दगी मे ही प्राप्त हो सकता है। ज्यो छाछ से मक्खन, कीचड़ से कमल, खॉन से मुक्तामणि सारभूत होने के कारण ग्रहण

करने योग्य है, त्यो मनुष्यजन्म से सारभूत धर्म ग्रहण करने योग्य है।

दुर्गति मे पड़ते प्राणियो को धारण करने वाला होने से और सद्गति प्राप्त कराने वाला अर्थात् जन्म-मरण के भयंकर दुःखो से मुक्त कराने वाला होने के कारण वह धर्म कहलाता है। ज्ञान दर्शन और चरित्र इन तीनो मे पूर्वोक्त सामर्थ्य होने से रत्नत्रय ही धर्म है।

जिससे जीव अजीवादि तत्त्वो का बोध होता है उसे महान् पुरुप सम्यग्ज्ञान कहते है। आत्मा और उससे भिन्न अजीव ये मुख्य वस्तु है। इन दोनो मुख्य तत्त्वो में संसार के सर्व दृश्य और अदृश्य पदार्थो का समावेश हो जाता है। जड पदार्थो के साथ जो आत्मा की आसक्ति है उसके कारण ही यह सर्व प्र–पञ्च दिखाई पडता है। आत्मा और जड पदार्थ का जो समिश्रण है वही नाना प्रकार के देह धारण करने का कारण है। इष्ट अनिष्ट जड़ पदार्थो की प्राप्ति से होने वाला हर्ष शोक ही संमिश्रण का कारण

है जड पदार्थों के लिए उत्पन्न हुए रागद्वेष से कर्म का आगमन होता है। ये कर्म अनेक रूप में विभाजित हो कर आत्मा के शुद्ध गुणोको आच्छादित करते है (दबाते हैं) उन कर्मावरणों के द्वारा यह आत्मा चतुर्गति रूप ससार मे परिभ्रमण करती हुई अनेक प्रकार की यातनाओ–पीड़ाओं का अनुभव करती है। ससार को अनेक विध पीड़ाओ की शान्ति का मुख्य कारण मात्र ज्ञान है। ज्ञान से सत्यासत्य का, नित्यानित्य का, हिताहित और स्वरूप का वोध होता है। वस्तु का वस्तु के रूप में बोध होने से सत्य और हितकारी वस्तु की ओर प्रीति पैदा होती है। वही सुखदायी है ऐसी श्रद्धा जमती है। यह श्रद्धा प्राप्त होने पर तदनुसार आचरण करने की रुचि होती है और उस प्रकार वर्तन करने से आत्मा अपने शुद्ध स्वरूप को प्राप्त कर सकता है। तात्पर्य यह है कि सद्ज्ञान से सत्यवस्तु मालूम होती है, सद्दर्शन से उस में श्रद्धा पैदा होती है और चारित्र तदनुसार वर्तन किया जाता है। या यो कहे कि सत्य वस्तु जानने

को सद्ज्ञान, उसके निश्चय को सद्दर्शन और, और जैसा जाना तथा जैसी श्रद्धा वैसा ही आचरण करना वह चारित्र। ज्ञान, दर्शन और चारित्र इन तीनो मे ज्ञान की मुख्यता है। क्योंकि इसके बिना पिछले दोनो अंग प्राप्त नही होते।

अदृष्टार्थ प्रकाशक, ज्ञान, तीसरे नेत्र के समान है। गाढे अज्ञान अन्धकार को दूर करने वाला ज्ञान सूर्यबिम्ब के समान है। ज्ञान निष्कारण बन्धु है। ज्ञान मनुष्यो के लिए ससार रूपी समुद्र में जहाज के समान है। कर्म के सिद्धान्तो का ज्ञान अधिकतर मनन करना चाहिये और उसे हरएक प्रसंग और क्रिया में प्रयुक्त करना चाहिये। दु.खदायी प्रसंगो मे अपना दु·ख कम करने के वास्ते उसे अवश्य ही सन्मुख लेना और धैर्य से दु.ख के प्रसगो को पार करना चाहिये। जिस प्रकार एक श्लोक के अर्थ की विचारणा से राजकुमारी मलयासुन्दरी ने दु ख के महान् समुद्र को पार कर लिया।

कथारम्भ

प्राचीन साहित्य में विशाल भारतभूमि आर्यदेश के नाम से प्रसिद्ध है। उसके दक्षिण देश मे चन्द्रावती नगरी उसकी शोभा मे और भी अधिक वृद्धि कर रही थी। इसी चन्द्रावती नगरी के पूर्ववर्ती विशालकाय महान् मलयाचल पर्वत अपने ससुगन्ध मन्द पवन से नगर के लोगो को नित्य आनन्दित करता था। राजा के महल, अनाढ्य व्यापारियों के गगनचुम्बी मकान, जिनेश्वरदेव के अनेक मन्दिर और धर्माराधनार्थ पवित्र स्थान उस नगरी की मुख्य शोभा बढा रहे थे। शहर के चारों तरफ सुन्दर किला था। शहर की दक्षिण दिशा मे महान् विस्तार वाली गोला नदी कलकल निनाद करती हुई बह रही थी शीतल और चमत्कारी तरंगो से देखने वालों के मन को आनन्दित

करती थी। नदी के किनारे का हरियाला प्रदेश शहर के चारो तरफ बगीचे और छोटे-छोटे सुन्दर पहाड़ों पर खड़े हुए वृक्षो के निकुञ्ज ग्रीष्म ऋतु मे प्रचण्ड आताप से मनुष्यो को शान्ति देने के लिए पर्याप्त थे। नगरी में व्यापार भी बहुत होता था इस कारण अनेक देश के व्यापारी चन्द्रावती नगरी मे बने ही रहते थे। चद्रावती के आसपास का प्रदेश भी बहुत उपजाऊ था इसलिए उसके नजदीक चारो ओर अनेक ग्राम बसे हुए थे। जहा के निवासी कृषि और गो-पालन करते थे। ग्रामों के साथ चन्द्रावती नगरी का वैसा ही अच्छा सम्बध था जैसा सम्बंध नगर और ग्राम का होना चाहिये तथा जिस सम्बध के होने पर दोनो जगह के निवासियों का जीवन सुख-पूर्वक बीत सकता है। चंद्रावती के नागरिक ग्रामों के प्रति अपने-अपने उत्तरदायित्व को भलीभाँति समझते थे। वे जानते थे कि हमारा जीवन ग्रामो के आधार पर ही है। इससे वे ग्रामोन्नति मे सदैव तत्पर रहते थे। इस कारण नागरिकों और ग्रामीणो दोनों ही

का जीवन सुखपूर्वक वीतता था। नगरी के लोग समृद्धिवान, वलवान, निरोगी, रूपवान, विचारशील और धार्मिक होने से बहुत सुखी और शान्त थे।

इसी रमणीय चन्द्रावती नगरी का स्वामी क्षत्रियवंशी महाराजा वीरधवल था। वीरधवल राजाओ के योग्य गुणो से विभूषित था। वह प्रजाप्रिय नरेश था। प्रजा धीरधवल के शासन से सुरक्षित थी और सब तरह समृद्ध एवं राजभक्त थी। सबलोग प्रसन्नता पूर्वक वीरधवल की कुशल मनाया करते थे। वीरधवल भी प्रजाहित के कार्यो मे सदा दत्तचित्त रहता था। प्रजा अपनी रक्षा के लिए वीरधवल का होना आवश्यक समझती थी।

राजा वीरधवल के चंपकमाला तथा कनकवती नाम की दो रानिया थी। महारानी चंपकमाला अति सुन्दर रूप लावण्य के उपरांत शीलादि अलंकारों से सुशोभित थी। यही कारण था कि सारे राज्यकुटुम्ब पर उसने अपना महारानी पद का अद्वितीय प्रभाव जमा रखा था। इसीलिए म० वीरधवल ने उसे पट–

रानी की पदवी से विभूषित किया था। कनकवती भी रूप लावण्य में कुछ कम नहीं थी। इसलिए वह भी महाराजा वीरधवल की प्रिय पत्नी थी। वीरधवल की आयु करीब ५० वर्ष की हो चुकी थी फिर भी ससारवृक्ष के फलस्वरूप पुत्र या पुत्री कोई भी सन्तान की प्राप्ति नही हुई थी।

एक दिन महाराजा वीरधवल अपने राजप्रासाद के ऊपरी दालान में बैठे हुए थे। सन्ध्या का सुहावना समय था। वासरमणि सूर्य भगवान अपनी सुदूरवर्त्ति किरणों को समेट कर अपने निवासस्थान की ओर प्रस्थान कर रहे थे। दिनभर अथक परिश्रम करने वाली मनुष्यजाति भी अपने-अपने घर पर आ कर विश्रान्ति में मग्न थी। पक्षीगण अपने-अपने घोसलो में जाकर शान्ति में लीन हो रहे थे। सृष्टिदेवी पर निस्तब्धता छाई हुई थी। आकाशमण्डल धुँधले रग में प्रकाशहीन होकर अतीव शोभायमान दीख रहाथा। राज्यमहल में भव्य द्वार पर प्रतिहारी रात्रि का आ-गमन होने के कारण सावधान हो सरक्षण की भावना

से पहरा दे रहे थे। विशाल राजमहल के गगनचुम्बी शिखरों पर धीरे-धीरे अन्धकार का साम्राज्य फैलता जा रहा था। राज्यप्रासाद के समस्त कर्मचारी अपने अपने नियत कार्य पर लगे हुए थे। सृष्टिदेवी शान्त, स्निग्ध हृदय से निद्रा की आराधना कर रही थी।

जिसने असख्य आशाओं को, अपरिमित लालसाओं की पूर्ति का समय अपनी आँखों से देख लिया है, जिसने राज्यऐश्वर्य दुष्प्राप्य सुख भोग लिया है। ऐसे महाराजा वीरधवल सभाविसर्जन कर रात्रि के प्रथम समय मे राजमहल के एक ऊपरी भाग मे बैठे थे। सारी प्रजा उनके राजनियन्त्रण की दयामय स्थिति से सन्तुष्ट थी। महाराजा वीरधवल जहाॅ पर बैठे हुए थे वहाॅ से नगरी का मनोरम दृश्य दीख रहा था।

ऐसे सुहावने समय में नीचे के द्वार पर किसी की आहट आई। समुद्र की लहरे शान्त हो जाने पर भी जैसे समुद्र शान्त दीखता है उसी तरह राजमहल भी गम्भीर शान्तता में विलीन था। राज्यमहल के महा-द्वार पर प्रतिहारियो के पास एक नवयुवक आ कर

खड़ा हुआ। युवक गठीले शरीर का आरोग्य सम्पन्न था। उसके चेहरे पर उत्साह और नवचैतन्य की उमगे नाच रही थी। उसकी बड़ी-बड़ी आँखो मे नवतेजो-मय उत्साह झलक रहा था। उसके विस्तीर्ण ललाट पर पसीने के बिन्दु चमकते थे और आँखो में वीरता का उज्ज्वल पानी झलक रहा था। युवक ने प्रतिहारी को अत्यन्त विनीत भाव से प्रणाम किया और धीमे स्वर में कहा—"मै महाराजा की मुलाकात के लिए आया हूँ।" बस! इतना ही कह कर वह युवक चुप हो गया।

"नही, इस समय आप राज्यमहल में नही जा सकेंगे।" द्वारपाल ने युवक के चेहरे को निहार कर उत्तर दिया। आपसे महाराजा का इस समय मिलना असम्भव है। आप फिर कभी...... " द्वारपाल की बात काट कर युवक ने अदम्य उत्साह से विनम्रभाव से फिर कहा—नही मुझे इसी वक्त महाराज से मिलने की आवश्यकता है। आपसे कहने तक का भी समय नही, मुझे जल्दी ही जाने दो। आप किसी तरह की

शका न रखे। महाराज मुझे देखते ही नाराज होने के बदले प्रसन्न ही होगे।

महाराज वीरधवल शान्त चित्त से दीपको के प्रकाश में राजनगर का सौदर्य निरीक्षण कर रहे थे अस्तगामी सूर्य की अस्पष्ट लालिमा भी अब अदृश्य हो चुकी थी। चारो तरफ अन्धकार ने अपना अधिकार जमा लिया था महाराज की नजर महाद्वार पर गई। द्वार पर खड़े युवक को देखते ही वे प्रसन्न हो गये। महाराजा ने गम्भीर आवाजा से पुकारा— 'द्वारपाल!"

महाराजा की पुकार सुनते हो हाथ जोड प्रणाम करके द्वारपाल ने कहा—'आज्ञा सरकार!' उन्हे मेरे पास भेज दो। महाराज वीरधवल का यह वाक्य पूरा भी न हो पाया था कि महाद्वार खोला गया और अपने पीछे-पीछे उस युवक को लेकर वह प्रतिहारी राजा के समीप आया फिर तीन वक्त प्रणाम करके द्वारपाल वहां से वाहर निकल गया। महाराज ने उस युवक को देख कर विचार किया कि इस समय

संध्या को मेरे पास आने वाले मनुष्य को अवश्य ही कोई महान् प्रयोजन होगा। राजा को चाहिये कि हर एक प्रजाजन के दुःख को हर समय सुनने के लिए तत्पर रहे और चाहे जिस प्रयत्न से प्रजा को दुःख से मुक्त करना चाहिये। बहुत-से अधिकारी प्रजा के दुख की उपेक्षा करते हैं, निर्धारित समय के सिवा प्रजा-जनों की फरियाद नही सुनते इससे प्रजा को बहुत कष्ट उठाना पड़ता है। इस प्रकार प्रजा की पुकार पर उपेक्षा करने वाला अधिकारी या राजा वास्तव में उस पद के योग्य ही नही होता। मुझे अपनी प्रजा की फरियाद हर वक्त सुननी चाहिये और यथाशक्य प्रयत्नों द्वारा उसे सुखी करना चाहिये। राजा प्रजा के सुख से सुखी और दु:ख से दुःखी होता है। प्रजा के सुख पर ही राजा के राज्यऐश्वर्य का आधार है यह बात हमें हर वक्त याद रखना चाहिये। प्रजा की यातनाभरी आह राजा को निर्वंश और भिखारी बना देती है। इत्यादि विचारो में मग्न होते हुए महाराजा के सन्मुख आगन्तुक युवक उपस्थित हुआ। उसने

महाराजा के सन्मुख उपहार रख कर विनीत भाव से नतमस्तक चरणों मे नमस्कार किया।

कुछ समयतक महाराजा के साथ वातचीत करके उस युवक के जाने के वाद महाराज वीरधवल के चेहरे पर उदासीन भाव ने अपना प्रभाव डाला। मुख पर चमकता हुआ राजतेज निस्तेज-सा हो गया, उन के दिल में चिन्ता ने स्थान जमा लिया और मुख से उष्ण तथा दीर्घ निश्वास निकलने लगा। अर्थात् महाराज किसी गूढ़ चिन्ता के कारण शोकसमुद्र में निमग्न हो गये। ठीक उसी समय महारानी चम्पकमाला और द्वितीय रानी कनकवती महाराजा के पास आ पहुंची। दोनो रानियों के वहां आ जाने पर भी ध्यानमग्न योगी के समान चिन्ता में एकाग्र हुए महाराजा वीरधवल ने उनकी तरफ आँख उठा कर देखा तक भी नही। अपने प्रिय पति की ओर से हमेशा की तरह आज कुछभी आदरमान न मिलने के कारण दोनो रानियाँ घबरा-सी गई। वे व्यग्र-चित्त से विचारने लगी कि आज महाहाज को हम पर सदा के

समान कृपादृष्टि न होने का क्या कारण है ? क्या अज्ञानता मे हमसे पतिदेव का कोई अपराध हुआ है? जो महाराज हमारी तरफ आज देखते भी नही । इस प्रकार के सकल्पविकल्प के उलझन मे पड़ी हुई वल्लभाएँ महाराजा के नजदीक आईं और द्रवित हृदय से नम्र वचन द्वारा पतिदेव से प्रार्थना करने लगी—नाथ ! क्या आज हम दासियो से अज्ञानता में आपका कोई अपराध हुआ है ? आप इतने उदास क्यो हैं ? थोडी देर पहले तो आप दिवानखाने के झरोखे मे आनन्द से फिर रहे थे, और चद्रावती नगरी की शोभा देख रहे थे । इतने थोडे ही समय में आप इतने उदास क्यों हैं ? अगर यह बात इन अपनी सहचारिणियो को मालूम करने लायक हो तो कृपा कर हमे भी अपने दु ख में शामिल करें ।

अपनी प्रिय वल्लभाओ के शब्द कान मे पड़ते ही महाराजा की विचारशृङ्खला भङ्ग हुई और, और वे प्रेमगर्भित शब्दों मे बोले—प्रिय वल्लभाओ ! आज मैं एक ऐसी चिन्ता मे निमग्न हो गया हूं कि तुम्हारा

शका न रखे। महाराज मुझे देखते ही नाराज होने के बदले प्रसन्न ही होगे।

महाराज वीरधवल शान्त चित्त से दीपकों के प्रकाश में राजनगर का सौंदर्य निरीक्षण कर रहे थे अस्तगामी सूर्य की अस्पष्ट लालिमा भी अब अदृश्य हो चुकी थी। चारों तरफ अन्धकार ने अपना अधिकार जमा लिया था · महाराज की नजर महाद्वार पर गई। द्वार पर खड़े युवक को देखते ही वे प्रसन्न हो गये। महाराजा ने गम्भीर आवाज से पुकारा—'द्वारपाल !"

महाराज की पुकार सुनते हो हाथ जोड प्रणाम करके द्वारपाल ने कहा—'आज्ञा सरकार!' उन्हे मेरे पास भेज दो। महाराज वीरधवल का यह वाक्य पूरा भी न हो पाया था कि महाद्वार खोला गया और अपने पीछे-पीछे उस युवक को लेकर वह प्रतिहारी राजा के समीप आया फिर तीन वक्त प्रणाम करके द्वारपाल वहा से वाहर निकल गया। महाराज ने उस युवक को देख कर विचार किया कि इस समय

संध्या को मेरे पास आने वाले मनुष्य को अवश्य ही कोई महान् प्रयोजन होगा। राजा को चाहिये कि हर एक प्रजाजन के दु.ख को हर समय सुनने के लिए तत्पर रहे और चाहे जिस प्रयत्न से प्रजा को दु ख से मुक्त करना चाहिये। बहुत-से अधिकारी प्रजा के दुख की उपेक्षा करते है, निर्धारित समय के सिवा प्रजा-जनों की फरियाद नही सुनते इससे प्रजा को बहुत कष्ट उठाना पड़ता है। इस प्रकार प्रजा की पुकार पर उपेक्षा करने वाला अधिकारी या राजा वास्तव में उस पद के योग्य ही नही होता। मुझे अपनी प्रजा की फरियाद हर वक्त सुननी चाहिये और यथाशक्य प्रयत्नो द्वारा उसे सुखी करना चाहिये। राजा प्रजा के सुख से सुखी और दुःख से दुःखी होता है। प्रजा के सुख पर ही राजा के राज्यऐश्वर्य का आधार है यह बात हमें हर वक्त याद रखना चाहिये। प्रजा की यातनाभरी आह राजा को निर्वंश और भिखारी बना देती है। इत्यादि विचारो मे मग्न होते हुए महाराजा के सन्मुख आगन्तुक युवक उपस्थित हुआ। उसने

आगमन भी मुझे मालूम न हुआ। परंतु इस चिन्ता का कारण दूसरा ही है और तुम्हे भी इसमे हिस्सा लेना होगा। अपने ही शहर मे रहने वाले एक वणिक पुत्र गुणवर्मा ने अभी मेरे पास आकर अपने घर का जो इतिहास सुनाया है वही मेरी चिन्ता का कारण है। इतना कह कर महाराजा वीरधवल फिर शान्त हो गये।

महारानी चम्पकमाला हाथ जोड़ कर नम्रता से बोली—महाराज ! आपकी चिन्ता का कारण हम सहचारिणियो को अवश्य सुनाना चाहिये। हम आप के ही सुख से सुखी और दुःख से दुःखी होने वाली हैं। आपके कथनानुसार इस चिन्ता में हम खुशी से हिस्सा लेगी।

प्रिया का अत्याग्रह देखकर महाराज वीरधवल अपनी उदासीनता का कारणरूप गुणवर्मा द्वारा कहा हुआ सारा वृतान्त सुनाने लगे।

(३)

चिन्ता का कारण

प्रिय वल्लभाओ ! हमारी इस चन्द्रावतीनगरी में लोभाकर और लोभानन्दी नामक दो वणिक रहते है। वे अपने नामानुसार ही गुणनिष्पन्न हैं। सहोदर होने के कारण उन दोनो भाइयो में परस्पर प्रेमभाव भी है। वे लोहे आदि का व्यापार करके धनोपार्जन कर सुख से दिन व्यतीत करते है। समयक्रम से लोभाकर को गुणवर्मा नामक पुत्र हुआ। परन्तु अनेक स्त्रियो के साथ पाणिग्रहण करने पर भी लोभानन्दी को कुछ भी सन्तान न हुई। सचमुच पुत्र पुत्री आदि सन्तति रूप फल भी पूर्वोपार्जित शुभाशुभ कर्म बीजानुसार ही मिल सकता है।

एक दिन वे दोनो भाई दूकान पर वैठे थे। उस समय एक सुन्दर आकृति वाला अपरिचित युवकपुरुप वहाँ आया। सांसारिक व्यवहार मे एवं अधिकतया वणिककला में प्रवीण इन वणिकों ने उसकी आकृति पर से उसे धनवान समझ कर आसनादि देकर उसकी अच्छी भक्ति की। कितनेक दिन वाद उन वणिकों की बनावटी प्रीति और भक्ति पर विश्वास प्राप्त करने वाले उस जवान पुरुष ने अपने पास रहा हुआ एक तुम्बा कुछ दिन के लिए धरोहर के तौर पर उन्हे सौप दिया और खुद किसी एक गांव को चला गया। उन्होने उस तूँबे को दूकान मे किसी एक खूँटी पर लटका दिया। आताप की गर्मी से पिघले हुए रस के विन्दु उस तूँबे से झर कर नीचे पड़ी हुई लोहे की एक कुदाल पर पड़े। वह लोहभेदक रस होने के कारण कुदाल उस रस के स्पर्श मात्र से सुवर्णमय वन गई। यह देख कर उन बनियो ने अच्छी तरह समझ लिया कि इस तूँबे मे सिद्धरस है। इस कारण उन लोभान्ध वणिको ने रस सहित उस तूँबे को

किसी गुप्त स्थान मे छिपा दिया।

कितनेक दिनो वाद वह युवक वापस चन्द्रावती में आया और माने हुए प्रामाणिक उन वणिकोसे अपना तुम्वा वापिस मागा। उन दम्भी व्यापारियो ने जवाब दिया कि आपका तूँवा चूहो ने डोरी काट देने के कारण नीचे गिर कर फूट गया और उसमें रहा हुआ रस तमाम जमीन पर बह गया ! इस प्रकार जवाब दे कर किसी अन्य तूँवे के टुकड़े ला कर उसे दिखा दिये। टुकड़े देखते ही उस युवक ने समझ लिया कि मेरे तूँबे में रहे हुए लोहभेदक रस को इन्होने किसी न किसी प्रकार जान लिया है। इसी कारण ये मेरे तुम्बे को छिपाते है। युवकपुरुष बोला—सेठ ! मेरा तूँबा मुझे वापस दे दो, ये टुकड़े मेरे तूँबे के नही हैं। कपट से आप मुझे झूठी बात मत कहो। आप न्यायवान् है, मैने आपको प्रामाणिक और विश्वासपात्र समझ कर ही आपके पास रक्षण के लिए तूँबा रखा है। यदि आप मेरे साथ विश्वासघात करेंगे तो आप के लिए भी महान् अनर्थ होगा। मैं किसी तरह भी

विश्वासघात का बदला लिए विना न रहूंगा। इत्यादि अनेक प्रकार से उन दोनों व्यापारियों को समझाया, परतु लोभ के वशीभूतहो उन वणिकों ने उसके कथन की बिल्कुल पर्वाह नही की। युवक ने सोचा कि यदि यह बात मै राजा से जाकर कहूँ तो यह ऐसी वस्तु है कि इसे राजा खुद ले लेगा। क्यो कि लक्ष्मी को देख कर किसका मन नही ललचाता ? दूसरी तरफ ये लोभान्ध व्यापारी भी मुझे सरलता से मेरा रस का तुम्बा वापिस दे यह भी असम्भव है। मुझे अभी बहुत दूर जाना है। अत· समय खोना भी ठीक नहीं है। मुझे अब अन्तिम उपाय का ही आश्रय लेना है। 'शठ प्रति शाठ्य कूर्यात्' शठ के साथ शठता करना, धूर्तों के साथ धूर्त बनना और सरल मनुष्यो के साथ सरलता का व्यवहार करना योग्य है।' इस प्रकार विचार कर उसके पास जो स्तम्भनकारी विद्या थी उस विद्या के प्रभाव से उस युवक ने दोनो भाइयों को स्तम्भित कर दिया और कहा—अपने किये का फल पाओ।' यह कह कर वहाँ से अन्यत्र चला गया।

उस विद्या के प्रभाव से वे दोनों भाई ऐसे स्तम्भित हो गये कि उनके अङ्गोपाङ्ग भी हिल-डुल नही सकते। परन्तु स्तम्भ की भाँति स्थिर हो वे दोनो खड़े के खड़े ही रह गये। थोड़े ही समय में उन दोनो की सन्धिया टूटने लगी। इस पीड़ा के कारण वे जोर जोर से चिल्लाने लगे। मूर्ख लोग किसी भी कामको करते समय जरा भी सोच विचार नही करते, पामर जीवो का यही लक्षण है।

इस ससार में अज्ञानी जीव कर्म करते समय आगामी परिणाम का कतई खयाल नही करते, वे वर्तमानकाल को ही देखते हैं। परन्तु वर्तमान में किये हुए पाप कर्मों का जब कडुआ फल भोगना पडता है तब उससे छुटकारा पाने की वे अनेक विध कोशिस करते है और छुटकारा न पाने से दयाजनक आर्तस्वर से रुदन करते है। प्राणी जिस परिणाम से कर्म बाँधता है उसका विपाकोदय आने पर वैसा ही मन्द या तीव्र फल अवश्य भोगना पड़ता है। इसीलिए दु ख से उकताने वाले मनुष्यो को अथवा दु·ख को पसन्द नही

करने वाले मनुष्यो को कर्म करते समय ही सावधान रहना चाहिये जिससे कि उन्हे कड़वा फल भोगने का समय ही न आवे ।

विश्वासघात महापाप है और विश्वासघात करने वाले अधोगति मे जाकर भयङ्कर कष्ट भोगते है । इन वणिको को अपने किये हुए विश्वासघात-पाप करने का इस वक्त पश्चात्ताप हुआ । परन्तु समय बीते बाद कर्म का परिणाम उदय होने पर पश्चात्ताप करना व्यर्थ होता है । इस समय युवकपुरुष निस्पृह मनुष्य के समान अपनी धरोहर की आशा छोड़ कर बहुत दूर निकल गया । यह बात शहर के बड़े-बड़े हिस्सों में फैल गई । जगह-जगह इस बात की चर्चा होने लगी और नगर के विचारशील मनुष्य उन दोनों भाइयों को फटकारने लगे । बहुत-से मनुष्य यह समझ कर कि उग्र कर्म का फल इसी भव में भोगना पड़ता है; इसलिए ऐसे घोर अकृत्यों का परित्याग करने लगे ।

इस समय लोभाकर का पुत्र गुणवर्मा किसी कार्य के लिए कितने ही दिन से शहर के बाहर किसी गाँव

को गया हुआ था । किसी मनुष्य के द्वारा इस बात को सुन कर वह शीघ्र ही घर आया । अपने पिता और चाचा की ऐसी अधम दशा देख कर उसे बडा दुःख हुआ । गुणवर्मा उदार-दिल, निर्लोभी और बिचारशील युवक था । लोगों में होने वाली इस कृति की निन्दा उससे सहन न हो सकी । दूसरी तरफ अपने पूज्यवरों को निरन्तर दुःखी हालत में देखना भी उसे उचित न लगा । उसने तुरन्त ही अनेक मन्त्रवादियों को बुलवाये और अपने पूज्यवरों का दुःख दूर करने के लिए खूब द्रव्य व्यय करना शुरू किया । अनेक तरह के उपाय किये-गये, अनेक मान्त्रिक तान्त्रिको ने अपने प्रयोग किये पर अपनेआप से किये हुए कर्म का कटु-फल भोगे बिना किस तरह मुक्ति हो सकती थी ? पानी पर किये गये प्रहार की भाँति उन लोगो द्वारा किये गये अनेक उपाय सब निष्फल गये । इतना ही नही किन्तु धीरे-धीरे उनका कष्ट और भी बढता ही गया । गुणवर्मा निराश हो गया । उसे कोई उपाय सफल होता मालूम न दिया ।

(४)

विदेशी युवक की खोज

धनधान्य से परिपूर्ण और मनुष्यो से शून्य एक शहर के दरवाजे पर खड़ा हुआ एक युवक पुरुप विचार कर रहा है—"मैं अब कहाँ जाऊँ ? उस अनजान पुरुष की खोज किस तरह करूँ ? मै खुद तो उसे पहचानता ही नही। उसे पहचानने वाला साथ में आया हुआ मनुष्य भी बीमार होने के कारण वापस चला गया। मैं तो उसका नाम-धाम या आकृति वगैरह कुछ भी नहीं जानता। अब तो अनेक शहर गॉव आश्रम आदि फिर-फिर कर थक गया हूँ परन्तु खोये हुए धन के समान उस मनुष्य का कुछ भी पता न लगा। अगर वह कही नजदीक ही हो और मुझे मिल भी जाय तो पहले देखे बिना मै कैसे पहिचान पाऊँगा ?" इत्यादि विचारो और रास्ते के परिश्रम

से खिन्न हुआ वह युवक विश्रान्ति के लिए इस शून्य शहर मे प्रवेश करता है। आगे चलने पर उसे अपने सन्मुख आता हुआ एक सुन्दर पुरुष दिखाई दिया।

उस पुरुष को शहर में प्रवेश करने वाले उस थके हुए पुरुष को देख कर शहर से आता हुआ पुरुष बोल उठा—हे वीर पुरुष आप कौन है ? कहाँ से आयेहै ? यह सुन कर शहर मे प्रवेश करने वाले युवक ने उत्तर दिया, 'भाई ! मैं एक पथिक हूं। देशाटन करते हुए रास्ते के परिश्रम से थक कर विश्रान्ति के लिए इस शहर में प्रवेश कर रहा हूं।'

'आप स्वय कौन हैं ? इस शहर में आप अकेले ही क्यो दिखाई देते है ? यह शहर ऋद्धि सिद्धि से पूर्ण होने पर भी मनुष्यो से शून्य क्यो नजर आ रहा है तथा इस नगर का नाम क्या है ?'

पथिक के ऐसे विनयभरे वचन सुन कर खुश हो कर पुरुष कहने लगा 'हे भद्र ! यह कुशवर्धन नामक शहर है। वीरपुरुषो मे अग्रसर शूर नामक राजा यहाँ राज्य करता था। उसके विजयचन्द्र और जयचन्द्र

नाम के हम दो पुत्र थे। आयुष्य पूर्ण होने पर मेरे पूज्य पिताश्री इस तूफानी दुनिया को त्याग कर स्वर्ग सिधाये। सचमुच ही संसार में तमाम वस्तु नाशवान् है। देहधारी जीवो का चाहे कितना ही लम्बा आयु हो तथापि उसका अन्त अवश्य होता है। मेरे पिता की मृत्यु के बाद मेरा बड़ा भाई जयचन्द्र राज्यासन पर आरूढ हुआ। उसने मुझे राज्य का हिस्सा नही दिया, इसे मैं अपना अपमान समझ कर यह राजधानी छोड़कर अन्यत्र चला गया। चन्द्रावती नगरी पहुंचा वहाँ जाकर उस नगरी के बाहर उद्यान में एक विद्या सिद्ध पुरुष को मैंने देखा, परन्तु सिद्धपुरुष अतिसार रोग से ऐसा दुःख भोग रहा था कि जिससे वह न चल ही सकता था न बोल ही पा रहा था। उसकी ऐसी दयनीय दशा देख कर मेरे हृदय में दया का सचार हुआ। दुःखी मनुष्यो को देख कर जिसके दिल मे निःस्वार्थ दया का सञ्चार नही होता वह मनुष्य, मनुष्य कहलाने के योग्य भी नही रहता। मनुष्य जब खुद दुःखी होता है तब वह दुःख से मुक्त होने के लिए

दूसरों की सहायता चाहता है। ऐसी दुःखी अवस्था में यदि उसको थोड़ी-सी सहायता मिल जाय तो वह बहुत सुखी होता है। इस तरह का स्वयं अनुभव होने पर भी यदि वह मनुष्य दुःखी अवस्था में पडे हुए किसी मनुष्यको सहायता न दे तो उस विचारशून्य मनुष्य को सचमुच ही नरपशु समझना चाहिये। ऐसे मनुष्य पृथ्वी पर भारभूत होते हैं।

जहाँ पर अपने और स्वार्थपन की वृत्तियां होती है वहां पर परमार्थवृत्तियां और धार्मिक भावनाएँ टिक नही सकती। ज्ञानी पुरुष पुकार कर कहते है कि अगर तुम्हे सुखी होना है तो दूसरो को निःस्वार्थ बुद्धि से सुख पहुँचाओ। जहाँ पर स्वार्थसिद्धि होनेकी आशा होती है वहां सहाय करने वाले अधम मनुष्यों की दुनियां में कमी नहीं है। परन्तु अपने स्वार्थ की आशा न रख कर बल्कि जिससे जानपहचान तक भी न हो ऐसे दुःखी मनुष्यों को सहायता देकर सुखी करने वाले वीर पुरुष इस संसार में विरले ही होते है।

किसी भी वस्तु की इच्छा न रख कर हृदय मे

सञ्चारित दया की प्रेरणा से मैंने उस सिद्ध पुरुष की ऐसी सेवासुश्रुषा और उपचार और सहायता की कि वह थोड़े ही दिनों मे सर्वथा निरोगी हो गया। आरोग्य प्राप्त करके उस सिद्ध पुरुष ने मेरा नाम-ठाम पूछा। संक्षेप मे मैंने आप-बीती सब घटना कह सुनाई।

प्रसन्न हो कर उस सिद्ध पुरुष ने मुझे पाठसिद्ध बोलने मात्र से अपने गुण को प्रकट करने वाली एक स्तम्भन और दूसरी वश करने वाली वशीकरण दो विद्याएं दी। इसके अतिरिक्त एक रस से भरा हुआ तूंबा देकर उसने कहा—'भद्र ! इस तूंबे का तुम अच्छी तरह रक्षण करना। यह रस मैंने बड़े कष्ट से प्राप्त किया है। यह लोहभेदक है जिसके एक बिंदु के स्पर्श मात्र से लोहे का सोना बन जाता है।

मेरी दुःखी अवस्था मे तूने बड़ी सहाय की है। तू मुझे बिल्कुल नही पहचानता एवं मेरी तरफ से तुम्हे किसी तरह की आशा भी न थी।' क्यों कि धनवान के समान मेरे पास ऐसा कोई भी आडम्बर नही

था, इसलिए तूने नि स्वार्थ बुद्धि से मेरी सेवा की है; इसीसे तेरी उत्तमता और सत्कुलीनता का पता लगता है। मै जो प्रत्युपकार में ये दो विद्याएँ और एक सुवर्ण सिद्धरस का तूंबा दे रहा हू, इनके द्वारा तू राज्यसम्पदा प्राप्त कर सकेगा। परमात्मा तेरे श्रेष्ठ कर्त्तव्यो का तुझे बदला दे और तेरे मनोरथो को सिद्ध करे। इत्यादि शिक्षा और आशीर्वाद देकर वह सिद्ध पुरुष गिरनार पहाड़ की ओर चला गया।

सिद्ध पुरुष ने अपने ऊपर उपकार करने वाले मनुष्य पर अपनी शक्ति के अनुसार प्रत्युपकार किया। किये हुए उपकारो को भूल जाने वाले, शक्ति होने पर भी और अवसर मिलने पर भी प्रत्युपकार न करने वाले मनुष्य धिक्कार के पात्र है। इस प्रकार के कृतघ्न मनुष्य किये हुए उपकार को भले ही भूल जायँ बदला न दे तथापि परिणाम की विशुद्धि पूर्वक नि स्वार्थ-बुद्धि से किया हुआ परोपकार उसे अपने मीठे फल अवश्य चखाता है।

सिद्ध पुरुष की शिक्षा और आशीर्वाद को स्वी-

का.र कर मैं चन्द्रावती नगरी में गया। वहाँ घूमते हुए मैं लोभाकर और लोभानन्दी नामक व्यापारियो की दूकान पर पहुँचा। व्यापार निपुण एव कपट-प्रपञ्च में भी निपुण उन बनियों ने मेरा बहुत ही आदर सत्कार किया, उनकी दिखलाई हुई शिष्टता के कारण मै प्रसन्न होकर उनके आधीन हो गया। अतः विश्वास पाकर उस रस के तूँबे को सुरक्षित रखने के लिए उन्हे सौप कर मैं कुछ दिन के लिए आगे दूसरे गाँव चला गया।

कितनेक दिन लक्ष्मीपुर में रह कर माता से मिलने की उत्कट अभिलाषा से मै स्वदेश जाने को पीछे लौटा। रास्ते में चन्द्रावती मे रस का तूँबा लेने को उस सेठ की दूकान पर गया; परतु न जाने किसतरह मेरे तूँवे में रहे हुए लोहभेदक रस का लोभाकर सेठ को पता लग जाने से उसने उसे छिपा दिया। और मुझे असत्य उत्तर दिया। वहुत-कुछ समझाने-बुझाने पर भी उन लोभान्ध व्यापारियों ने मेरा रसका तूँवा मुझे वापस न दिया। तव अन्त में कर्त्तव्य के अनु-

सार उन्हे शिक्षा देकर मै वहां से अपने देश की तरफ चल दिया। जब मै वहा से देश-विदेश फिरता हुआ यहाँ आया तब धनधान्य परिपूर्ण और प्रजा से शून्य अपने पिता की राजधानी को इस हालत में पाया कि जैसा तुम खुद इस वक्त देख रहे हो।



(५)

कुशवर्धनपुर का उजाड़ होना

पाठकों को याद होगा कि अपने पिता और चाचा को बन्धनमुक्त कराने के लिए गुणवर्मा के किये हुए सभी उपाय निष्फल गये। उस वक्त वह निराश होकर महान् चिन्ता में पड़ा था। अन्त में विचार करने से उसने यह निर्णय किया कि जिसके द्वारा यह दु:खाग्नि प्रकट हुई है उसीसे शान्त भी होगी। अब उसीकी शरण लिए बिना किसी तरह छुटकारा नही होगा।

यह निश्चय कर वह उस मनुष्य को पहचानने वाले अपने एक नौकर को साथ ले कर उस युवक की खोज मे चन्द्रावती से निकल पड़ा था। उस सहायक को बीमार होने से रास्ते में ही छोड़ कर गुणवर्मा

स्वयं ही थका आज इस शून्य नगर में आ पहुचा है, और अपने पूज्यवरो के दु ख से दुःखित होकर वह जिस मनुष्य की तलाश में फिरता था; अनायास ही आज वही इस शून्यनगर मे प्रवेश करते हुए आ मिला है। पाठक यह भी समझ गये होगे कि शून्यनगर में गुणवर्मा को मिलने वाला युवक कुशवर्धनपुर के राजा शूरचन्द्र का पुत्र विजयचन्द्र नामक कुमार है।

मेरे पिता और चाचा को स्तम्भन करने वाला और जिसे ढूँढने के लिए मैं वन, उपवन, ग्राम-ग्राम और नगर-नगर भटकता फिरता हूँ वह महाशय यह स्वय ही है। यह जान कर गुणवर्मा को हिम्मत बँधी जब तक विजयचन्द्र के सम्पूर्ण इतिहास से मैं वाकिफ न हो जाऊँ तब तक अपना उद्देश्य इसके सामने प्रकट करना सर्वथा उचित नही। यह सोच कर गुणवर्मा ने विजयचन्द्र से कहा—"भाई! पूरा वृत्तान्त सुनाओ इस नगर के शून्य होने का क्या कारण है?

विजयचन्द्र बोला—इस नगर को शून्य देख कर मुझे बडा दुःख हुआ! देव-ऋद्धि समान शहर को

आज स्मशान के समान देख कर मैं सहसा स्तब्ध रह गया। अनेक प्रकार के सकल्प–विकल्प उठे: परन्तु मन का समाधान न हुआ। अन्त में उत्साह और हिम्मत का सहारा ले कर मैंने अपने नगर के उजड़ होने के कारण को जानने का निर्णय किया। मै नगर के चारो तरफ फिरने लगा। तथापि मुझे अपने अति-रिक्त दूसरा कोई मनुष्य नजर नही आया। फिर मैंने राजमहल मे प्रवेश किया। वहाँ मेरे बडे भाई जयचंद्र की विजया नामक पत्नी मुझे अकेली नजर आई। मुझे देखते ही वह गद्‌गद् हो उठी और दौड़ी हुई मेरे सन्मुख चली आई। मुझे बैठने के लिए आसन दे कर वह अश्रुपूर्ण नेत्रो से रोने लगी। मैंने उसे धीरज दे कर नगर के उजाड़ होने का कारण पूछा!

विजया ने कहा—'कुछ दिन पहले लाल वस्त्र पहने हुए और एक-एक मास का उपवास करने वाला एक तपस्वी यहाँ पर आया था। उसके तप के कारण नगर-निवासियो की उस पर खूब भक्ति हो गई। आपके बड़े भाई ने एक दिन महीने के उपवास का

पारणा करने के लिए उसे निमन्त्रण दिया। वह भी राज-निमन्त्रण को स्वीकार कर महल मे भोजन करने के लिए आया। उसके पारणे की सर्व सामग्री तैयार कर उसको जीमने को बैठाया गया और महाराज की आज्ञा से भोजन करते समय मै पङ्खा झलने लगी। नवयौवन, सुन्दर रूप और शृङ्गारित मेरे शरीर को देख कर उस पाखण्डी तपस्वी का मन विचलित हो गया।

सचमुच ही तपस्वियों का मन भी सुरूपा स्त्रियों को देख कर चलायमान हो जाता है, इसी कारण वीतरागदेव ने योगी पुरुषो को स्त्रियो के सम्पर्क में न रहने का विधान बतलाया है। यद्यपि यह बात एकान्त नही है कि योगी और तपस्वियों का मन विचलित हो ही जाय, तथापि तत्त्वज्ञान मे पूर्णतया प्रवेश न करने वाले, अज्ञान कष्ट करने में ही आत्म-कल्याण समझने वाले या उस मार्ग मे प्रथम ही आने वाले अज्ञानी पुरुषो के लिए ऐसा बनाव बनना सुलभ है। सत्ता मे रहे हुए कितनेक कर्मो का ऐसा स्वभाव

है कि निमित्त पा कर उदय में आ जायँ; उससमय आत्मज्ञान में प्रमादी और स्वरूप को भूले हुए अभ्यासी प्रबल कर्म के उदय को रोकने में असमर्थ हो, तन मन पर कावू न रख कर अकार्य में प्रवृत्त हो जाते है। इसीलिए आत्म-स्वरूप प्रकट करने वाले मनुष्यों को ऐसे निमित्तों से दूर ही रहना चाहिये।

वह तपस्वी भोजन करते समय अपनेआपको भूल गया। तपस्या से ग्लानि को प्राप्त हुए शरीर मे कामदेव ने प्रबल जोर किया जिससे उसका दुर्बल शरीर भी सवल मालूम होने लगा। उस वक्त तो वह भोजन करके चला गया। परन्तु रात्रि मे कामाध हो कर वह तपस्वी *गौधा के प्रयोग से मेरे महल मे आ-घुसा और मेरे निकट आकर विषयभोग की याचना करने लगा। जब मै ने उसका कहना मंजूर नही किया तब मुझे साम, दाम, दण्ड और भेद नीति से डरा कर अपनी कार्य सिद्धि के लिए प्रेरित करने

* चन्दनगोह नेवला जैसा जानवर होता है जिसको चोर अक्सर अपने पास रखा करते हैं।

लगा। यह तपस्वी है इसीलिए इसे जान से मरवाना ठीक नही, यह समझ कर मैंने भी उसे साम, दाम, दड भेद नीति द्वारा उसका मन स्थिर करने के लिए बहुत समझाया तथापि उसकी विषयान्धता का अनुराग जरा भी कम न हुआ। इस प्रकार हम दोनो मे झगडा चल रहा था इतने में ही शयन करने का समय हो जाने से आपके बडे भाई महाराज जयचन्द्र शयनगृह के द्वार पर आ पहुँचे और हम में होरहे विवाद को वही से छिप कर सुन लिया। तपस्वी का बोल सुनते ही वे तत्काल क्रोधातुर हो गये और सिपाहियो को बुला-कर उस तपस्वी को रस्सियों से कस कर बँधवा दिया।

प्रातःकाल होते ही उसके दुष्कर्मो की चर्चा सारे शहरवासियों में इस तरह पसर गई जैसे पानी में तेल का बिन्दु। उसके भक्तों मे भी उसके प्रति तिरस्कार की भावनाएँ प्रबल हो उठी और सब लोग उसकी निन्दा करने लगे। राजा ने उसे बुरी मौत से यमराज का महमान बना दिया।

मरते समय कुछ शुभ भाव के परिणाम से तथा कुछ अज्ञान तपस्या के पुण्यप्रभाव से वह तपस्वी मर कर राक्षसजाति के देवो में राक्षस रूप से पैदा हो गया। तपस्वी के भव में हुए अपने अपमान को याद करके राजा और प्रजा पर वैरभाव धारण कर वह यहाँ आया। और बोला—मैं वही तपस्वी हूं जिसे राजा ने मरवा दिया था। मै अपने वैर का बदला लूँगा। राजा और प्रजा को यो कह कर उसने आपके भाई को शीघ्र ही मार डाला और क्रम से प्रजा का संहार करने लगा। मृत्यु के भय से डर कर प्रजा अपनी जान बचाने के लिए जिधर भागा गया उधर को पलायन कर गई व बहुत-से मनुष्यो को इसने जान से मार डाला। बस इसी कारण समृद्धि से परिपूर्ण होने पर भी यह शहर जनशून्य हो गया है।

मैं भी मारे भय के भाग निकली थी परंतु उस समय मुझे इस राक्षस ने पकड़ लिया और मुझ से बोला कि भद्रे! तेरे लिए तो मैंने यह सब प्रयास ही किया है। अगर तू यहा से कही भी जायगी तो

मै फिर तुझे जहाँ होगी वहीं से ले आऊँगा। इसलिए तुझे इस राजमहल को छोड़ कर कहीं भी नही जाना चाहिये और तुझे किसी भी तरह का भय नही रखना चाहिये। मैं सब तरह से तेरी रक्षा करूँगा। इस प्रकार कह कर उस राक्षस ने मुझे यहा पर रखा हुआ है। वह दिन के समय न जाने कहाँ चला जाता है, परंतु दियाबत्ती के समय रात को वह यहाँ आ जाता है। इस तरह मेरे दु.ख के दिन व्यतीत हो रहे है।

हे पथिक ! यह इतिहास सुन कर मैंने विजया से कहा— भाभी ! जो तू इस राक्षस की कुछ भी मर्म की बात बतलावे तौ मै इसे निग्रह करने का उपाय करूं और तुझे इसके फन्दे से छुडा कर इस राक्षस से अपने भाई का बदला लूं।

विजया ने कहा—'जब यह राक्षस आ कर सो जाता है तब इसके पैर के तलिये घी से मर्दन किये जावें तो यह बहुत जल्दी अचेतन के समान देर तक महानिद्रा मे पड़ा रहता है। इस समय यदि आप कुछ कर सकते है तो अपनी शक्ति को आजमाना

चाहिये । इसके सिवाय इस राक्षस को निग्रह करने का अन्य कोई उपाय नही है। इसमें एक यह भी बात है कि स्त्री के हाथ से मसलने से उसे वैसी नीद नही आती जैसी कि पुरुष के हाथ से मर्दन करने से आती है। परन्तु चरण स्पर्श करने से पहले अगर उसे यह मालूम हो जाय कि यह पुरुष है तो वह पैर भी छूने नही देगा और जान से मार डालेगा।

इस प्रकार शहर के उजाड़ होने का कारण अपनी भाभी के मुख से सुन कर मैं किसी उत्तम, उत्तार साधक की खोज में फिरता था; इतने में ही अकस्मात् आपके ही मुझे दर्शन हुए है। उत्तम पुरुष! यदि तुम मेरे सहायक बनो तो मैं उस राक्षस से मेरी भाभी स्वाधीन करा कर उसे मेरे वश में कर सकता हूं। आप जैसे भद्र पुरुष स्वाभाविक ही परोपकारी होते हैं सज्जन पुरुष अपना काम छोड़ कर भी परकार्य करने को सदैव तत्पर रहते हैं। देखो, यह चन्द्रमा चाँदनी से अपने भीतर रहे हुए मृगलांछन को दूर न करते हुए भी सारे ससार को धवलित करता है। जगत के

वृक्ष, सूर्य का ताप सहन कर प्राणियों को छाया देते हैं। समुद्र नाव, जहाज आदि के क्षोभ को सहन करता है। मेघ परमार्थ ही वृष्टि करता है। पृथ्वी तमाम जीवो को आश्रय देती है। यह सब परोपकार के लिए ही कष्ट सहन करते हैं। नदिया अपने पानी को स्वयं आप नही पीती। वृक्ष अपने फल स्वयं नही खाते। वर्षा क्या धान्य भक्षण करती है। हे नरोत्तम मैं तुम्हारी सहायता से अपने ऊजड़ हुए शहर को फिर से पूर्व स्थिति में बसाना चाहता हूँ। इस कार्य में कारणभूत होने से तुम्हारी जग में कीर्ति और यश व्याप्त होगा। इसलिए मैं प्रार्थना करता हूँ कि आप मेरे इस महान् कार्य में प्राणप्रण से सहायक बनें।



(६)

प्रत्युपकार और समयसूचकता

रात्रिदेवी ने पृथ्वी पर अपनी काली चादर विछा दी है। अन्धकार ने चारों दिशाओ मे अपना साम्राज्य जमा लिया है। इस समय शून्यनगर मे मनुष्य तो क्या पक्षी तक का शब्द सुनाई नही देता। शहर के हिस्सों में सन्नाटा छाया हुआ है, ऐसे प्रशान्त समय में जयचन्द्र राजा के महल में दो युवक-पुरुष कुछ आवश्यक सामग्री लेकर एक गुप्त स्थान में खडे है। या तो कार्य सिद्ध करेंगे या शरीर का नाश होगा। बस यही भावना उन दोनो युवको के अन्तःकरण मे रम रही है।

पाठक महाशय भ्रान्ति में न पड़े, ये दोनों युवक वर्तमान परिच्छेद के नायक विजयचन्द्र और गुणवर्मा ही है। परोपकार करने मे तत्पर वणिकपुत्र गुणवर्मा

ने विचार किया कि मेरे किये हुए उपकार से वश हो कर विजयचन्द्र अपने क्रोध को शान्त कर मेरे पिता और चाचा को बन्धनमुक्त कर देगा। क्यों कि इसीने उन्हे स्तम्भित भी किया है।

अहा ! पुत्र का कैसा पितृवात्सल्य ! कैसी भक्ति और कैसा प्रेम ! पिता को दुःख से मुक्त करने के लिए ऐसे दुष्ट राक्षस के पन्जे मे फँसने का दुःसाध्य कार्य भी उसने स्वीकार कर लिया। क्यो कि इस समय राक्षस के घी से चरण-तलिये मर्दन करने का भयानक काम उसने अपने जिम्मे लिया है।

विजयचन्द्र ने कहा—गुणवर्मा ! जब तुम राक्षस के पांव तलुए घी से मर्दन करने का काम करोगे उस समय मैं स्तम्भनी विद्या के एक-हजार जप द्वारा १ अन्तर्मुहूर्त में राक्षस को स्तम्भित कर अपने आधीन कर लूँगा। इस प्रकार परस्पर संकेत कर वे दोनों युवक घोर अन्धकार में अपने उद्देश्य को सिद्ध करने की धुन से सावधान हो छिप कर खड़े है। ठीक इसी समय भयानक रूप में उस राक्षस ने महल मे प्रवेश

किया। वह आते ही बोलने लगा— अरे ! आज इस महल मे मनुष्य की गन्ध कहां से आ रही है ? विजया ! क्या महल मे कोई मनुष्य आया है ? तुझे मालूम हो तो बतला मै अभी उसको शिक्षा दूंगा।'

विजया ने कहा—'मैं खुद ही मनुष्य हूं आपके डर से यहाँ दूसरा मनुष्य कैसे आ सकता है ?' यह उत्तर सुन कर राक्षस को सन्तोष हुआ और एक पलग पर सो गया। उसे कुछ निद्रित होता देख विजया तत्काल वहां से उठ कर एक तरफ हो गई, उसके बदले गुणवर्मा स्त्री-वेश मे वहां आ गया और साहस करके धीरे-धीरे राक्षस के तलुए मर्दन करने लगा। इधर विजयचन्द्र ने भी सावधानीपूर्वक स्तम्भिनी एव वशीकरण विद्या का जाप प्रारम्भ कर दिया।

मनुष्य गंध आने से राक्षस बारम्बार पलंग से उठता है, परन्तु उस वक्त गुणवर्मा द्वारा चरण-मर्दन की क्रिया झड़प से होने के कारण वह मूर्छित-सा हो निद्रावस्था मे फिर सो जाता है। इस तरह मन्त्रजाप पूरा होने पर विजयचन्द्र के

क्रिया गुणवर्मा ने बंद करदी, और वे दोनों राक्षस के सन्मुख आ खड़े हुए। जागृत उन युवकों को खड़े देख उस राक्षस ने क्रोधायमान हो उन्हे मारने के लिए उपक्रम किया। परन्तु मंत्र के प्रभाव से वह उठने तक के लिए भी समर्थ न हो सका। अन्त में जब उसका कुछ भी जोर न चला तब शांत होकर बोला—मंत्र बल द्वारा मंत्रित करने से आज मैं आप लोगों का दास बन चुका हूँ। इसलिये आप मुझे आज्ञा करे कि मैं आपकी क्या सेवा करूं ?

राक्षस को स्वाधीन हुआ देख विजयचन्द्र ने कहा—हे राक्षसेन्द्र ! अब तू इस नगरी के प्रति वैर-भाव को छोड़ दे और नगर की पूर्ववत् शोभा कर तथा भंडारो को धन-धान्य से परिपूर्ण कर। विजय-चन्द्र के कथनानुसार राक्षस ने तमाम बाते मंजूर करली और अपनी दिव्य शक्ति से उसने थोड़े ही समय में नगर की पूर्ववत् शोभा बढ़ा दी। विजयचन्द्र ने तितर-बितर होकर भागी हुई प्रजा को जहाँ तहाँ से वापस बुला लिया। पहले के ही मंत्री को उसने प्रधान

पद समर्पित किया। प्रधान आदि राजपुरुषों और प्रजा-समुदाय ने मिलकर विजयचन्द्र को राज्यासन पर विराजमान कर दिया। विजयचन्द्र भी संतान की तरह प्रजा-पालन करने लगा। उसने अपने प्रचंड प्रताप से और नीति-निपुणता से पहले से भी अधिक अपनी राजधानी की शोभा बढ़ा दी। गुणवर्मा को अर्धासन पर बैठा कर कृतज्ञ राजा विजयचन्द्र ने नम्रता से कहा—"गुणवर्मा! यह तमाम राज्य ऋद्धि तेरी सहायता से प्राप्त हुई है, इसलिए इस राज्य में से तुम इच्छानुसार ग्रहण करके मुझ पर किये गये उपकार से अनुगृहीत करो।

समय देख, बड़ी नम्रता के साथ गुणवर्मा ने कहा—"महाराज विजयचन्द्र! मुझे राज्य या राज्य की किसी भी वस्तु की आवश्यकता नही है, परन्तु यदि आप इस उपकार का बदला देना ही चाहते हैं तो चन्द्रावती नगरी में जो आप लोभाकार और लोभानन्दी को स्तंभित कर आये हैं वे मेरे पूज्य पिता और चाचा हैं उनका अपराध क्षमा कर उन्हे बन्धन

मुक्त कीजिये ।"

यह बात सुनते ही विजयचन्द्र आश्चर्य चकित हो गया ! अहा ! विष वृक्ष से अमृत फल की उत्पत्ति ! गुणवर्मा ! क्या आप सच कहते है ? क्या सचमुच ही वे आपके पिता और चाचा थे ? ओ हो ! उनका ऐसा आचरण और आपका यह परोपकारी स्वभाव अहा ! कुदरत ने कैसी विचित्र सृष्टि की रचना की है ।"

गुणवर्मा ने गर्दन झुकाकर जवाब दिया हाँ, महाराज ! वे मेरे पिताश्री और चाचा साहब है ! महाराज ! कर्मो की विचित्र गति है । आप कृपा कर उन्हे शीघ्र ही बन्धन मुक्त करे ।

विजयचन्द्र—गुणवर्मा ! क्या कहते हो ! मुझ पर किये हुए आपके उपकार के सामने यह कुछ भी बडी बात नही है । मैं इससे भी अधिक आपका कार्य करने के लिए तैयार हूँ । परन्तु इतनी बात है कि यह कार्य विशेषत: तुम्हारे खुद के स्वाधीन है । इसका कारण मैं आपको बतलाता हूं सावधान होकर सुनें ।

उल्टा विजयचन्द्र का विशेष सत्कार करके उसके रस का तुम्बा उसे वापस दिया।

कृतज्ञ विजयचन्द्र ने वह रस का तुम्बा अति आग्रह पूर्वक गुणवर्मा को ही वापिस दे दिया। गुण-वर्मा ने भी विजयचन्द्र के विशेष आग्रह से उस रसा-यन रस को ग्रहण किया। इस प्रकार उन दोनों की मित्रता में अधिक वृद्धि हुई। यद्यपि ऐसे परोपकारी नर रत्न और मित्र का वियोग सहन करना दुसह्य था। तथापि राज्यादि कार्यभार की चिन्ता से विजय-चन्द्र को वापिस स्वदेश जाना पड़ा।

महाराजा वीरधवल कहते हैं 'देवी ! यह वृत्तांत अभी थोड़ी देर पहले स्वयं गुणवर्मा ने मेरे पास आकर मुझे सुनाया है। मेरे राज्य में उसके पिता और चाचा के किये हुए विश्वासघात के महान् अपराध की उसने बारंबार क्षमा-याचना की। गुणवर्मा की पितृभक्ति, परोपकारिता, निर्लोभता, उदारता, निडरता और गभीरतादि गुणों से मुझे बड़ा संतोष हुआ। इस कारण उसके पिता और चाचा के किये हुए अपराध

को मैंने क्षमा कर दिया। अभी कुछ देर पहले ही गुणवर्मा मुझसे मिलकर अपने घर गया है। प्रिये ! जब से मैंने गुणवर्मा और विजयचंद्र का इतिहास सुना है तब से मेरे मन में अनेक प्रकार के संकल्प विकल्प पैदा हो रहे है। मेरी शात वृत्तियाँ अशात हो उठी है, और मुझे बिलकुल चैन नही पड़ती। प्यारी ! अब तुम मेरी चिंता का कारण भली प्रकार समझ गई होगी।

शूरचंद्र राजा के पुत्र विजयचंद्र ने अपने गये हुए राज्य को फिर से प्राप्त किया, और भाई के दुश्मन से बदला लिया। ग ुणवर्मा ने मृत्यु के समान आपत्ति को स्वीकार कर सकट रूप समुद्र में डूबते हुए अपने पिता का उद्धार किया।

प्रिय देवी ! जिनके पुत्र है वे मनुष्य धन्य है। अभी तक हमारे घर एक भी पुत्र–पुत्री का जन्म नही हुआ; यह मेरी चिंता का मूल कारण है। प्रिय कोमलांगी ! मेरे बाद मेरे कुल में देव ग ुरु की पूजा कौन करेगा ? धर्मस्थानों का उद्धार कौन करेगा ? और

इस शहर के नजदीक जो यह एक शृंग नामक पर्वत दिख रहा है इसी गुफ़ा में देवता अधिष्ठित एक सुगुप्त कूपिका है। मुखद्वार नैत्र पट के समान वारम्बार विकसित होकर बन्द होता है। उस कूपिका मे से स्तम्भित हुए मनुष्य का पुत्र पानी लेकर यदि अपने पिता पर तीन बार छिड़के तो वह तुरन्त ही बन्धन मुक्त हो सकता हैं। परन्तु यदि पानी ग्रहण करते हुए डर जाय तो पानी लेने वाले की मृत्यु हो जाती है। गुणवर्मा ! पिता को बंधन मुक्त करने के लिए इसके सिवाय और कोई उपाय नहो है।

पितृभक्त, साहसिक गुणवर्मा ने कहा—महाराज मैं यह काम करके भी पिता को बंधन मुक्त करूँगा। आप इस कार्य मे मेरी सहायता करे।

गुणवर्मा की अलौकिक पितृभक्ति देखकर विजयचन्द्र बहुत खुश हुआ। उपकारी पर प्रत्युपकार करने के लिए पानी ग्रहण करने की सर्व सामग्री तय्यार कर विजयचंद्र गुणवर्मा को साथ लेकर उस कूपिका के पास गया। विकसित हुई उस कूपिका में पानी लेने के

लिए विजयचन्द्र की सहायता से मंचिका पर बैठकर गुणवर्मा अन्दर उतरा। निर्भयता से उसमें से जलपात्र भरकर गुणवर्मा ने रस्सा हिलाया, सावधान होकर शीघ्रता से विजयचन्द्र ने गुणवर्मा को कूपिका में से ऊपर खीच लिया।

मत्र प्रभाव से सेवक रूप बने हुए राक्षस ने घोड़े का रूप धारण किया। उस पर सवार होकर दोनों ही क्षणमात्र में चन्द्रावती पहुचे। देवता अधिष्ठित लाया हुआ पानी गुणवर्मा द्वारा लोभाकर पर तीन बार छिड़कने से वह बंधन मुक्त हो गया। परन्तु लोभानन्दी अपुत्रीय होने के कारण पूर्ववत् ही दुःखित रहा। क्योकि उस मंत्र के कल्प के अनुसार अपने पुत्र के सिवाय अन्य किसी से उसका दुःख दूर होना असम्भव था।

अपने परम उपकारी और मित्र गुणवर्मा को विजयचन्द्र ने प्रधान पद की मुद्रा और कुछ देश आदि देने के लिए अति आग्रह किया, तथापि निर्लोभी गुणवर्मा ने उसको बिलकुल स्वीकार न किया। बल्कि

कौन मेरे वंश को धारण करेगा ? प्रिय सुलोचने ! मुझसे ही मेरे पूर्वजों का वंश-वृक्ष का उच्छेद होगा। यही चिताग्नि मेरे मन मे प्रज्वलित हो रही है। बस इसके अतिरिक्त मेरे इस महान् शोक का दूसरा कोई कारण नही है।

पति के दुःख से दुःखित हुई चम्पकमाला ने नम्रता पूर्वक मीठे वचन से कहा—"प्राणनाथ ! यह दुसह्य दु.ख आपको और मुझको समान ही है। किसी भाग्यवान मनुष्यों की गोद में ही उत्तम बालक सोते है, क्रीड़ा करते है, मुग्धवचन बोलते है और कदम–कदम पर स्खलना पाते हुए माता-पिता से आ चिपटते है। सचमुच ससार में वे ही मनुष्य धन्य है जिनके घर में पैरों में घुँघरुओ के रणझणाहट करते हुए दो चार बच्चे क्रीड़ा करते हों। उनके जन्म कृतार्थं हैं जिन्होने सद्गुण सम्पन्न कुलदीपक उत्तमपुत्रों को जन्म दिया है। इस प्रकार बोलते हुए अपत्यमोह से मोहित होने के कारण रानो का हृदय गद्गद हो गया और उसके नेत्रों से अश्रुधारा वहने लगी। परंतु

कार्य कारण भाव को समझने वाली रानी चपकमाला स्वय धीरज धारण कर संतान-मोह के दु.ख में पड़े हुए पति को धीरज देने लगी।

प्रिय देव! पुत्रादि संतति पुण्य के प्रभाव से ही मिल सकती है, मात्र मनोरथ करके बैठे रहने से और पुण्य कार्य में उद्यम किये बिना कार्य सिद्धि कैसे हो सकती है? इसलिए हमे आज से ही पुण्यवृद्धि करने का प्रयत्न करना चाहिये। परन्तु उस कार्यसिद्धि में रुकावट करने वाले विघ्नों को दूर करने का प्रयत्न करना चाहिये। इसलिए हे प्राणेश्वर! चिंता का परित्याग करो। चिन्ता से विक्षिप्त चित्त वाला मनुष्य अपने इच्छित कार्य में सफलता नही पा सकता है। हे प्राणवल्लभ! मुझे इस समय एक उपाय सूझता है और वह यह है कि पुत्र प्राप्ति के लिए हम दोनों को किसी देव की आराधना करनी चाहिये।

महारानी चंपकमाला के समय सूचक, और धैर्य गर्भित वचनों से महाराज वीरधवल को अति हर्ष पैदा हुआ। अत. वे प्रसन्न होकर बोले प्यारी चंपकमाला!

तुम्हारे जैसी ही उत्तम सहचारिणी, पति के दुःख में हिस्सा लेने वाली और ऐसे समय में धीरज देने वाली, पतिसुखपरायणा, सती स्त्रियाँ बहुत कम होगी प्रिये! तुम्हारे जैसी सद्‌गुण सम्पन्न और श्रेष्ट वुद्धि देने वाली पत्नी को पाकर मैं आज अपने आपको कृतार्थ समझता हूँ।

प्यारी मृगाक्षी! आज तुमने पुत्र प्राप्ति के लिए जो पुण्यवृद्धि करने का उत्तम रास्ता बतलाया है वह सचमुच ही प्रशंसनीय है। कारण बिना कार्य के सिद्धि नही होती। संसार के तमाम प्रसंगो में इस बात का अनुभव होता है, तब फिर यह भी एक सांसारिक ही प्रसग है अत. आज से ही हमें देव, गुरु, धर्म की भक्ति और दान-पुण्य त्याग-तपस्या आदि मे लग जाना चाहिये। पुण्य की प्रबलता से एवं देवाराधना करने से अन्तरायकर्म दूर होगा, जिससे हमें संतान प्राप्ति की इच्छा भी सफल हो जायगी इस बात पर मुझे संशय रहित विश्वास है। तो प्यारी! यह बताओ कि हमें किस देव की आराधना करनी चाहिये?

रानी चपकमाला—"प्राणवल्लभ ! आपने यह प्रश्न क्यों किया ? देवाधि देव परम पूज्य ऋषभ देव प्रभु हमारे इष्ट देव ही हैं, क्या आप उन्हे नही जानते ?

महाराजा वीरधवल—प्राणप्यारी ! मै अपने परम पूज्य देवाधि देव ऋषभ आदिनाथ भगवान प्रभु को भलीभाँति जानता हूं तथापि वे लोकोत्तरदेव होने से वीतरागदेव हैं। सासारिक कार्य के निमित्त लोकोत्तर देव की आराधना करने से सम्यक्त्व में मलिनता आती है। यह बात हमने पहले सद्गुरु के मुख से सुनी थी, तब वे राग-द्वेषरहित होने के कारण हमें सन्तति–सुख किस तरह देंगे ? इसी कारण मैंने यह प्रश्न किया है।

चम्पकमाला—"स्वामिन् ! आपकी यह शङ्का योग्य ही है तथापि सन्तति-प्राप्ति के निमित्त अन्तराय कर्म को क्षय करने के लिये देव की आराधना की जाय तो मिथ्यात्व प्राप्ति का या सम्यक्त्व दूषित होने का सम्भव नही। प्राणेश ! वीतरागदेव सन्तति-सुख किस तरह दे सकते हैं इस बात का निराकरण भी मैंने गुरू महाराज के मुख से सुना हुआ है कि प्रत्यक्षतया वीतरागदेव कुछ नही देते, तथापि जो वस्तु मिली है वह पुण्योदय या अन्तराय कर्म को क्षय करने रूप

जिनेन्द्रदेव का पूजन, स्मरण या आराधना ही कारण रूप है।

रानी चम्पकमाला के पूर्वोक्त गम्भीर और सार-गर्भित वाक्य सुन कर महाराज वीरधवल बहुत ही प्रसन्न हुए। रानी की बुद्धिमता देख कर उनके अन्तःकरण मे उसके प्रति और भी अधिक प्रेम और सन्मान ने स्थान प्राप्त किया। उन्होने उसी दिन से जिनेन्द्रदेव की आराधना शुरू कर दी। अब वे अपना समय सुख से व्यतीत करने लगे।



(७)

चम्पकमाला का हरण

शयनागार मे महाराजा वीरधवल और महारानी चम्पकमाला सुखपूर्वक बैठे आपस में विनोद से बात-चीत कर रहे थे। इतने ही में अकस्मात् दीनमुख कर के रानी चम्पकमाला बोल उठी-, महाराज ! आज मेरा दाहिना नेत्र फड़क रहा है। न मालूम इस अमंगल निमित्त से मुझ पर कौनसी मुसीबत आयगी ? क्या बिजली गिरेगी या मेरा सर्वस्व लुट जायगा अथवा कोई भयंकर बीमारी आयगी ? मुझे इस समय जाने क्या हो गया है ? हृदय बिल्कुल अशान्त और व्याकुल हो रहा है और चित्त में बेचैनी बढ़ती जा रही है।

महाराजा वीरधवल बोले—'प्यारी ! स्त्रियों का दाहिना नेत्र फड़कना अवश्य ही अमंगलसूचक माना गया है। तथापि तुम बिल्कुल निर्भय रहो। किसी भी

प्रकार के अमंगल की शंका मत करो। जिस तरह सूर्योदय होने पर अन्धकार नही आ सकता उसी तरह मेरे राज्य में तुझे किसी भी तरह का कष्ट नही हो सकता। फिर भी दैववशात् अगर तुझे कुछ भी अमंगल हुआ तो पतंग के समान तेरे साथ मुझे भी अग्नि का शरण होगा, इत्यादि शब्दों से महारानी को धीरज दिला कर महाराजा वीरधवल राज्यसभामें जा कर राजकाज में प्रवृत्त हो गये।

इधर ज्यों-ज्यों रानी का दाहिना नेत्र विशेष फड़कने लगा त्यों त्यों उसे महल में, उद्यान में और बगीचे में कही भी शान्ति न मिली। वह उदासमुख मध्याह्न समय महल में आकर अपने पलंग पर लेट गई और धीरे-धीरे निद्रादेवी के आधीन हो गई।

थोड़ी देर बाद दासी वेगवती हाथों से मस्तक पीटती हुई, कदम-कदम पर स्खलना पाती हुई और आँसुओं से हृदय को भिगोती हुई राजसभा में आई और हाथ जोड़कर कहने लगी—'महाराज ! महारानी चंपकमाला को— —' यह अर्धवाक्य सुनते ही

एवं शोकाकुल दासी को देख कर भयभ्रान्त हो महाराजा वीरधवल सहसा बोल उठे—हा देवी ! देववश तुझे क्या अमगल हुआ ? क्या तेरा फड़कता हुआ दाहिना नेत्र सचमुच ही सफल हुआ ? अरे, वेगवती जल्दी बोल ! रानी चम्पकमाला को क्या हुआ ? मेरा स्नेही दिल विलम्ब नही कर सकता।

रुद्ध कण्ठ वाली वेगवती ने रुदन करते हुए उत्तर दिया—'हे धीर वीर शिरोमणि महाराज ! यह समाचार सुनने के लिए अपने कान और हृदय को वज्र के समान कठिन कर लो। महारानी का जब दाहिना नेत्र विशेष फड़कने लगा तब उसे महल में बिल्कुल शान्ति न मिली, इससे हम सब शहर के बाहर उद्यान में गई, परन्तु बागबगीचे वगैरह विश्रान्ति के अनेक स्थानो में घूमते रहने पर भी महारानी के चित्त को चैन न मिला तब फिर हम सब वापिस महलों में आ गईं। महारानी शयनगृह में जाकर पलंग पर सो गई और मुझे उन्होने बगीचे से पुष्प और पत्ते लाने को भेज दिया। महारानी को निद्राधीन हुई देख कर

तमाम परिवार खाने-पीने आदि कार्य में लग गया। मै थोड़े ही समय बाद बगीचे से उनके उपयोगी पत्तो और पुष्प लेकर वापस आई। शयनगृह में जा कर देखा तो महारानी पत्थर की मूर्ति के समान निश्चेष्ट पड़ी हुई है। पता नही कि महारानी के प्राण, रोग या विष प्रयोग अथवा किसी महान् दु.ख से गये है।

हलाहल जहर के समान दासी के मुख से पूर्वोक्त अमंगल वचन सुनते ही राजा वीरधवल सहसा मूर्छित हो जमीन पर गिर पड़े। पास में रहे हुए मन्त्रीमडल द्वारा शीतल वायु और द्रवित-चन्दन के सिचाई करने से कुछ देर बाद महाराज होश में आये। जागृत अवस्था में आते ही महाराज वीरधवल रानी के वियोग से व्याकुल हो निम्न प्रकार विलाप करने लगे।

"अरे निर्दयी देव ! तूनें मुझे प्रथम ही क्यों न मार डाला जिससे रानी के अमंगल की बात मुझे अपने कानों से सुनंने का प्रसंग ही न आता। अरे दुर्दैव ! तूने छिपकली की पूँछ के समाम तड़फती हुई मेरी अर्ध आत्मा को छेदन कर डाला। हे दक्ष देवी !

दाहिने नेत्र फड़कने के बहाने से तूने अपना मृत्युकाल प्रथम ही बतला दिया था तथापि मैं तेरा रक्षण नही कर सका। तेरे सिर पर आने वाली विपत्ति को जानते हुए भी मैं उसका प्रतिकार न कर सका। अतः मैं महा अज्ञानी बुद्धिहीन और घोर पापी हूँ। अगर ऐसा न होता तो मैं तेरी बात पर विश्वास कर के प्रथम से ही तेरे रक्षण का कुछ उपाय अवश्य ही करता। इस प्रकार अपनेआपकी निन्दा करते हुए और नेत्रजल से जमीन को सीचते हुए राजा ने तमाम राजपरिवार को रुलाया। इस समय राजा वीरधवल की शोकावस्था रानी के वियोग से पागल जैसी हो गई।

राजा की यह स्थिति देख कर स्वामी के दुःख से दुःखित हुआ मन्त्री मण्डल गद्गद्कण्ठ से हाथ जोड़कर विनति करने लगा। 'महाराज! धैर्य धारण करिये और शीघ्र ही महल में चल कर महारानी को देखो कि उसके शरीर की अवस्था कैसी है? जहर के प्रयोग से भी मनुष्य श्वासोश्वास रहित हो जाता है,

क्यो कि उसके प्राण, दिमाग या नाभि मे सस्थित हो जाते है। उन्हें चल कर देखना चाहिये कि रानी की ऐसी ही हालत तो नही है !

मन्त्रीमण्डल की प्रेरणा से कदम-कदम पर स्खलना पाता हुआ राजा रानी के महल में आया। वहाँ आकर देखा तो सचमुच ही पाषाण मूर्तिवत् रानी का निश्चेष्ट कलेवर पड़ा है। रानी को ऐसी स्थिति में देखते ही राजा मूर्छित हो जमीन पर गिर पड़ा। शीतल जल के प्रयोग से कुछ देर बाद नेत्र खोल कर राजा बैठा हुआ। परन्तु सामने ही रानी की वैसी ही हालत देख कर फिर बेहोश हो गया। इस प्रकार बारम्बार मूर्छा से उठना और फिर बेहोश हो जाना, राजा ऐसी भयंकर अवस्था का अनुभव करने लगा। राज्यकुल के मनुष्यो ने रानी के तमाम शरीर को अच्छी तरह देखा परन्तु उसके शरीर में कहीं पर भी सर्पादि जहरीले जानवर का दंश मालूम न हुआ और न ही किसी प्रकार के विषप्रयोग के चिन्ह ही नजर आये।

मित्रों ! रानी का सारा शरीर अक्षत है—एक खरोंच तक का निशान नही ! जहर का प्रयोग भी मालूम नही होता । क्या रानी के प्राण किसी हृदय-दुःख से या किसी दुष्ट देव के प्रकोप से निकले है ? अगर ऐसा न हो तो तमाम बदन सर्वथा अक्षत नहीं होना चाहिये । रानी के मोह से मोहित होकर राजा अवश्य मृत्यु प्राप्त करेंगे और राजा की मृत्यु से इस राज्य का सर्वनाश हो जायगा क्यो कि राज्य की धुरा धारण करने वाला एक भी राजकुमार नही है ।

सुबुद्धि नामक प्रधानमन्त्री ने अपने आश्रित राज्य कर्मचारियों के समक्ष पूर्वोक्त कथन कर सेनापति से कहा कि इसी वक्त हमे किसी भी प्रयोग से महाराजा को ऐसी स्थिति में धैर्य दिलाने के लिए समय व्यतीत करना चाहिये क्योंकि समय व्यतीत होनेसे हमें राजा को बचा लेने का कोई उपाय मिल जायगा । सेनापति बोला—'महानुभाव ! ऐसी हालत में किस तरह से समय व्यतीत किया जाय ?' सुबुद्धि बोला—'राजा से हमें कहना चाहिये कि रानी को जहर चढ़ गया है

और वह अभी जीवित है, उसके प्राण नाभि में संस्थिर हैं। इसलिए मणि-मन्त्र औषधि आदि द्वारा उसके जहर उतारने के प्रयोग करना चाहिये। इस विचारसे सबकी सम्मति मिलने से प्रधानमन्त्री राजा के पास आकर बोला—महाराज! महारानी अभी जीवित है। उसे जहर चढा हुआहै उसके प्राण नाभि मे रहे हुए हैं।

यह वाक्य सुनते ही राजा मानो अमृत से सिंचन किया गया हो त्यो उश्वास प्राप्त कर निद्रा से जागृत हो बोले—'अरे सेवकों! जल्दी दौड़ो; विष दूर करने वालों को और भण्डार में से जड़ीबूँटी आदि लाओ! विषहरण करने वाली मणि लाओ! शहर में जितने भी मन्त्रवादी हों उन सबको बुलाओ और रानी को जल्दी विष रहित करो।

राजाज्ञा मिलते ही जड़ी बूँटी, मणि और मन्त्र वादी तमाम सामग्री उपस्थित हो गई। प्रधानमन्त्री की आज्ञानुसार रानो को एकान्त में सुला कर शीघ्र ही मन्त्रवादियो ने मन्त्रप्रयोग शुरू किये। अब राजा

विचार करता है कि रानी अब श्वास लेगी, उसकी आँखें अभी खुलेगी, वह अभी करवट बदलेगी और बैठी होकर मुझसे बात करेगी। इस प्रकार मोह से व्याकुल राजा को विचार करते हुए आधा दिन और कुछ कष्ट से सारी रात बीत गई। बुद्धिमान मन्त्री-मण्डल ने अपनी बुद्धि के प्रयोग से इतना समय तो व्यतीत करा दिया, परन्तु रानी के शरीर पर किये गये प्रयोगो का कुछ भी असर नही हुआ। प्रातःकाल होने पर तमाम मन्त्रीमण्डल निरुपाय हो विचार करने लगा, अब हम राजा को मौत से कैसे बचावे ? रानी के स्नेहबन्धन में बँधा हुआ राजा अवश्य ही अपने प्राणों की आहुति देदेगा। सच्चे प्रेम वालों के लिए प्रेमी का सदा का वियोग हो जाने पर मृत्यु के सिवा अन्य कोई उपाय नही। हा ! हा ! रानी की मृत्यु से यह राज्य, राष्ट्र, यह कोष, चार प्रकार की सेना, तमाम प्रजा और साथही हम अनाथ हो जायँगे। इस चिन्तासागर में डूबे हुए राज्य के तमाम प्रधान आदि राज्य परिवार राजा के प्राण बचाने में निरुपाय हो

गये ।

पूर्ववत् अपनी वल्लभा को चेष्टा रहित देख कर राजा का फिर से हृदय भर आया और वह गद्गद् स्वर से विलाप करने लगा । हे देवी ! तुझे सचेतन करने के तमाम प्रयत्न निष्फल हो गये । अब तू किस उपाय से जीवित होगी ? प्रिये ! इतने समय से बहुतसारे उपाय करने पर भी तू क्यों नही बोलती ? मालूम होता है कि तू मुझे यहाँ अकेला छोड़ कर पर-लोक चली गई है । प्यारी ! तेरे बिना यहाँ पर मेरी एक घड़ी एक मास के समान और दिन वर्ष के तुल्य मालूम हो रहा है, तब फ़िर मेरा शेष आयुष्य किस तरह व्यतीत होगा ? हे मृगाक्षी ! मेरी शक्ति धिक्कार के योग्य है, क्यो कि तुझ पर आने वाली इस घोर आपत्ति का पता लगने पर भी मैं तेरे रक्षण के लिए कुछ भी तो नही कर सका । प्यारी ! तू कहाँ चली गई ? एक वार तू मुझे अपना स्थान तो बता जा, जिससे मैं तेरा मुखकमल देखकर सुख प्राप्त कर सकूँ । इस तरह विलाप करते हुए दुःखित राजा को फिर से

पूर्ववत् मूर्च्छा आ गई । शीतोपचार करने पर जागृत हो राजा मंत्रियों से बोला—

हे मन्त्रीवरों ! आप लोग सावधान होकर मेरी वात सुनो । इतना लम्बा समय बीतने पर भी आप लोग रानी को जीवित नहीं कर सके । मैंने रानी के साथ ही मरने का निश्चय किया है । रानी के वियोग में मेरे प्राणदेह धारण करने के लिए सर्वथा असमर्थ है । मन्त्रीश्वरों ! अब विलम्ब न करो, गोला नदी के किनारे पर काष्ट की एक चिता जल्दी तैयार करो जिससे कि रानी के वियोग में दग्ध अपनी आत्मा को चिता के हवाले कर शान्ति दे सकूँ ।

आँसुओ से पृथ्वी को भिगोते हुए मन्त्री लोग आर्त्तनाद करते हुए बोले—'हा हा ! महाराज !! आज हम सबके सब जीते हुए भी मृतक समान हो हो रहे हैं । सूर्य अस्त होने पर क्या कभी कमलाकर विकसित रह सकते है ? पिता के मरने पर निराधार बच्चों की क्या दशा होगी ? पानी बिना ज्यों मछलियाँ तड़फ-तड़फ कर प्राण खो देती है, वैसे ही हे

नाथ ! आपके बिना पुण्य रहित अनाथ के समान हमारी क्या दशा होगी ? कृपालु ! हम पर प्रसन्न होकर आप इस मोह को कम करो और अपने किये हुए निश्चय को स्थगित करो। अर्थात् मरने का विचार छोड़ कर चिरकाल तक राज्य - पालन करो। आपके बाद शत्रु लोग इस राज्य को ग्रहण कर लेंगे। प्रजा निराधार होकर सङ्कट में पड़ जायगी ।

महाराज ! विचार करो, आप जैसे वीर पुरुष भी यदि धैर्य का त्याग करेंगे तो निराधार होकर धैर्यता किसका आश्रय लेगी ? आप यह भली प्रकार जानते है कि रानी के प्राण - रहित होने में कर्म ही कारणभूत है। इससे संसार की असारता स्पष्टतया मालूम होती है, संसार की कोई भी वस्तु चिरकाल तक एक ही स्वरूप में नहीं रह सकती। इसीलिए महापुरुषों ने कहा है कि—

राजानः खेचरेन्द्राश्च, केशवाश्चक्रवर्तिनः।
देवेन्द्रा वीतरागाश्च, मुच्यन्ते नैव कर्मणा ।।

अर्थात् राजा, विद्याधर, वासुदेव, चक्रवर्ती देवेन्द्र, और वीतराग को भी कर्म नहीं छोड़ता ।

अहा ! ऐसी सामर्थ्य वाले महापुरुषो को भी किये हुए कर्म का फल भोगना पड़ता है, तब फिर अन्य पुरुषों की तो बात ही क्या ? महाराज ! आप स्वयं इस कर्म-सिद्धान्त को जानते है, फिर भी इस प्रकार पतग के समान अज्ञान मृत्यु से मरना चाहते है, यह आप जैसे विवेकी पुरुषो के लिए योग्य नही !

मन्त्री के वचन सुन कर शोक से कुण्ठित और विचारशून्य हृदयवान राजा ने उत्तर दिया :— 'मेरे हितेच्छु मन्त्रीश्वरो आप मुझे जो बोध दे रहे हो, कर्म की परिणति, ससार की असारता और अनित्यता बतलाते हो यह सब कुछ मैं जानता हूं, परन्तु मोह की दशा विचित्र है । रानी के मोह से मोहित आत्मा, मैं इस समय युक्तायुक्त कुछ भी नही विचार सकता । तथा जब रानी का दाहिना नेत्र फड़क रहा था और उसने मुझे अपने भावी अनिष्ट की सूचना दी थी, तब मैंने उसके साथ ही अग्निशरण होने का उसे वचन

दिया हुआ है।

अपने मुख से बोला हुआ सुलभ कार्य भी मुझसे न हो सके तो असत्यवादी मनुष्यों की श्रेणी में मेरा सबसे पहला नाम होगा। तुम्हें मालूम होगा कि जन्म से लेकर आज तक मेरा कोई भी वचन अन्यथा नही हुआ। अगर इस समय मैं अपने वचन के अनुसार रानी के साथ अग्नि शरण होकर नही मरता हूँ तो मेरा सत्यव्रत कैसे रह सकता है? इसलिए प्यारे मन्त्रीवरों! मेरे और रानी के लिए एक बड़ी चिता तैयार कराओ कि जिसमें मैं तमाम दुःखों को भस्मीभूत करूँ। महाराज को अनेक प्रकार से समझाया गया परन्तु वे अपने मरण के निश्चय से जरा भी शिथिल न हुए, तब तमाम मन्त्रीमण्डल मौन धारण कर उदास हो एक तरफ खड़ा हो गया। महाराज फिर से बोले—मन्त्रीश्वरो! उदास होकर क्यों खड़े हो? तुम भी इस प्रकार निष्ठुर क्यो बनते हो? मैं कदापि जीवित न रहूँगा। समय बिता कर मुझे विशेष कष्ट क्यो पहुचाते हो? राजा के वचन सुन कर

कुछ भी उत्तर न देते हुए सारा मन्त्री मण्डल जमीन पर नजर गड़ाये नतमस्तक होकर ज्यो का त्यों खड़ा रहा।

चिता तैयार कराने के लिए मन्त्रीमण्डल की उपेक्षा देख कर राजा ने अपने दूसरे मनुष्यों को उस कार्य को करने की प्रेरणा की। उन मनुष्यों ने निरुपाय होकर रानी के मृतक शरीर को स्नान करा कर पुष्पादिक से अर्चन कर शिविका में स्थापन किया। तमाम परिवार सहित राजा उस शिविका के साथ राजमहल को सूना छोड़ गोला नदी की ओर चल पडा।

यह घटना शहर में चारों तरफ शीघ्रता से फैल गई। रानी के विरह से दुःखित होकर आज महाराज वीरधवल अग्निप्रवेश कर मरने के लिए जा रहे है। यह समाचार सुनते ही नगर के आबाल - वृद्ध तमाम मनुष्य हरएक जगह करुण स्वर से विलाप करने लगे उस दिन नगर के तमाम नरनारियों ने अन्न तो क्या जलपान तक भी न किया। तमाम शहर में इस दुर्घ-

(८)

काष्ठ-स्तम्भ में चम्पकमाला

इस काष्ट को चारों तरफ से इस प्रकार जकड़ कर बाँधने का क्या कारण होगा ? क्या यह अन्दर से थोता तो नही होगा ? इसे गोला नदी में किसने बहा दिया होगा ? इत्यादि अनेक प्रकार के मनोगत तर्क-वितर्क करते हुए राजा वीरधवल ने अपने सेवकों को उसके बन्धन तोड़ डालने का हुक्म दिया। बन्धन तोड़ते ही उस काष्ट के, सीप-संपुट के समान दो भाग मालूम हुए। ऊपरी भाग दूर करने पर उसके बीच में रही हुई अर्धजागृतावस्था में रानी चंपकमाला दिखाई दी। उसके शरीर पर चंदन का विलेपन किया हुआ था। उसके शरीर से कस्तूरी आदि सुगन्वित द्रव्यों की महक आ रही थी। उसके कण्ठ में

सच्चे मोतियो का अमूल्य हार शोभ रहा था। और नेत्रों में निद्रा छाई हुई थी।

अकस्मात् उस काष्ठविवर के अन्दर निद्रालु अवस्था में महारानी चंपकमाला को देखते ही महाराजा वीरधवल और तमाम लोगों के मुख से एकदम हर्ष-ध्वनि हो उठी। अहो! रानी चंपकमाला यहाँ कैसे? सबके चेहरे खिल गये और वहाँ पर मौजूद तमाम स्त्री-पुरुषों में जो शोक की प्रचंड घटा छाई हुई थी वह नष्ट हो गई और हर्ष आनन्द का प्रचंड भास्कर प्रकाशित हो उठा। इस हर्ष के साथ ही महाराजा वीरधवल विचार में पड़े कि जिस रानी के मृतक शरीर को शिविका में डाल कर यहाँ लाये हैं वह असली रानी है या यह? अथवा कहीं मैं स्वप्न तो नही देख रहा हूँ? अथवा वही जीवित रानी डर के कारण इस काष्ठविवर में तो नहीं आ घुसी है? पर ये बाते असम्भव-सी प्रतीत होती है। इसमें वास्तविक सत्य क्या है? यह जानने के लिए महाराजा वीरधवल ने तुरन्त ही अपने सेवकों को आज्ञा दी कि

जल्दी शिविका को देखो, उसमें रानीका मृतक शरीर है या नही ? राजा की आज्ञा मिलते ही राजपुरुष शिविका देखने के लिए दौड़े। इतने ही में शिविका में रहा शव हाथ मसलता, दांतों से दांत पीसता हुआ 'अरे ! मैं ठगा गया' इस प्रकार शब्द बोलता हुआ तमाम जनता के सामने आकाश में उड़ गया।

यह घटना देखते ही तमाम लोग भयभीत हो कांपने लगे। विस्मय और आनन्द से पूर्ण हृदयवाला राजा जनता को आश्वासन देता हुआ बोला—'सज्ज-नों ! इस वृतान्त के वास्तविक रहस्य को हम में से कोई भी नहीं जानता परन्तु काष्ठस्तम्भ में से निकली हुई रानी शायद इस रहस्य को प्रकट करेगी।" यों कह कर उन्होने रानी की तरफ देख कर यह प्रश्न किया कि प्रिये ! यह क्या घटना है ? क्या इस रहस्यको तुम बता कर हम सबको शंका दूर करोगी?

राजा के पूर्वोक्त वचन कान में पड़ते ही रानी चम्पकमाला अर्धनिद्रा से जागृत हो महाराजा को अपने सन्मुख खड़ा देख कर उनके मुख-मण्डल की

तरफ टकटकी लगा कर देखने लगी। नजर से नजर मिलते ही रानी के नेत्रों से अश्रुधारा बहने लगी। इस समय दोनो दम्पत्ति को जो आनन्द प्राप्त हुआ वह अकथनीय था। कुछ देर तक अनिमेष दृष्टि से देख कर हर्ष के आँसुओं से विरह की अग्नि को बुझाती हुई रानी स्वयं राजा से पूछने लगी। स्वामिन्! आज इस नदी के किनारे पर आप किसलिए पधारे है? ये सारे लोग यहाँ क्यों इकट्ठे हुए है और सामने ही यह चिता क्यों तैयार की गई है? यह मृतक शव को उठाने वाली शिविका दिखाई दे रही है, क्या कोई मनुष्य मर गया है?

राजा अधीर होकर बोला—'देवी! तुम्हारे सब प्रश्नों का उत्तर मैं पीछे दूँगा। पहले तुम मुझे अपना सम्पूर्ण वृत्तान्त सुनाओ। प्रिये! तुम कहाँ चली गई थी और इतने समय तक कहाँ रही? घुन के समान इस काष्ठस्तम्भ में किस तरह घुसी? कण्ठ में रहा हुआ यह हार तुम्हें किसने दिया और नदी के प्रवाह में किस तरह बह कर आई? यह वृतान्त सुना कर

हमारी उत्सुकता को दूर करो।

रानी ने मधुर स्वर से कहा— 'अगर आपको प्रथम मेरा ही वृत्तान्त सुनना है तो उस वट-वृक्ष की शीतल छाया में चलो। वहां जरा विश्रान्ति लेकर मैं शान्त चित्त से इस विचित्र घटना का सारा हाल विस्तृत सुनाऊँगी। रानी के इस उत्तर से तमाम जनता को बड़ी प्रसन्नता हुई और राजा रानी आदि सब लोग नजदीक में रहे हुए उस वट-वृक्ष की छाया में यथोचित स्थान पर जा बैठे तथा इस दुर्घटना का वृत्तान्त सुनने के लिए उत्सुक हो रानी के मुखमण्डल की ओर देखने लगे।

प्रिय देव ! यह बात तो आपको मालूम ही थी कि मेरा दाहिना नेत्र फड़कता था। उस अशुभ निमित्त से मुझे किसी भी स्थान पर शान्ति प्राप्त नहीं हुई। आपके जाने बाद मैं ने वन उपवन बगीचे आदि मे रह कर शान्ति प्राप्त करने के लिए बहुत उपाय किया। किन्तु कही पर भी चित्त को चैन न मिलने के कारण मैं वापिस महल में आ गई और दासी वेग-

वती को मैंने फूल-पत्र लेने के लिये भेज दिया। उस समय मेरी आंखों मे कुछ निद्रा भरने लगी थी, अत. मैंने आराम पाने के लिए पलंग का आश्रय लिया। मुझे मालूम है कि निद्रागत हो जाने पर तुरन्त ही मुझे किसी दुरात्मा ने उठा लिया। महल से उठाकर मुझे एक पहाड़ के शिखर पर रख दिया गया। मुझे उठा कर लाने वाला दुष्ट व्यक्ति शीघ्र ही कही अन्यत्र चला गया।



(९)

जैनमन्दिर के दर्शन से सफल मनोरथ

उस समय भय के मारे मेरा सारा शरीर कापने लगा वह पहाड़ी प्रदेश यद्यपि रमणीय था तथापि मुझे उस समय वह अति भयानक प्रतीत हो रहा था। उस पर्वत पर रहे हुए चन्दनवृक्षों का सुगधित परिमल पवन के साथ मेरे शरीर को स्पर्श कर रहा था तथापि वह मुझे दु.खद मालूम होता था। चारों ओर दृष्टि घुमाती मैं उस शिलातल्प से उठी। सावधान हो कर मैंने सब तरफ दूर दूर तक देखा, परन्तु वहां पर कही मनुष्य की छाया तक भी नहीं दिखाई दी।

मात्र सिंह, व्याघ्र, रीछ और वैसे ही अन्य विकराल प्राणियो के शब्द सुनाई देते थे। ऐसी भयङ्कर स्थिति मे साहस धारण कर मैं एक ओर चल पड़ी।

मैं चलते समय विचार करती जाती थी कि कहाँ वह मेरी रमणीय चन्द्रावती नगरी और कहां यह निर्जन प्रदेश ? हा ! मेरे प्राणवल्लभ कहां रहे और मेरा उनसे किस तरह मिलाप होगा ? इस निष्कारण शत्रु ने मेरा अपहरण किसलिये किया ? इस संकट से अब मैं कैसे मुक्त हो पाऊँगी ? इस भयानक जंगल में मैं कैसे रह सकूँगी ? मेरे बाद वहां पर मेरे प्राणनाथ की क्या दशा हुई होगी ? इत्यादि विचारों की उलझन में कदम-कदम पर ठोकरे खाती हुई मैं बहुत दूर तक उसी दिशा में चली गई।

इतने ही में मेरे पुण्य के उदय से सामने एक विशाल भव्य जिनमन्दिर नजर आया। उस मन्दिर के द्वार खुले हुए थे, इसलिए धैर्य से मैंने उसमे प्रवेश किया। अन्दर जाकर देखा तो वृषभ लांछन से ज्ञात हुआ कि ऋषभदेव स्वामी की सुन्दर और शान्त मूर्ति

विराजमान है। प्रभु की प्रतिमा के दर्शन से मुझे उस महा सकट में भी कुछ विश्रान्ति मिली। मन्दिर की प्राप्ति से मेरी अनेक आशाएँ सजीवन–सी हो उठी। मानो मैं तमाम दु:खों को भूल गई हूं, ऐसी मेरे मन मे हिम्मत और शान्ति प्राप्त हुई। ऐसे निर्जन जंगल मे और आपत्ति के समय में देवाधिदेव का दर्शन हुआ यही मेरे भविष्य के शुभ की निशानी थी। मै उस संकटहरण शान्तिकर महाप्रभु की एकाग्र चित्त से स्तुति करने लगी।

'हे अनाथो के नाथ! परदु:खभञ्जन! कृपासिंधु वीतराग देव! मैं आपकी शरण मे आई हूँ। हे शरणागत वत्सल विरुद धारण करने वाले सर्वज्ञ देव! संसार में आपके हितोपदेश से अनादि कर्मबन्धन से मुक्त हो भव्य जीव परम पद को प्राप्त करते हैं। हे प्रभो! आपके दर्शन की प्राप्ति अन्धकार में दीपक, मरुभूमि मे सरोवर, शुष्क पहाड़ पर कल्पवृक्षों का झुण्ड और समुद्र में जहाज प्राप्ति के समान आनन्ददायक हैं। हे भगवन्! मेरे वाह्याभ्यन्तर दुःखों का

अन्त करिये ।

इस प्रकार शान्त चित्त से भगवान की स्तुति करके जब मै मन्दिर से बाहर आई तो वहां पर मुझे दिव्य रूप धारण करने वाली एक स्त्री मिली । वह मेरे पास आकर प्रसन्नता से बोली—'सुन्दरी ! तुझ पर इस प्रकार की विपत्ति के बादल आने पर भी जिनेश्वरदेव पर तेरी इस समय अटल भक्ति और अटूट धर्मपरायणता देख कर ऋषभदेव प्रभु के शासन की अधिष्टात्री देवी मैं तुझे सहाय करने के लिए प्रकट हुई हूँ । प्रभु के इस मन्दिर के नजदीक ही रहने वाली और देवमन्दिर का रक्षण करने वाली मैं स्वयं चक्केश्वरी देवी हूं । इस मलयाचल पहाड़ के ऊपर मेरा भुवन होने से मुझे लोग मलयादेवी भी कहते है. मेरे ही धर्म को पालन करने वाली प्रिय बहिन ! तू धैर्य धारण कर और भयको त्याग दे । मैं तेरा रक्षण करने के लिए ही आई हूँ ।' इस प्रकार कह कर आदरपूर्वक उसने मेरे हाथ मे सुगन्धित कुछ चन्दन के टुकडे दिये ।

मलयादेवी का वात्सल्य पा कर मुझे बड़ा धैर्य प्राप्त हुआ। मैने देवी से कहा— हे देवी ! मुझे कौन और किसलिए यहां हरण करके लाया है ? मुझे अब अपने स्वामी का मिलाप होगा या नही ?' देवी ने कहा—'धर्म बहन ! तेरे पति वीरधवल का वीरपाल नामक एक छोटा भाई था। राज्य पानेकी इच्छा से उसने राजा को मार डालने के अनेक उपाय किये परन्तु राजा के पुण्य के सामने उसके तमाम प्रयत्न निष्फल हुए। एक दिन उस निष्ठुर ने राजाको मारने के लिए महल में प्रवेश किया और राजा पर शस्त्र-प्रहार किया। परन्तु राजा ने सावधान होकर, उसके वार को वेकार कर दिया और तलवार के एक ही प्रहार से उसे जमीन पर गिरा दिया। बुरी तरह से घायल हो कर वीरपाल अपने पाप का पश्चात्ताप करता हुआ कुछ शुभ भावना से मृत्यु पा कर इसी पर्वत पर मेरे परिवार में प्रचण्ड शक्ति वाला भूत जाति में देव पैदा हुआ है।

उसने ज्ञान से अपना पहला भव देखा। वैर याद

कर राजा से बदला लेने के लिए उसके छिद्र देखता हुआ उनके पीछे फिरने लगा परन्तु राजा का पुण्य प्रबल होने से उसका कुछ भी नही बिगाड़ कर सका। तब उसने विचार किया कि राजा का रानी चम्पकमाला से अत्यधिक प्यार है। उसके जैसा स्वाभाविक प्रेम अन्य किसी पर भी नही मालूम होता है। यदि रानी को मार दिया जाय तो प्रेमबन्धन में बँधा हुआ राजा स्वय मर जायगा। इस तरह से मैं अपना बदला ले सकता हूँ।

हे सुन्दरी! इसी विचार से भूतदेव तेरे पीछे फिरने लगा। आज शयनागार में तुझे अकेली निद्रावस्था में देख कर इस पर्वत पर उठा लाया। पुण्य की प्रबलता और आयुष्य लम्बा होनेसे वह तुझे मार नही सका। हे धर्म सहोदरी! अब तुझे घबड़ाने की आवश्यकता नही क्यों कि तुम्हारे ही शुभ कर्म की प्रेरणा से मैं तुझे आ मिली हूँ। अब से तेरे पुण्य कर्म का उदय हो गया है। और वही रक्षा करेगा तथा तुझे इष्ट प्राप्ति कराने में समर्थ होगा। मेरा समागम भी

तुम्हारे उस पुण्य के योग से ही हुआ है। इसलिए तुम्हे जिस वस्तुकी इच्छा हो वह मुझसे मांग ले जिस से कि मेरा समागम तेरे लिए सफल हो ।

प्राणनाथ ! मैंने मलयादेवी से कहा— 'हे महा-देवी ! यदि आप सचमुच ही मेरी सहायक हैं तो मेरे पुत्रादि सन्तान नही है जिसके बिना हमारा विशाल राज्य भी निराधार है। गृहस्थियो का गृहससार पुत्र आदि के बिना शोभा नही पाता अतः प्रसन्न हो कर मुझे पुत्र-प्राप्ति का वरदान दीजिये ।'

यह बात सुनते ही राजा उत्सुक हो बीच ही मे बोल उठा—'हे प्रिय वल्लभे ! उस परोपकारी देवी ने तुझे इस बात का क्या उत्तर दिया ?' रानी बोली स्वामिन् ! उस देवी ने खुश होकर मुझसे कहा— 'भद्रे ! तुझे पुत्र पुत्री रूप एक युगल (जोड़ा) थोड़े ही समय मे प्राप्त होगा। इतने दिनो तक तेरे पति के दुश्मन इस व्यन्तर देव ने ही सन्तति का नि-रोध किया था। अब मैं उस अपने सेवक व्यन्तर देव को तुम्हारा नुकसान या तुम्हे हैरान करने से रोक

दूँगी।'

यह वचन सुन कर राजा के हृदय में हर्ष का पार न रहा। उसने रानी की बहुत प्रशंसा की और कहा—हे साध्वी, प्रिये ! तुझे बड़ी श्रेष्ठ बुद्धि सूझी; तुमने बहुत अच्छा वरदान मांगा। इससे तूने मेरे वश का उद्धार किया। और मन की चिन्ता भी दूर कर दी। प्यारी ! तेरे सिवा मेरे दु.ख मे हिस्सा लेनेवाला और कौन हो सकता है ? प्रिये ! ऐसी सकट की स्थिति में जो तुझे सन्तान सम्बन्धी चिन्ता दूर करने को बात याद आई यही हमारे भाग्योदय का सूचक प्रमाण है।

क्या मलयादेवी ने और भी कुछ उपकार किया है ? रानी ने कहा—जी हा, यह लक्ष्मीपुञ्ज नामक मोतियो का हार उसी महादेवी ने अपने हाथ से मेरे गले में डाला है और कहा है कि यह दुर्लभ हार महा प्रभावशाली है। गले मे निरतर धारण करने से शुभ फलदायक होता है। इस हार के प्रभाव से तुझे अति प्रभावशाली सन्तान प्राप्त होगी और नित्य ही तुम्हारे

मनोरथ पूर्ण होते रहेंगे।

हे स्वामिन् ! इसके बाद मैंने मलयादेवी से पूछा —जिस देव ने मुझे इस पहाड़ पर ला कर छोड़ा है वह इस समय कहां गया ? देवी ने कहा— भद्रे ! तुझे वह पर्वत पर छोड़ कर वह देव वापस चन्द्रावती नगरी मे ही गया है और तेरे स्थान पर तुम जैसा ही एक मृतक शरीर बना कर गुप्त रूप से वही रहा हुआ है। तेरा पति तेरे जीवित शरीर को अकस्मात् निर्जीव देख कर इस समय जिस दुःख का अनुभव कर रहा है उसका मैं वर्णन नही कर सकती। राजा को व्यन्तरदेव की माया का पता नहीं लग सका। इसी कारण वह उस बनावटी मुर्दे को रानी समझ कर महान् विलाप कर रहा है।

आपका दु.ख में होना सुन कर मैं काँप उठी। मैंने तुरंत ही देवी से प्रश्न किया कि मेरे स्वामी मेरे वियोग में जीवित रहेगे या नहीं और मुझे वह कब मिलेंगे ? देवी ने कहा—भद्रे ! सात प्रहर के बाद दुःसह पीड़ा को सहता हुआ राजा तुझे जीवित ही

मिलेगा। मैं देवी से यह पूछना ही चाहती थी कि वे मुझे कब मिलेगे; इतनेही में दासी सहित आकाश मार्ग से वहाँ पर एक विद्याधरी आई। उसके आते ही मलयादेवी वहां से अकस्मात् अदृश्य हो गई।



(१०)
जो होता है वह अच्छे के लिए

मुझे वहाँ पर अकेली देख कर वह विद्याधरी मेरे पास आई और विस्मय चित्त से मुझसे पूछने लगी कि—हे भद्रे ! इस निर्जन पहाड़ पर सुन्दर रूप वाली तू अकेली कौन है ? उसके उत्तर में मैंने सब हाल कह सुनाया। मेरी बात सुन कर खेदपूर्वक उस विद्याधरी ने कहा—अहो ! विधि की विचित्रता ! ऐसी रूपवती, उत्तम कुल में पैदा होने वाली और राजा की रानी होकर भी निर्जन पहाड़ पर सकट में पडी है।

हे शुभे ! मैं तुझे इसी वक्त तेरी चन्द्रावती में पहुंचा आती परन्तु मुझे इस पहाड़ पर अभी कोई विद्या

सिद्ध करनी है। मैं इस वक्त उस विद्या का आराधन न करूँ तो वह सिद्ध न हो सकेगी। मैं अब दोनों ओर से संकट में पड़ गई हूँ। इसीलिए मैं तुझे इस समय तेरी नगरी में नही पहुचा पाऊँगी। इसी समय मेरा पति भी मेरे पीछे ही आने वाला है। वह तेरा ऐसा सुन्दर रूप देख कर तेरा शील खण्डित करेगा या तुझे सदा के लिए पत्नी बना कर रखेगा तो मुझे भी सौत का महान् दु ख भोगना पड़ेगा। इसलिए हे भद्रे तू मेरे साथ चल, मै तुझे किसी जगह अच्छी तरह से छिपा दूँ!

इस प्रकार कह कर वह बडे जोशीले प्रवाह में बहती हुई मुझे उस नदी के किनारे ले गई। उस समय भय के मारे मेरा सारा शरीर कापने लगा। मुझे शंका हो रही थी कि कही यह विद्याधरी मार डालेगी अथवा वृक्ष पर लटका देगी या बहती हुई नदी मे मुझे धकेल देगी।

नदी के किनारे एक सूखा हुआ बडा लक्कड़ पड़ा था। विद्याधरी ने अपनी विद्या-शक्ति से उस लक्कड़ के

दो लम्बे विभाग किये। एक मनुष्य उसमें अच्छीतरह समा जाय इतने प्रमाण में उसे पोला किया। फिर कपूर, कस्तूरी आदि अनेक प्रकार के सुगन्धित द्रव्यों का मेरे बदन पर विलेपन करके वह विद्याधरी मुझसे कहने लगी—'हे भद्रे ! इधर आ मैं तेरे शील की रक्षा करूँ।' यों कह कर मुझे उस लकड़े की विवर में सुला कर उसने मुझ पर उस काष्ट की दूसरी फाड़ ढक दी। इसके बाद क्या बनाव बना सो गर्भावास में रहे हुए भ्रूण के समान मुझे कुछ भी पता नहीं।

पूर्व पुण्य के उदय से यह काष्ठ बहता हुआ यही आ पहुँचा और आपने मुझे उसमें से निकाल लिया, बस यही मेरा वृत्तान्त है।

राजा ने भी रानी के पूछने पर यहां पर सबके एकत्रित होने का तमाम हाल कह सुनाया। राजा वीरधवल सुबुद्धि प्रधान की तरफ नजर करके बोला—मन्त्रीवर ! उस विद्याधरी ने रानी को इस काष्ठ-विवर में क्यों डाला होगा और काष्ठस्तम्भ यहां कैसे आ गया ?

मन्त्री बोला—महाराज ! मेरा अनुमान है कि सपत्नी होने की शंका से विद्याधरी ने रानी को इस काष्ट विवर में डाला होगा और काष्ठ को मजबूत बन्धनो से बाँध कर उस तरफ से आने वाली इस गोला नदी के प्रवाह में इस काष्ठस्तम्भ को बहा दिया होगा। यह काष्ठस्तम्भ नदी के जोरदार बहाव में तैरता हुआ हमारी पुण्यवानी से यहाँ आ पहुचा है। विद्याधरीका चाहे जो आशय हो तथापि उसका किया हुआ प्रयत्न हमारे लिए तो सुखरूप ही निकला है। रानी से जो देवी ने कहा था कि तुम सात पहर बाद अपने स्वामी से मिलोगी, वह देवी का वाक्य सत्य ही हुआ।

राजा—"हाँ" देवी का वचन तो अन्यथा नही हो सकता, परन्तु उस मायावी व्यन्तर देव का प्रपञ्च हमें कुछ भी मालूम न पड़ा कि जिसने थोड़े ही समय में राज्यवंश को क्षय करने का प्रयत्न किया था। इस पर मलयादेवी ने महान् उपकार किया है। उसकी कृपा से कुल में कुशलता और पुत्रपुत्री का वरदान

मिला तथा उस व्यन्तरदेव का उपद्रव भी नष्ट हुआ। सच पूछो तो इन तमाम शुभ होने का कारण रानी का अपहरण ही रहा है। जिस प्रकार कड़वी औषधि से तुरन्त ही रोग दूर हो जाता है वैसे ही रानी का दुःखदायी अपहरण अन्त में हमें सब तरह से सुखरूप ही रहा।

काष्ठस्तम्भ के उन दोनों हिस्सों को गोला नदी के भूषण रूप भट्टारिका देवी के मन्दिर के पास में रखवा दिया। मध्यान्हका समय हो गया था, भूख से रानी का मुखकमल कुम्हला रहा था। प्रधानमन्त्री ने कहा—कृपानाथ! समय बहुत हो चुका है। अब हम कृतार्थ हो गये हैं। भोजन का समय बीत रहा है। भूख से महारानी भी कुम्हलाई-सी दिखाई दे रही है और आप भी कल से अन्न-जल रहित हैं। अतः अब आप शीघ्र ही शहर में चल कर स्नान-भोजनादि कर के दुःख को तिलाञ्जलि दे! प्रधान के वचन सुन कर महाराजा वीरधवल शहर में प्रवेश करने के लिए तैयार हो गये। प्रजाजनों ने शहर के रास्ते व बाजार

सजा दिये थे। राजा और रानी दोनो हाथी पर बैठ कर राजमहल को चल दिये।

इस समय अनेक बाजो के नाद से आकाश गूंज रहा था। चारण लोग वरदावली बोल रहे थे। महाराज मांगलिक और आशीर्वाद के शब्द सुनते हुए एवं याचकों को दान देते हुए राजमहल में आ पहुँचे। महल में आ कर सामन्त और नागरिकादि सर्व जनों को सन्तोषित कर महाराजा ने विसर्जन किया। वे लोग भी महाराज को नमस्कार कर हर्ष प्राप्त करते हुए अपने-अपने घर पर पहुचे। राजा और रानी ने स्नान करके ऋषभदेव प्रभु की पूजा की और भोजन किया तथा प्रजाजनों ने खुशी जाहिर करने के निमित्त उस दिन महाराज के पुनर्जन्म का महोत्सव किया।



(११)

मलयासुन्दरी और मलयकुमार का जन्म

पृथ्वी पर सर्वत्र चन्द्रमा की चांदनी पसर रही थी। महाराजा वीरधवल महारानी चम्पकमाला के महल मे आ कर आराम कर रहे थे। नजदीक में रहे हुए बगीचे से शरीर को सुख देने वाले मन्द-मन्द सुगन्धित पवन के झोके आ रहे थे। शैया पर बिछाये हुए पुष्पों की सुगन्ध महक रही थी। सारे महल में शान्ति का साम्राज्य था। उस समय विरह की वेदनाएँ नष्ट हो जाने से दम्पति अपूर्व सुखसागर में डूब रहे थे। बहुत समय तक प्रेम और हास्य-विनोद की बाते कर परिश्रम से थके हुए महाराज और महारानी

सुख-निद्रा मे विलीन हो गये ।

पुण्य के प्रभाव और मलयादेवी के वरदान से महारानी चम्पकमाला ने उस रात्रि में गर्भ धारण किया । ज्यों ज्यों गर्भ के चिन्ह विशेष प्रकट होने लगे त्यों - त्यों राजा हर्ष से पुलकित होने लगा और महारानी गर्भ के नियमों का पालन करती हुई सुख-पूर्वक दिन व्यतीत करने लगी । गर्भ में उत्तम प्राणी आने के कारण रानी को शुभ इच्छाएँ पैदा हुईं और राजा ने उन सबकी पूर्ति की ।

क्रम से नौ मास पूर्ण होने पर शुभलग्न में महा-रानी चम्पकमालाने सुखपूर्वक महान् तेजस्वी पुत्र-पुत्री युगल को जन्म दिया । तुरन्त ही महाराजा वीरधवल को वेगवती दासी ने राज्यसभा में आकर पुत्र और पुत्री के जन्म की वधाई दी । राजा के हर्ष का पार न रहा । मुकुट को छोड़ कर उसने अपने शरीर पर धारण किये हुए तमाम आभूषण उतार कर प्रतिदान में दासी वेगवती को दे दिये और उस रोज से उसका दासीपन से भी छुटकारा कर दिया । देश भर में हर्षो-

त्सव मनाया गया। याचकों को जी-भर कर खूब दान दिया गया। पापारम्भ के व्यापार वन्द कराये गये। कैदियों को छोड़ दिया गया। तमाम जीवों को अभय दान दिया गया। शहर को अनेक प्रकार से सजाया गया। महाराज को अधिक आयु में सन्तान होने से प्रजा को भी आनन्द का पार न रहा।

इस प्रकार दस दिन पर्यन्त आनन्दोत्सव कर सगे सम्बन्धी और प्रजाजनो को एक प्रीतिभोज दिया। जनता के समक्ष मलयादेवी का वरदान सफल होने से उसका नाम याद रहे इस कारण महाराज ने हर्षपूर्वक पुत्र का नाम मलयकेतु और पुत्री का नाम मलया-सुन्दरी रखा।

ज्यों-ज्यों कुमार और कुमारी वृद्धि को प्राप्त होने लगे त्यों-त्यों चन्द्रमा से समुद्र की तरंगो के समान राजा और रानी के मनोरथ बढ़ने लगे। धीरे - धीरे वृद्धि पाते हुए मलयकेतु और मलयासुन्दरी अब विद्या ग्रहण करने की वय को प्राप्त हुए। विद्या के बिना राजकुल में पैदा होकर मनुष्य सच्ची शोभा नहीं

पाता, यह समझ कर बालकों के हितैषी महाराजा वीरधवल ने एक धुरन्धर विद्वान् कलाचार्य को बुला कर उसके पास राजकुमार और राजकुमारी को विद्याभ्यासके लिए रख दिये। कुमार व कुमारी ने पूर्व पुण्य के उदय से थोडे ही समय में पहले याद की हुई विद्या के समान तमाम कलाओं का सम्पादन कर लिया। राजकुमार अश्वक्रीड़ा, हाथियों से लड़ना व तलवारबाजी में अत्यन्त निपुण हो चुका था। अपनी कला की और भी उन्नति करने की इच्छा से धनुष-बाण लेकर वह जब कभी लक्ष्यवेध करता था तब उसका निशाना देख कर राजकुल के बड़े-बड़े योद्धा हर्ष से चकित होकर दाँतो तले अगुली दबाया करते।

मलयासुन्दरी का हृदय स्वभाव से ही करुणा-रूप था। वह सरल स्वभाव की थी। उसके मन व शरीर में कोमलता ने निवास किया हुआ था। माता पिता की संस्कारिता के कारण उसकी बचपन से ही सद्धर्म में रुचि थी। वह अपने सद्गुणो के कारण समस्त राजकुटुम्ब को प्राणो से भी अधिक प्यारी थी

धीरे-धीरे अब उसने वाल्यावस्था का परित्याग कर दिया।

अब युवावस्था में राजकुमारीके शरीर की शोभा अद्वितीय प्रतीत होती थी। उसके शरीरके अंग-प्रत्यंग विकास को प्राप्त हो चुके थे। नेत्रों को आनन्द देने वाले उसके शरीर की लावण्यता दिनप्रतिदिन वढती जा रही थी। उसके लम्वे-लम्वे घुँघराले काले केश अत्यन्त मनोहर मालूम होते थे। कमल के समान उसकी वड़ी-वड़ी स्निग्ध आँखें देखने वालो के चित्त को हरण करती थी। अष्टमी के अर्धचन्द्राकार समान कपाल के नीचे कमान की तरह टेढ़ी भोहें वड़ी ही सुन्दर मालूम होती थीं। साधुपुरुषों की चित्तवृत्ति के समान सरल नासिका उसके मुखमण्डल की शोभा में अधिक वृद्धि कर रही थी। शुभ्र मोतियों जैसी दंत-पंक्ति उसके लाल-लाल होठो पर अतीव सुन्दर प्रकाश डालती थी। उसकी ग्रीवा तीन रेखाओं से शङ्ख के समान शोभती थी। वक्षस्थल पर उभरा हुआ कठिन स्तनयुगल, उसके नवयौवन के आगमन को सूचित

कर रहा था। उसकी लम्बी-लम्बी कोमल भुजाएँ मृणाल दण्ड को भी लज्जित कर देती थी। उसके शरीर का मध्य भाग सिंह की कमर के समान पतला और सुन्दर दीखता था। हथिनी की गति की भाँति मन्द-मन्द किन्तु विलास वाली उसकी चाल युवकों के मन को मोहित कर देने वाली थी।



(१२)

चन्द्रावती में महाबल का गुप्त प्रवास

दोपहर का समय था। महाराजा वीरधवल की राजसभा भरी हुई थी। इतने में द्वारपाल ने आ कर महाराजा को प्रणाम करते हुए कहा— "सरकार! राजद्वार पर पृथ्वीस्थानपुर नगर से राजा सूरपाल के सेनापति और उसके साथी आये हुए है। वे दरबारमें आना चाहते हैं। हुक्म मिला, उन्हें यहां ले आओ। महाराजा वीरधवल की आज्ञा पा कर द्वारपाल पृथ्वी स्थानपुर से आये हुए मेहमानों को राज्यसभा में ले आया। आगन्तुक सेनापति और उसके सहचारी राज-पुरुष, महाराज वीरधवल के सामने पृथ्वीस्थानपुर से

लाई हुई वस्तुओं का उपहार रख कर उन्हें झुक कर नमस्कार किया और सबके सब अदब से एक तरफ खडे हो गये। राजा वीरधवल ने बहुमानपूर्वक उनके पुरस्कार को स्वीकार कर, उन सबको बैठने के लिए आसन दिये।

प्रसन्न हो कर महाराजा वीरधवल ने प्रश्न किया 'हमारे परम मित्र महाराजा सूरपाल के राज्य और परिवार में सब कुशल है न ?' हाथ जोड़ कर सेनापति ने नम्रता से उत्तर दिया महाराज ! धर्म के प्रताप और आप जैसे मित्र राजा की स्नेहभरी शुभदृष्टि से राज्य में सर्वत्र आनन्द है। महाराज सूरपाल ने आप के परिवार की कुशलता पूछी है।

सेनापति के साथ आये हुए मनुष्यों की तरफ नजर फेंकते हुए महाराज वीरधवल ने सेनापति के नजदीक बैठे हुए एक महान् तेजस्वी, सौम्यमूर्ति भाग्य शाली सुन्दर युवक को देखा। उसे देखते ही सहसा राजा की मनोवृत्ति उसकी ओर आकर्षित हो गई। अत. महाराज ने प्रश्न किया— 'सेनापतिजी ! यह

तुम्हारे साथका युवक कौन है ? इसकी सुन्दर आकृति तो राजकुमारों के समान तेजस्वी मालूम होती है। यह बात सुनते ही उस युवक का संकेत पा कर चतुर सेनापति बोल उठा—महाराज ! यह तो मेरा छोटा भाई है। चन्द्रावती नगरी को देखने की इच्छा से हमारे साथ चला आया है। इस युवक को देख कर राजा के मन में कुछ और ही भाव पैदा हुआ था। कारण कि राजकुमारी मलयासुन्दरीके युवावस्था को प्राप्त होने से राजा अपनी चिन्ता को दूर करने के विचार में था। परन्तु राजकुमार नहीं है, यह जान कर अपने विचार को मन में दबा दिया।

राजकार्य निवेदन करने के बाद राजा ने उन्हें सन्मान सहित अतिथिगृह में ठहरा दिया। उस भवन में वे सबके सब जा ठहरे। राज्यसभा विसर्जन हुई। सभा से बाहर आने पर उस युवक ने अपने सम्बन्ध में उत्तर देनेवाले सेनापति की प्रसन्नतापूर्वक बड़ी प्रशंसा की। क्यों कि यह बनावटी उत्तर देने का कारण उस युवक का चन्द्रावती में गुप्त प्रवास था। उस सुन्दर

महल में उतारा किये बाद वह युवक अपने साथियों को कह कर अकेला ही चन्द्रावती नगरी की शोभा देखने के लिए निकला।

पाठकगण ध्यान रक्खे! पृथ्वीस्थानपुर विशाल दक्षिण देश मे बसता था मगर वह भी अपनी शोभा और समृद्धि में चन्द्रावती नगरी से कम नही था। यह शहर भी गोलानदी के किनारे ही बसा हुआ था। शहर के चारों तरफ सघन वृक्षों के झुण्ड शहर की शोभा बढ़ा रहे थे। शहर के नजदीक धनञ्जय नामक यक्ष का मन्दिर था। आसपास में कुछ पहाड़ी प्रदेश भी था। समीपवर्ती पर्वतों में बहुत-सी गुफाएँ भी दिखाई पड़ती थी जिनका प्रयोग तपस्वी, योगी पुरुष या चोर डाकू आदि करते थे। इस सुन्दर और समृद्धिशाली नगर में क्षत्रियवंशी महाराज सूरपाल राज्य करते थे। वीरधवल और सूरपाल राजामें पारस्परिक मित्रता थी। अपनी मित्रता को बढ़ाने के लिए समय समय पर वे आपस में एक दूसरे को श्रेष्ठ वस्तुओं की भेट भेजा करते थे। कार्यप्रसङ्ग पर वे एक दूसरे को

आपस में सहायता भी किया करते थे।

एक दिन महाराज सूरपाल ने वहुत-सी श्रेष्ठ वस्तुएँ देकर कुछ राजकार्य के निमित्त अपने सेनापति को चन्द्रावती में महाराज वीरधवल के पास भेजा था उस समय कई मनुष्यों के साथ राजकुमार महावलभी पिता की आज्ञा लेकर गुप्त रूप से सादे वेश मे चन्द्रावती की शोभा देखने के लिए आया था।

जिस तेजस्वी युवक के विषय में पाठक महाशय अभी ही पढ़ आये है वह इसी पृथ्वीस्थान नगरका राजकुमार महावल है। कुमारमहावल अनेक विद्याओं में अतीव निपुण था। उसके शरीर की सुन्दरता और चेहरे की कान्ति देखने वाले को अपनी ओर वरवस आकर्षित करती थी।



(१३)

राजकुमारी से प्रेम

पूर्व परिच्छेद में कथन किये अनुसार राजकुमार अपने साथियों से पूछ कर चन्द्रावती की शोभा देखने के लिए निकला है। शहर के राजमार्ग और चौराहे देखता हुआ तथा सुन्दर राजप्रासादों की शोभा का निरीक्षण करता हुआ वह मुख्य जनाने राजमहल के पीछे की ओर आ पहुंचा। उस महल के पिछले भाग की खिड़की में बैठी हुई एक सुन्दर युवती शहर की शोभा देख रही थी। देखते-देखते उस राजमहल के नीचे चलते हुए राजकुमार पर उसकी दृष्टि जापड़ी। कामदेव के समान सुन्दर रूपवान और अपने समान वय वाले उस राजकुमार को देख कर, वह सुन्दरी

विचार करने लगी, यह सुन्दर आकृति वाला युवक कौन होगा ? साक्षात् कामदेव ही तो नहीं है ? इसके मुख का तेज और सुन्दर चमकीली आंखे, विशाल वक्षस्थल एवं लम्बी भुजाएँ, मूँगे के समान रक्तवर्ण से होंठ, कैसे खुबसूरत मालूम होते है। सर्वांग सुन्दर राज-कुमार को देख कर वह युवती एकटक नजर से देखती हुई चित्रवत् स्तब्ध रह गई।

देवयोग से राजकुमार की दृष्टि भी अचानक ही खिड़की में बैठी उस युवती पर जा पड़ी। उसे देखते ही कुछ ठसक कर वह विचार करने लगा—'अहा ! क्या यह स्वर्ग से उतरी हुई कोई अप्सरा है ? यह अनुरक्त दृष्टि से मेरी ओर निहार रही है। यह कुँआरी होगी या विवाहिता ? इधर उस युवती के मन में भी यही विचार पैदा हुआ। प्रेमभरी दृष्टि से मेरी तरफ देखने वाला यह कोई राजकुमार है ? इसे देखते ही मेरा दिल इतना विवश क्यों होता है ? क्या यह कोई मेरे पूर्वजन्म का स्नेही होगा ! इस प्रकार अनेक विचारों में उलझी हुई उस राजकुमारी ने एक

भोजपत्र पर दो श्लोक लिख कर महल के नीचे खड़े उस युवक की तरफ डाले। रोमांचित होकर राजकुमार ने नीचे गिरे हुए पत्र को उठा लिया और उसे मन में पढ़ा। पत्र में लिखा था—

कोसित्व तव किं नामक्त वास्तव्योऽसि सुन्दर !
कथंयत् त्वयकाजह्रे मनो मे क्षिपता दृशं ॥ १ ॥
अहं तु वीरधवलभूपते स्तनया कनी।
त्वदीयें हृदये वर्ते नाम्ना मलया सुन्दरी ॥ २ ॥

—हे सुन्दर आप कौन है ? आपका नाम क्या और आप कहाँ के रहने वाले है ? यह बतलाइये ! मुझ पर दृष्टि डाल कर आपने मेरा मन चुरा लिया है। मैं वीरधवल राजा की कुँआरी पुत्री हूँ। आपके हृदय के साथ मेरा हृदय मिल कर एकाकार हो गया है। मेरा नाम मलयासुन्दरी है।

इस पत्र को पढ़ कर राजकुमार योगी के समान एकाग्र चित्त से टकटकी लगा कर राजकुमारी को देखने लगा। चार आँखे होते ही दोनों का दिल एक दूसरे की ओर खिंच गया और कुमार को वहाँ से आगे

कदम बढ़ाना कठिन हो गया। राजकुमारीकी प्रेमभरी दृष्टि ने उसको मन्त्रमुग्ध साँप के समान स्तम्भित-सा कर दिया था। चित्रित मूर्तिवत् स्थिर हो कर राजकुमार विचारने लगा। अहा! इस चतुर राजकुमारी ने साहस धारण कर अपना मनोगत भाव और अपना परिचय देदिया परन्तु इसके पूछे हुए सवाल का उत्तर मुझे किस प्रकार देना चाहिये? कुमार इसी विचार में लगा हुआ था, इतने ही में एक पुरुष आया और कुमार को देख कर कहने लगा—राजकुमार! शहर में घूमना छोड़ कर अब आप वापिस मुकाम पर पधारिये। क्यो कि आज ही अपने नगर को प्रयाण करना है। जिस राजकार्य हेतु यहां आये थे वह कार्य सफल हो गया है।

मनोगत भाव को दवा कर कुमार बोला—अहा! देखो, यह मकान कैसे शोभा दे रहे हैं? इस नगरी का किला कितना मजवूत है? राजमहलो ने इस नगरी की शोभा अत्यन्त बढ़ा रखी है। मुझे तो यहां अभी बहुत कुछ देखना है। अभी तो मैं केवल इन

मकानो को ही देख पाया हूँ। तुम वापिस लौट चलने की जल्दी कर रहे हो! आने वाले पुरुष ने कहा—राजकुमार! सेनापति का कहना है कि कुछ आवश्यक प्रसंग होने से हमें इसी समय अपने देश को चलना है इसलिए आप जल्दी चलिये। यद्यपि इस समय वहां से कदम उठाना कुमार के लिए अत्यन्त दुष्कर था, तथापि विवश होकर उसे सेवक के साथ वापिस जाना ही पड़ा। वह मन ही मन सोचने लगा—मेरी कितनी कमजोरी है? मैं कौन हूँ, इस प्रश्न का उत्तार भी मैं राजकुमारी को नहीं दे सका! धिक्कार है मेरी कला-निपुणता को और मेरो तमाम बुद्धिमता को। देश से इतनी दूर आकर भी अगर मैं कुमारी से न मिलसका तो अब फिर उसका मिलाप मुझसे कैसे होगा? इस समय रात्रि हो गई है, चारो तरफ अन्धकार छा रहा है। मेरे साथी भी अभी तैयारी में लगे है, जब तक ये तैयार हों तब तक मैं शीघ्र जा कर राजकुमारी स मिल आऊँ और अपना परिचय भी दे आऊँ!

पूर्वोक्त निश्चय कर किसी को कहे बिना कुमार

गुप्त रीति से वहा से चल दिया। वह शीघ्र गति से उसी महल के नीचे जा पहुँचा जहां से वापिस गया था। महल के पहले मंजिल की खिड़की खुली हुई थी और वह किले की दीवार के साथ ही लगती थी। दो तीन मंजिल के ऊपर रहने वाली कुमारी के साथ बातचीत करना सुलभ कार्य नही था। तथा विशेष अन्धकार होने से दृष्टि का विषय भी आच्छादित हो चुका था। अर्थात् महल की जिस खिड़की में राजकुमारी के साथ संकेतादि हुए थे वहा अब अँधेरा हो जाने से नजर नही पहुंचती थी, इसलिए मलयासुन्दरी के मिलाप की आशा व्यर्थ प्रतीत होती थी। परन्तु वह हिम्मतवान पुरुष निराश न हुआ। अब साहस किये विना काम नही चलेगा, यह सोच कर एक ही छलांग मे किले की दीवार पर जा चढ़ा। वहां से पास ही मे पहले मजिल की खिड़की खुली हुई थी; राजकुमार ने उसी खिड़की से अन्दर प्रवेश किया। जिस खिड़की से उसने प्रवेश किया था वह रास्ता राजा वीरधवल की दूसरी रानी कनकवती के महलों

में जाता था और उसके ऊपर की मंजिल में राजकुमारी मलयासुन्दरी रहती थी : संयोग से इस वक्त कनकवती के महल मे एक भी दास-दासी न थी। इस अँधेरी रात में अपने महल में प्रवेश किये हुए राजकुमार को देख कर रानी कनकवती सोचने लगी कि अहा ! ऐसे सुन्दर रूप वाला और इतना साहसी पुरुष आज तक मैं ने कभी नही देखा ! कनकवतीने खिड़की द्वारा प्रवेश करते हुए राजकुमार को प्रथम नही देखा था, इससे वह सोचने लगी कि इतने सारे पहरेदार होते हुए भी इस पुरुषने यहा कैसे प्रवेश किया होगा? सचमुच ही यह कोई विद्याधर या महान् पुरुष मालूम होता है। यह किसीभी प्रयोजन से प्रसन्नता धारण किये बेधड़क चला आ रहा है। इस प्रकार विचार करती हुई राजवल्लभा कुमार के रूप से मोहित हो उसके रास्ते में खड़ी होकर उसे कहने लगी; हे नरोत्तम ! सुख से आइये, यहां इस आसन पर बैठिये और प्रसन्न होकर मेरे मनोरथ को पूर्ण करिये।

रानी के वचन सुन कर राजकुमार चकित होकर

विचार में पड़ गया; वह सोचने लगा कि यह कोई राजा की रानी मालूम होती है या उसकी बहिन होगी। ऐसे खतरनाक स्थान में आ कर मनोवृत्ति पर संयम न रखा जाय तो स्वदारा सन्तोषव्रत कैसे रह सकता है ? एवं इष्टकार्य की सिद्धी होना भी असंभव हो जायगा। मैं इतना साहस कर सिर्फ मलयासुन्दरी से मिल कर उसके प्रश्न का उत्तार देने के लिए ही आया हूं, परन्तु किसी बुरी भावना को साधने के लिए नही ! इसलिए मुझे इस स्थान में सावधान रहना चाहिये। यद्यपि राजकुमारी मुझे दिल से चाहती है और मैं भी उसके स्नेहबन्धन में बँध चुका हूं तथापि उसके माता-पिता की सहमति विना मैं उसके साथ कदापि विवाह नहीं करूंगा। जब मुझसे प्रेम करने वाली उस कुमारी स्त्री की तरफ भी मेरी ऐसी दृढ़ भावना है तो विवाहित परस्त्री की तरफ़ मेरा मन विचलित न होना चाहिये। यह विचार कर कुमार ने समयानुसार अपना कार्य सिद्ध करने हेतु रानी कनकवती से कहा कि मैं मलयासुन्दरी के वास्ते कोई वस्तु

ले कर आया हूँ अतः मुझे उसका निवासस्थान बतलाइये। उसे वह चीज देकर वापिस लौटते समय आप जैसा कहेंगी वैसा किया जायगा। कनकवती ने कुमार का कथन मान कर उसे ऊपर मलयासुन्दरी के महल में जाने का रास्ता बतलाया। कुमार ऊपर की मजिल पर चढ़ गया। राजपत्नी कनकवती भी धीरे-धीरे उसके पीछे चल कर, दरवाजे के पास जा कर खड़ी हो गई। ये दोनों आपस में क्या बाते करते हैं यह सुनने के लिए आतुर हो रही थी, कुमार को यह बात मालूम न रही।



(१४)

मलयासुन्दरी से गुप्त मिलाप

राजकुमार के जाने के बाद राजकुमारी मलया-सुन्दरी, स्थिर चित्त से उसी खिड़की में बैठी हुई महाबलकुमार के मार्ग की ओर दृष्टि जमाये उसीका ध्यान कर रही थी। अँधेरा हो जाने के कारण महा-बलकुमार के मिलने की आशा यद्यपि उसके हृदय में शिथिल हो चुकी थी, तथापि कुमार के साथ गया हुआ उसका दिल वापस नहीं आ रहा था, वह खोये हुए धन को वापस पाने की आशा वाले व्यक्ति के समान अन्धकार होने पर भी उसी तरफ देख रही थी। वह उसके ध्यान में ऐसी निमग्न हो गई कि कुमार के अन्दर आ जाने पर भी उसका ध्यान भंग

न हुआ। कुमार उसके पास जा खड़ा हुआ। फिर भी ध्यानमग्न योगी की तरह उसे कुमार का आना मालूम न हुआ।

उसकी हालत को देख कर कुमार बोल उठा "मृगाक्षी। इधर देखो। मैं तुम्हारे हृदय में से निकल कर तुम्हारे सन्मुख खड़ा हूं। कानों को अमृत समान लगने वाले यह वचन सुनते ही अपनी गर्दन पीछे घुमा कर देखा तो उसके चित्त का चोर राजकुमार उसके पास खड़ा दिखाई दिया। उसे देखते ही मलयासुन्दरी लज्जा से विनम्र हो, सन्मुख खड़ी हो गई। जिस प्रकार रातभर की कुम्हलाई हुई कमलिनी प्रातः सूर्य का दर्शन कर विकसित हो जाती है वैसे ही कुमार को देख कर राजकुमारी प्रफुल्लित हो गई, परन्तु लज्जा के कारण वह कुछ भी बोल न पाई। कुमार फिर बोला —राजकुमारी, मैं ऐसे भयानक वातावरण में केवल तुम्हारे प्रश्न का उत्तर यानी अपना परिचय देने के लिए ही आया हूँ। मैं पृथ्वीस्थानपुर के महाराजा सूरपाल और महारानी पद्मावती का पुत्र हूँ। मेरा

नाम महाबल कुमार है। इस नगरी की शोभा देखने के लिए गुप्त तरीके से राज्यकर्मचारियों के साथ यहा आया हुआ हूं अर्थात् यहाँ की जनता और तुम्हारे पिता महाराज वीरधवल को मेरे आने का कोई पता नही है।

आश्चर्यपूर्ण तुम्हारी इस नगरी को देखते हुए मैं सन्ध्या समय तुम्हारे महल के नीचे आ पहुंचा उस वक्त जन्मान्तर के प्रेम को प्रकट करने वाला दृष्टि-मिलाप हुआ। इसके बाद जो कुछ हुआ है उसका हम दोनों को अनुभव है ही। इस समय ऐसे संकटपूर्ण स्थान में तुमसे मिलने के लिए तुम्हारा प्रेम ही खीच लाया है। अपने साथियों को तैयारी करते हुए छोड़ आया हूं क्यों कि इसी समय हमें पृथ्वीस्थानपुर जाना है। अच्छा, तो अब मैं जा रहा हूं, आज्ञा दो।

कुमार इसी समय वापस चला जायगा यह सोच कर राजकुमारी लज्जा और मौन छोड़ कर बोली—राजकुमार! अब मैं आपको यहां से वापस नही जाने दूंगी। आपके बिना मैं प्राण धारण करने के लिए

असमर्थ हूँ। यदि आप इतने निष्ठुर हो, मेरी अवज्ञा कर चले जायँगे तो मैं अपने प्राणों को त्याग दूँगी। इसलिए आप मुझ पर दया करके यहां ही रहिये। मुझे आपके दर्शन मात्र से परम शान्ति प्राप्त होगी। राजकुमार! मैं आपका क्या स्वागत करूँ? मैं आज से जन्म पर्यन्त आपको अपनी आत्मा समर्पण करती हूं और यह लक्ष्मीपुञ्ज नामक हार आपको भेंट करती हूँ सो आप ग्रहण करें। यों कह कर राजकुमारी ने अपने हाथ से अपने प्रियतम महाबल के गले में वह देवीदत्त अलभ्य लक्ष्मीपुञ्ज हार पहना दिया। कुमार इस हार के बहाने मैंने आपके गले में यह वरमाला पहनाई है। इसलिए इस वक्त गन्धर्व विवाह कर आप मुझे अपने साथ ले चलें जिससे कि पारस्परिक वियोग का दुःख न सहना पड़े।

कुमार—राजकुमारी! तुम्हारा कहना उचित है। तुमने अपने मन का भाव प्रकट किया यह ठीक है, तथापि जनता के समक्ष माता-पिता की सहमति बिना इस प्रकार विवाह कर मैं तुम्हें साथ ले जाऊँ

यह कुलीन पुरुषों के लिए उचित नहीं है। ऐसा करने से मैं एक साधारण चोर के समान मनुष्यों की नजर से गिर जाऊँगा। ऐसे कार्यों में जल्दी करना उचित नहीं है। तुम शान्त चित्त से कुछ दिन तक यहां ही रहो। मैं तुम्हे वचन देता हूं कि घर जाकर ऐसा ही प्रयत्न करूँगा जिससे कि तुम्हारे मातापिता मेरे ही साथ तुम्हारा विवाह करें। कुमारी! अब धैर्य धारण करो और प्रसन्नचित्त से मुझे जाने की आज्ञा दो!



(१५)

कनकवती का षड़यन्त्र

भावी दम्पति पूर्वोक्त प्रकरण अनुसार आनंदमग्न हो एक-दूसरे से जुदा होने की तैयारी कर रहे थे। इतने में अकस्मात् उस कमरे के द्वार भड़ाक् से बन्द हो गये। यह देख सावधान हो कुमार बोला— 'द्वार किसने बन्द किये ?' राजकुमारी चकित हो विचार में पड़ी थी, इसी समय बाहर से कनकवती की कड़कती आवाज सुनाई दी। अरे दुष्ट महाबल ! तू मुझे ठग कर कुमारी से आ मिला ! याद रख मुझे धोखा देने का फल तुझे मिल जायगा। मलयासुन्दरी ने कहा— 'कुमार ! यह मेरी सौतेली माँ है और इसी महल के पहले मंजिलमें रहती है। मालूम होता है कि आपको

यहां आते हुए उसने देख लिया है, और इससे वह हम पर कोपायमान हो रही है। अहा! मेरी कितनी भयंकर भूल! मैंने उसे यहां आई हुई को बिल्कुल नहीं जाना; सम्भव है उसने हम दोनों में हुई बातों को भी सुन ली हों।

कुमार ने कहा—'सुन्दरी! जब मैं तुम्हारे पास आ रहा था उस वक्त इसने रास्ते में रोका था और कामातुर हो मुझसे विषय-याचना की थी। मै इसको असत्य उत्तर देकर तुम्हारे कमरे का रास्ता पूछ कर ऊपर आ गया। परन्तु मुझे यह पता न लगा कि खुफिया मनुष्य के समान मेरे पीछे आकर यह हमारा भेद जान लेगी। स्त्री-स्वभावानुसार यह हमपर जरूर ही कुछ न कुछ आफत पैदा करेगी। खैर, हरकत नहीं सब ठीक हो जायगा।

जिस समय महाबल और मलयासुन्दरी अपनी असावधानता का पश्चात्ताप कर रहे थे उस समय कनकवती ने उनके कमरे पर ताला लगाया और महाराजा वीरधवल के पास जाकर अपनी आँखों से देखा

तथा कानों से सुना हुआ सारा वृत्तान्त इस ढंग से कह सुनाया कि जिसे सुनते ही राजा एकदम क्रोधित हो उठा। कनकवती के मुख से अपनी पुत्री का स्वच्छन्दी आचरण सुनते ही राजाके नेत्र क्रोध से लाल हो गये। वह उसी वक्त अनेक सुभटों के साथ 'पकड़ो मारो— पकड़ो मारो' आदि शब्द बोलता हुआ तत्काल मलया-सुन्दरी के मकान के सामने आ पहुँचा। सुभटों ने महल को चारों ओर से घेर लिया।

दूर से अपने पिता के शब्द सुन कर भयभीत हो कर राजकुमारी थर्रा गई। उसके दुःख का पार न रहा, धैर्य छूट गया। ऐसी सुन्दर मुखाकृति वाले कुमार के प्राण कैसे बचेंगे ? इस नररत्न को आफत में डालने वाली मुझ विषकन्या को धिक्कार हो। हाय ! प्रथम मिलाप में ही मैं अपने प्यारे का प्राण लेने वाली पापन बनी। कुमारी को चिन्तासागर में डूबी हुई देख कर महाबल ने उसे धीरज दिया। सुन्दरी ! निश्चिन्त रहो, मेरा कोई भी बाल बांका नहीं कर सकता। जो मनुष्य ऐसे भयंकर स्थान में प्रवेश करने

का साहस रखता है उसके पास अपने रक्षण का भी अवश्य उपाय होता है ।

यों कह कर कुमार ने अपने पास से एक गुटिका निकाली और मलयासुन्दरी के देखते-देखते उसे अपने मुख में डाल लिया । महाबल ने आज दोपहर को ही राजसभा में महाराजा वीरधवल के पास बैठी हुई महारानी चम्पकमाला को देखा था, अतः गुटिका के प्रभाव से वैसा संकल्प करने से उसका रूप चम्पकमाला की शकल में तब्दील हो गया । अब वह साक्षात् चम्पकमाला बन कर मलयासुन्दरी के पास बैठ गया; मलयासुन्दरी उसका परिवर्तित अपनी माता का रूप देख कर आश्चर्य पाती हुई निर्भय हो शान्त चित्त से चुपचाप बैठ गई ।

राजाने ताला तुड़वा कर द्वार खोले और मलया के मकान में प्रवेश किया । अंदर घुसते ही महाराज वीरधवल ने मलयाकुमारी को अपनी माता चम्पक–माला के पास बैठी हुई देखी ।

यह देख कर राजा, कनकवती की तरफ देखता

हुआ बोला—'प्रिये ! तुमने मुझे क्या कहा था ? यहां तो उन बातों में से कुछभी मालूम नही हो रहा !

कनकवती ने कमरे में आकर चारों तरफ निगाह डाल कर अच्छी तरह देखा परन्तु अपनी माता के संग बैठी हुई मलयासुन्दरी के अतिरिक्त वहां कोई नजर नहीं आया।

कनकवती को सम्बोधित कर चम्पकमाला का रूप धारण करनेवाला महाबल बोला—'आओ आओ बहिन ! आज अकस्मात आप इस महल में कैसे ? क्या आज महाराज मुझ पर कोपायमान हैं ?

चम्पकमाला रानी को बोलती हुई देख कर वहा आने वाले तमाम मनुष्य कनकवती की तरफ घृणा की दृष्टि से देखने लगे। वे सब बोल उठे— सचमुच ही सौतनो की आपसी ईर्ष्या उनके निर्दोष बच्चो पर ही उतरती है, जिसका यह प्रत्यक्ष प्रमाण है।

लजायमान होकर कनकवती ने कहा—स्वामिन्! यहा पर आये हुए एक पुरुष को मेरे देखते हुए राजकुमारी ने लक्ष्मीपुञ्ज हार दे दिया है। आप उस

हार के बारे में पूछताछ करिये। यह बात सुनते ही स्त्री रूप महाबलकुमार ने अपने गले से हार उतार कर राजा को दिखा कर कहा—'क्या आप इसी हार को तलाश में यहां आये है ? उस हार को देख कर राजा की शंका सर्वथा दूर हो गई। कनकवती ईर्ष्या के कारण ही ऐसी बाते करती है, स्त्रियों में जरा भी विचार नहीं होता इत्यादि बोलता हुआ तमाम पुरुषो को साथ लेकर राजा अपने स्थान पर चला गया।

चपकमाला रानी इस समय एक अलग ही महल में थी। थोड़ी देर बाद जब उसको इस घटना का पता चला तो उसने सोचा कि बात बढ़ाने से पुत्री की लघुता होगी इसलिए उसने इस बात पर बिल्कुल ही लक्ष्य न दिया तथा इस विषय की उसने किसीसे चर्चा तक नहीं की।

इधर अपनी लघुता हुई देख रानी कनकवती दुखी मन सोचने लगी कि मैं स्वयं अपने हाथों से द्वार पर ताला लगा कर गई थी और वह वैसा ही मौजूद पाया फिर भी वह कुमार कैसे निकल गया ? जिसे प्रत्यक्ष

मैने अपनी आंखों से देखा था। क्या मुझे यह सब भ्रम हुआ था? हाय! सब मनुष्यों में मेरी कैसी निन्दा हो रही है! आज सबके सामने मैं झूठी असत्य बोलने वाली साबित हुई। किसी पूर्व जन्म की दुश्मन यह कुमारी ही मेरी लघुता का कारण है। इसको देखते, बोलते हुए देखकर मुझे उद्वेग होता है। मैं इसे संकट में डाल कर या प्राणदण्ड दिला कर जरूर बदला लूँगी। इस प्रकार बड़बड़ाती हुई वह अपने भवन में चली गई।

कोलाहल शान्त होने पर बड़ी सावधानी के साथ मलयासुन्दरी ने चारो तरफ देखभाल कर मकान का दर्वाजा बन्द कर दिया। तब महाबल ने भी अपने मुख से गुटिका निकाल कर स्वाभाविक रूप बना लिया। वह राजकुमारी से कहने लगा—सुन्दरी! यह सब महिमा इस गुटिका की है!

मलया—कुमार! यह गुटिका आपको कहाँ से प्राप्त हुई?

कुमार—एकदिन हमारे शहर में एक विद्यासिद्ध

पुरुष आया था, उसकी मैंने खूब सेवा की। सन्तुष्ट हो उस सिद्ध पुरुष ने रूप परावर्तन आदि के मुझे अनेक प्रयोग बतलाये थे। वे सब मैंने सिद्ध कर रखे हैं। उनमें से यह एक गुटिका भी है; जिसके प्रभाव से आज हम दोनों इस संकट से बच गये हैं।

मलया—इस तरह के चमत्कारिक प्रयोग वाली क्या दूसरी गुटिका भी आपके पास है?

कुमार—हाँ है तो, उसका प्रभाव ऐसा है कि आम के रस के साथ घिस कर तिलक करने से स्त्री, पुरुष का रूप धारण कर सकती है। परन्तु वह इस समय मेरे पास नहीं है।

सुन्दरी! अब मुझे जाने दो। अधिक समय यहां रहने से फिर कोई नया उत्पात खड़ा न हो जाय। आजके प्रसंग से तुम्हें समझना चाहिये कि विधि हमारे अनुकूल है। मैं अवश्य अपना वचन पालने की पूरी कोशिश करूँगा। तुम्हारे मन की शान्ति के लिए एक श्लोक दिये जाता हूं। संकट के समय इसको याद करने से धैर्य प्राप्त होता है।

विधत्त यद्विधि स्तत्स्यान्न स्यात् हृदय चिंतितं।
एव मेवोत्सुक चित्त, मुपायाश्चिन्तयेद् बहून् ॥

—आखिर तो शुभाशुभ कर्मरूप भाग्य करता है वही होता है; परन्तु हृदय का सोचा कार्य नही होता यह चित्त उत्सुक होकर व्यर्थ ही अनेक उपाय सोचा करता है।

अर्थात् संसार में संयोग और वियोग, सुख और दु.ख, खुद के किये हुए शुभाशुभ कर्म के अनुसार ही हुआ करता है। परन्तु मनुष्य के विचारानुसार नही होता तथापि मानव स्वभाव के अनुसार मनुष्य का हृदय व्यर्थ ही अनेक उपाय सोचता रहता है। इस पूर्वोक्त श्लोक का अर्थ समझ लेने के कारण मलया-सुन्दरी ने तुरन्त ही इस श्लोक को कण्ठस्थ कर लिया। श्लोक के भावार्थ को विचार कर कुमारी प्रसन्न चित्त से कुमार के धर्मशास्त्र सम्बन्धी ज्ञान और उसके धैर्य की प्रशंसा करने लगी तथा ऐसे गुणवान पुरुषरत्न के समागम से वह अपने आपको कृतार्थ समझने लगी।

कुमार—सुन्दरी! अब तो प्रसन्न होकर मुझे

जाने की इजाजत दो ! समय बहुत हो गया है और मेरे साथी मेरी प्रतीक्षा करते होंगे ।

मलया—कुमार ! मैं अपने मुख से ऐसे शब्द कैसे कह सकती हूं ? तथापि आप जाने के लिए इतने उत्सुक है और मेरे साथ विवाह करने का मुझे वचन देते है तो मैं इतने में ही संतोष मान कर प्रभु से अर्ज करती हूँ कि आपका मार्ग निष्कण्टक हो । आप शांति पूर्वक अपने गन्तव्य स्थान पर पहुंचें । इतना शब्द बोलते ही कुमारी की आँखों में आंसू भर आये और हृदय गद्गद् हो उठा । उसके आगे कुछ भी बोला न गया । वह अश्रुपूर्ण नेत्रों से टकटकी लगा कर कुमार की तरफ देखती रही ।

कुमार धैर्य धारण कर उसके मस्तक-चुम्बन द्वारा अन्तिम पवित्र प्रेमभाव का परिचय देकर किसी को मालूम न हो इस तरह जिस राह से आया था उसी रास्ते से किले के बाहर हो गया । और प्रयाण के लिए तैयार हो कर उसकी राह देखते हुए अपने साथियों में शामिल हो गया । रास्ते में वह राजकुमारी

को विवाहित करने के अनेक उपायों के विचारों में उलझा रहा । पृथ्वीस्थानपुर पहुँचने तक राजकुमारी का चित्रपट उसके दिल से क्षण भर के लिए भी दूर न हुआ । नगर में आ कर विनय पूर्वक माता-पिता को नमस्कार कर मलयासुन्दरी से मिला हुआ लक्ष्मी पुन्ज हार उसने अपने पिता को समर्पण कर दिया । पिता ने जब उस महा कीमती हार के प्राप्त होने का कारण पूछा तब शरम से समयोचित असत्य उत्तर दे कर कुमार बोला—चन्द्रावती के राजपुत्र मलयकेतु ने मित्रता में बतौर निशानी के मुझे यह हार दिया है । यह सुन कर महाराज सूरपाल ने कुमार की प्रशंसा करते हुए कहा—पुत्र! तेरा अद्भुत कलाकौशल है कि जिससे थोड़े ही समय की मित्रता से उस राजकुमार ने तुझको ऐसा महाकीमती हार भेट करदिया । राजा ने उस लक्ष्मीपुंज हार को कुमार की माता पद्मावती रानी को सौंप दिया । माता ने भी पुत्र की प्रशंसा कर वह दिव्य हार अपने गले में पहन लिया ।

अब राजकुमार दिन रात मलयासुन्दरी के समक्ष

की हुई प्रतिज्ञा को पूर्ण करने के विचारो में निमग्न रहता है। वह सोचता है कि कुमारी के समक्ष की हुई दुष्कर प्रतिज्ञा को किस तरह पूर्ण करूंगा ? यह मन की बात माता-पिता के समक्ष किस तरह कही जाय? अब वह सदैव इसी उधेड़बुन में लगा रहता है।

एक दिन चन्द्रावती के महाराज वीरधवल का भेजा हुआ राजदूत राजा सूरपाल की सभा में आया। उस समय महाराज सूरपाल, महाबलकुमार, और प्रधानमन्त्री मण्डल सब राजसभा में बैठे हुए थे। द्वारपाल के साथ राजसभा में प्रवेश कर चन्द्रावती के दूत ने महाराज सूरपाल को विनयपूर्वक नमस्कार कर कुशलवार्ता कथन पूर्वक अपने स्वामी का आदेश निवेदन किया। महाराज ! मुझे आपके परम मित्र चंद्रावती नरेश ने आपकी सेवा में भेजा है। हमारे महाराज ने आपकी प्रणाम पूर्वक कुशल प्रसन्नता पूछी है। विशेष समाचार यह है कि महाराज वीरधवल के रतिरम्भा के रूप को तिरस्कार करने वाली मलयासुन्दरी नामक एक कन्या है।

हमारे महाराज ने उसका स्वयम्बर मण्डप रचा है। वश परम्परा से मिला हुआ वज्रसार नामक धनुष उस मण्डप में रखा जायगा। जो कुमार अपने पराक्रम से उस धनुष पर प्रत्यञ्चा चढ़ा देगा उसीके गले में राजकुमारी वरमाला डालेगी। इस स्वयम्बर पर आमन्त्रण देने के लिए चारों तरफ दूत भेजे गये है। आपके रूपवान, गुणवान, कलाभण्डार महाबलकुमार को भी बुलाने के लिए मुझे भेजा है। आज जेठ वदि एकादशी है और स्वयम्बर जेठ वदि चौदश को रखा गया है। यों तो मुझको वहां से रवाना हुए बहुत दिन हुए परन्तु राह में बीमार हो जाने के कारण मै यहाँ जल्दी नहीं पहुंच सका। इसलिए महाराज अब समय बहुत कम रह गया है अतः महाबलकुमार को आप तुरन्त ही चन्द्रावती की तरफ रवाना करे, क्यों कि अब विलम्ब करने का समय नही रहा।

महाराज वीरधवल का स्वयम्बर सम्बन्धी आमन्त्रण प्राप्त कर राजा सूरपाल को अत्यन्त प्रसन्नता हुई। सन्मानपूर्वक आमन्त्रण को स्वीकार कर दूत को

वस्त्रादि दान से सन्मानित कर विसर्जन किया। इस समय महाबल राजकुमार भी राजसभा में महाराज के पास ही बैठा हुआ था। चन्द्रावती के दूत के वचन सुन कर उसका हृदय हर्ष से प्रफुल्लित हो उठा वह प्रसन्न हो विचारने लगा— अहा! पुण्य की कैसी प्रबलता है! जिस कार्य के लिए मैं रात दिन चिंतित रहता था वह भाग्ययोग से आज सामने आ उपस्थित हुआ है। जो कार्य सामर्थ्य और धन व्यय से सिद्ध होना असम्भवित-सा था वही कार्य पुण्ययोग से अब अपने स्वाधीन-सा ही प्रतीत होता है। अब पिता की आज्ञा पा कर मैं शीघ्र ही चन्द्रावतीनगर जाऊँगा। स्वयम्बर में आये हुए अनेक राजकुमारों का मान भंग कर, मलयासुन्दरी का पाणिग्रहण करके मैं अपनी प्रतिज्ञा को पूर्ण करूँगा। इत्यादि अनेक विचारलहरियों से हर्षाकुल हुए राजकुमार की तरफ राजा ने दृष्टिपात किया। "बेटा महाबल! तू आज ही स्वयम्बर मे चन्द्रावती जाने की तैयारी कर। साथ में खूब सेना ले जाना। चन्द्रावती नरेश बड़ा राजा है एवं वह

हमारा मित्र राजा होने से विशेष माननीय है।

कुमार—(नतमस्तक हाथ जोड़ कर) 'पिताजी! आपकी आज्ञा शिरोधार्य है। आप जब फरमावे तभी मैं जाने के लिए तैयार हूं।'

राजा—(प्रधानमन्त्री को सम्बोधित कर) मन्त्री वर! सेनापति को आज्ञा दो कि राजकुमार के साथ जाने के लिए सेना तैयार करे। महाबल की ओर देख कर राजा ने कहा—'बेटा चन्द्रावती से लाया हुआ लक्ष्मीपुंज हार भी अपने साथ लेते जाना।

महाबल—'पिताजी! मैं आपसे एक प्रार्थना करना चाहता हूँ और वह यह है कि जब मैं निद्रा में होता हूँ तब अदृश्य रूप से मेरे कमरे में आकर नित्य कोई उपद्रव करता है। कभी वस्त्र, शस्त्र तो कभी आभूषण अथवा कोई कीमती वस्तु जो मेरे पास होती है उसे वह लेकर चला जाता है। कभी भयंकर अट्ट-हास कर मुझे डराने का प्रयत्न भी करता है। कल सन्ध्या समय माताजी ने वह लक्ष्मीपुंज हार रखने के लिए मुझे दिया था परन्तु कल ही रात्रि को मेरे यहां

में से उस हार को किसीने निकाल लिया। हार गायब हुआ जान कर माताजी को अत्यन्त दुःख हुआ, यह देख कर मेरा दिल भी दुःख से व्याकुल हो रहा है। पिताश्री ! माताजी को शान्त करने के लिए मैंने उन के सामने यह प्रतिज्ञा की है कि यदि ५ दिन के अंदर उस हार को लाकर वापिस न दूँ तो अग्निप्रवेश कर मरणान्त प्रायश्चित्त करूँगा। माताजी ने भी यह प्रतिज्ञा ली है कि अगर वह हार न मिला तो मै भी अपने प्राण खो दूँगी। मेरी तमाम वस्तुओ को छुपकर हरण करने वाला जन्मांतर का वैरी कोई भूत अथवा राक्षस होना चाहिये। पिताजी ! मैं चाहता हूं कि आज रात को दो-तीन पहर रात तक अपने कमरे में हथियार सहित सावधानी से छुप कर पहरा दूँ यदि इतने समय तक मेरी तमाम वस्तुओं को चुराने वाला वह दुष्ट मेरे मकानमें प्रवेश करे तो उसे पकड़ कर हार सहित अपनी तमाम वस्तुएँ वापिस प्राप्त करके हार माताजी को देकर रात्रि के पिछले पहर में चंद्रावती की तरफ प्रयाण कर दूँगा। यह बात सुन

कर राजा ने कुमार को वैसा ही करने की आज्ञा दी। पिता को नमस्कार कर महाबल अपने महल में चला गया।

जेठ वदि एकादशी के दिन अन्धेरी रात्रि ने पृथ्वी पर चारों तरफ काली चादर बिछाई हुई है। अनन्त आकाश मण्डल में असंख्य तारे अपने मन्द प्रकाश से रात्रि की शोभा में अभिवृद्धि कर रहे हैं तथापि विशेष अन्धकार के कारण उनके प्रकाश से जमीन पर रही हुई वस्तु स्पष्ट नही मालूम होती थी। सारे शहर में शान्ति का साम्राज्य था। राजमहल के चारों ओर किसी भी मनुष्य का संचार न था।

ऐसे समय में अपने निवासभवन में हाथ में तलवार लिए, दीपक के अन्धकार के नीचे सावधान हो गुप्त रीति से महाबल कुमार खड़ा है। अपने पलंग पर जहाँ वह सोता था एक वस्त्र से मनुष्याकृति बना कर उस पर एक चादर डाल रखी है। उस निवास-भवनमे केवल एक खिड़की के सिवाय सब द्वार बन्द हैं, चाहे जो हो परन्तु प्राणप्रण से भी आज उस दुष्ट को

मैं पूरी शिक्षा दूँगा इसी उद्देश्य से कुमार सतर्क हो अँधेरे में खड़ा है।

जब मध्यरात्रि का समय हुआ, उस वक्त खुली हुई खिड़की से एक हाथने अन्दर प्रवेश किया। कुमार ने भी उसे अच्छी तरह देख लिया और वह विशेष रूप से सावधान हो गया। वह हाथ कुमार के कमरे में फिरने लगा। यह देख कर कुमार आश्चर्यचकित विचारने लगा। अरे! बिना शरीर के यह अकेला हाथ ही क्यों दिखाई दे रहा है? कंकण आदि आभूषण पहने तथा सरल और कोमल होने के कारण यह हाथ किसी औरत का मालूम होता है। निश्चय ही यही स्त्री अदृश्यरूप में निरन्तर उपद्रव करती रहती है। किसी दिव्य प्रभाव से इसका शरीर गुप्त मालूम होता है। अगर तलवार के प्रहार से इसके हाथ को काट डालूँ तो फिर यह मेरे हाथ न आयगी और ऐसा करने से लक्ष्मीपुंज हार आदि चुराई गई वस्तुओं की प्राप्ति नहीं हो सकेगी। इसलिए इस हाथ को काटने की अपेक्षा इसे पकड़ लेना चाहिये। यह सोच कर

कुमार सहसा उस हाथ पर चढ़ बैठा और उसने उसे दोनों हाथों से जकड़ कर मजबूती से पकड़ लिया।

कुमार के इस साहस से अब वह हाथ कमरे में घूमना छोड़ कर खिड़की से बाहर हो आकाश-मार्ग से ऊपर जाने लगा। कुमार भी उस हाथ पर निर्भीक बैठा रहा। आकाश में जाने पर वायुवेग से हिलती हुई ध्वजा के समान वह हाथ काँपने लगा। उस हाथ ने कुमार को नीचे गिराने के लिए बहुत ही प्रयत्न किये किंतु वृक्ष की शाखा पर लटके हुए बन्दर के समान वह उस हाथ से चिपटा रहा। कुछ समय बाद उस व्यन्तरदेवी का सम्पूर्ण शरीर कुमार को नजर आने लगा। अब वह सोचने लगा "यह सचमुच ही कोई देवी है' इसे विशेष हैरान करने से कदाचित् यह क्रुद्ध हो मुझे कहीं समुद्र अथवा किसी पहाड के शिखर पर फेंक न दे। इसलिए अधिक समय तक इस हाथ पर बैठे रहना मेरे लिए खतरनाक होगा। यह विचार कर कुमार ने पृथ्वी की ओर उतरती हुई उस देवी की गर्दन पर इस प्रकार का मुष्टि-प्रहार

किया कि जिसकी पीड़ा से वह रुदन करती हुई बोली —हे साहसिक ! कृपा कर मुझे छोड़ दो। मैं अब कभी भी आपको हैरान नही करूँगी। इस समय देवी के आकाशमार्ग से पृथ्वी बहुत दूर नहीं थी अतः कुमार ने करुणा से उसका हाथ छोड़ दिया। फिर न जाने वह देवी किस दिशा में गायब हो गई। देवी का हाथ छोड़ते ही निराधार होकर कुमार आकाश से नीचे गिर पड़ा।

पड़ते ही उसे मूर्छा आ गई। जंगल के शीतल पवन से आश्वासन मिलने पर थोड़े समय बाद वह होश में आया। पुण्य के प्रताप से किसी घास के ढेर पर गिरने के कारण कुमार के शरीर को कही भी चोट न लगी। होश में आने पर वह सोचने लगा। न जाने मैं इस समय किस प्रदेश में आकर गिरा हूं? इस अन्धकारपूर्ण रात्रिमें जंगलमें चारों तरफ़ सन्नाटा छाया हुआ है, कही—कही जंगली जानवरों के कर्णकटु शब्द कान में सुनाई दे रहे हैं। शेष रात्रि व्यतीत करने के लिए ऐसे बीहड़ जंगल में निःशस्त्र जमीन

पर बैठे रहना उचित नहीं है। यह सोच कर राजकुमार समीपवर्ती एक आम के पेड़ पर चढ़ बैठा। वह मन ही मन सोचने लगा। अहो! इस देवी के अपहरण से मेरी यह क्या अवस्था हुई? अब लक्ष्मीपुंज हार की प्राप्ति मुझे कैसे होगी? हार न मिलने पर क्या माताजी जीवित रहेंगी? माताजी की मृत्यु से पिताजी के भी प्राणों की रक्षा होना असम्भव है। हा! इस वक्त मेरे वंश के संहार की स्थिति आ गई है। हे विधाता! तेरी विचित्र गति है। तू क्षण में मनुष्यो को रुलाती है, हँसाती है, आशा देकर ऊँचे शिखर पर चढ़ाता है और थोड़ी ही देर में फिर मनुष्यो को बन्धन में डाल देती है और निराश करके ऊँचे शिखर से नीचे गिरा देती है। तेरी विचित्रता को ज्ञानी महापुरुषो के सिवा और कोई नही जान सकता।

अब रात्रि का तीसरा प्रहर बीत चुका था। आकाश मे तारे चमक रहे थे। चन्द्रोदय का समय होने से अन्धकार भी थोड़ा कम हुआ था। इस समय

ग्राम के दरख्त पर बैठा हुआ महाबल अनेक प्रकारकी विचार तरंगों में गोते लगा रहा था। इसी समय उसी ग्राम के पेड़ के नीचे पेट के बल चलने वाले किसी सर्प जैसे प्राणी की आहट उसके कानों में पड़ी इससे कुमार ने सावधान हो कर पेड़ पर से नीचे की तरफ देखा तो ग्राम के तने के नजदीक आता हुआ एक भयानक अजगर दिखाई दिया। उस अजगर के मुँह में आधा निगला हुआ, आधा बाहर कोई मनुष्य मालूम होता था। यह देख कुमार समझ गया कि यह कोई क्रूर प्राणी किसी मनुष्य को निगल कर इस पेड़ के लपेटा देकर उसे मारने के लिए आ रहा है। यदि मैं इस क्रूर प्राणी के मुख में पड़े हुए मनुष्य को जीवनदान दूँ तो मेरा इस विपत्ति में आ पड़ना भी सफल गिना जा सकता है। संसार में मनुष्य मात्रके सिर पर काल की गर्जना हो रही है। इस नाशवान देह से यदि दूसरे का उपकार हो सके तो जीवन सार्थक है यह सोच कर कुमार वृक्ष से नीचे उतरा।

जिस समय वह अजगर उस वृक्ष के समीप आ

कर वृक्षको लपेटा दे आधे निगले हुए मनुष्य को मार डालने का प्रयत्न करता था उसी वक्त कुमार ने उस भीमकाय अजगर के दोनों होठो को पकड़ कर उसे जीर्ण वस्त्र के समान चीर डाला। अजगर के दो भाग होते ही उसके मुँह से मन्द चैतन्य वाली एक युवती स्त्री निकल पड़ी। यद्यपि वह स्त्री जीवित थी तथापि इस समय वह मूर्छित होने से निश्चेष्ट मालूम होती थी। जंगल का शुद्ध पवन लगने से कुछ देर के वाद अर्ध-जागृतावस्था में उसके मुख से मन्द स्वर से 'मुझे महाबलकुमार का शरण हो" यह शब्द निकल पडे। अपना नाम सुन कर कुमार विस्मय प्राप्त कर सावधान हो उस युवती की तरफ देखने लगा। रात्रि मे भी गौर से उसके चहरे को देखने से कुमार को मालूम हो गया कि चन्द्रावती के राजमहल मे देखी हुई यह तो मलयासुन्दरी की आकृति है। यह देखकर कुमार के आश्चर्य का पार न रहा। परोपकार की भावना के उपरांत हृदयगत प्रेम की प्रेरणा से अब वह अधिक प्रयत्न से उसे होश में लाने का प्रयत्न

करने लगा। अब वह कुछ विशेष होश में आ कर महाबल द्वारा याद कराये हुए इस श्लोक को बोलने लगी—

"विधत्ते यद्विधिस्तत्स्यान्न स्यात् हृदर्तचिंतितं"

इत्यादि वाक्य सुनते ही कुमार को पूर्ण निश्चय हो गया कि यह राजकुमारी मलयासुन्दरी ही है। अतः उसने गद्गद् कण्ठ से कहा—मृगाक्षी! निद्रा का त्याग करो, स्वस्थ बनो। तुम्हारी यह अवस्था देख कर मेरा दिल व्याकुल हो रहा है। महाबल का शब्द सुनते ही नेत्र खोल राजकुमारी उसके सामने देखने लगी। अपने पास बैठा हुआ और अपने शरीर की सुश्रुषा करते राजकुमार को देख कर उस दुःख में भी उसका दिल हर्षायमान हो गया। ऐसी दुःखी अवस्था में अपने प्रियतम कुमारके दर्शन कर वह अपने तमाम कष्टों को भूल गई। शरीर का संकोच छोड़ कर और वस्त्र समेट कर बैठी हो गई। स्निग्ध दृष्टि से कुमार की ओर एकटक देखने लगी।

मलया—राजकुमार! क्या मैं स्वप्न देख रही

हूं ? मैं किस तरह जीवित रही और आप अकस्मात यहां कैसे आ गये ?"

महाबल—"राजकुमारी ! यह बात मैं तुम्हे फिर बताउंगा। पहले नजदीक में जो यह नदी मालूम होती है वहा चल कर जो तुम्हारा शरीर मैल और अजगर की लार में भरा हुआ है इसे साफ करना चाहिये।

मलया—'जैसी आपकी आज्ञा।' वहाँ से उठकर दोनो ही पास में बहने वाली नदी पर गये; वहाँ जा कर राजकुमारी के शरीर को साफ किया वस्त्र धोये और स्वच्छ ताजा पानी पिला कर महाबलकुमार अ-पने साथ में लेकर वापिस उसी आम के तले आबैठा।

मलया—(जरा स्वस्थ होकर) राजकुमार आप यहाँ कैसे आये ? महाबल अपना तमाम वृत्तान्त व्यंतर देवी के हरण से लेकर उस अजगर के चीर डालनेतक कह गया। यह वृत्तान्त सुन कर मलयासुन्दरी कुमार के धैर्य और साहस से चकित हो वारम्बार मस्तक हिलाने लगी। कुमार की ओर स्नेह भरी दृष्टि से

देखते हुए वह बोल उठी—कुमार ! आपने बड़ा कष्ट सहन किया !

महाबल—सुन्दरी ! अब तुम मुझे अपना हाल कह सुनाओ। मेरे जाने बाद तुम पर क्या-क्या घटनाएँ घटी ? इस भयानक अजगर के उदर में किस तरह आ पड़ी ? अनेक सुभटों से सुरक्षित उस राजभवन में रहने वाली को इस अजगर ने किस तरह निगल लिया ?

मलया—राजकुमार ! अजगर के मुख में किस तरह गई यह तो मैं नही जानती परन्तु इसके सिवा मैं आपको अपना तमाम हाल सुनाती हूं जिसे आप अपने कान और मन को मजबूत करके सुने।

मलयासुन्दरी अपनी आपबीती कहानी कहना ही चाहती थी इतने ही मे महाबल के कान पर दूर से आते हुए किसी मनुष्य के आने की आहट पड़ी। महाबल तुरन्त ही सावधान होकर विचारने लगा। रात्रि के समय ऐसे प्रदेश में कौन फिर रहा होगा ? ऐसे अन्धकार के समय में चोर, जार या घातक ही हुआ

तो सम्भव है मुझे अकेले को स्त्री के पास बैठा देख वह कुछ उपद्रव करे। अगर राजकुमारी की खोज में ही कोई आ रहा होगा तो इस समय इसे मेरे पास अकेली बैठी देख कर वह भी कुछ आपत्ति करेगा।

पूर्वोक्त विचार कर कुमार ने अपने केशपाश में से एक गुटिका निकाली और उसे उसी आम के रसमे घिस कर कुमारी के मस्तक पर तिलक कर दिया। उस गुटिका के चमत्कारिक प्रभाव से मलयासुन्दरीका पुरुष रूप बन गया। पुरुष रूप देख कर महाबल ने कहा—राजकुमारी! जब तक तुम्हारे मस्तक पर लगाया हुआ यह तिलक मेरे थूक से न मिटा दिया जाय तब तक तुम्हारा पुरुष रूप ऐसा ही कायम रहेगा अभी रात्रि बहुत है। उन्मार्ग से कोई सामने मनुष्य चला आ रहा मालूम होता है। जबतक उसका भली भांति पता न लग जाय और अबसे जो आगे ऐसे प्रसंग आयँगे तब तक के लिए तुम्हारा ऐसा ही रूप बनाये रखने की आवश्यकता है।

मलया— राजकुमार! आपको जैसा उचित लगे

वैसा करें। मैंने तो यह शरीर जन्म पर्यन्त आपको समर्पण कर दिया है।"

महाबल—तुम्हारा कहना सही है परन्तु इस समय हमें बिल्कुल मौन रहना चाहिये। देखो वह व्यक्ति नजदीक ही आरहा है। तुम्हें यह बताए देता हूं कि वह मनुष्य चाहे जो हो परन्तु तुम्हे सर्वथा निर्भीक रहना चाहिये। इस प्रकार राजकुमारी को धैर्य देकर महाबल सामने से आने वाले व्यक्ति की ओर देखने लगा। देखते ही देखते वह व्यक्ति शीघ्र गति से बिल्कुल नजदीक आ पहुंचा। नजदीक आने से कुमार को यह मालूम हो गया कि सामने आने वाला व्यक्ति पुरुष नही किन्तु भय से काँपती हुई एक युवती स्त्री है। उसे नजदीक आई देख कुमार ने मीठी आवाज से कहा—

भद्रे! तू कौन है? ऐसी घोर अन्धेरी रात्री में इस निर्जन जंगल में तुझे अकेली आने का क्या कारण हुआ? तेरा शरीर किस भय से कांप रहा है? यहां से नजदीक में कौन सा शहर है और वहां पर कौन

राज्य करता है ? हम दोनों परदेशी है। रास्ते ही में रात हो जाने से हमने यहां ही विश्राम कर लिया है, परन्तु हम इस प्रदेश से सर्वथा अनजान हैं" इस तरह कुमार ने उसे मीठे वचनों द्वारा कुछ आश्वासन-सा दिया।

कुमार के वचनो पर विश्वास रख कर आगन्तुक स्त्री बोली—"हे क्षत्रिय पुत्रों! मैं आप के पूछे हुए प्रश्नो का उत्तर देती हूं।

आप जहां पर बैठे है यह गोला नदी के किनारे का प्रदेश है। यहां से बिल्कुल नजदीक चंद्रावती नाम की नगरी है और वहां पर वीरधवल राजा राज करता है। आगन्तुक स्त्री के मुख से यह समाचार सुन कर महाबल का हृदय और आश्चर्य से पूर्ण हो गया। वह सोचने लगा, भाग्य की कैसी विचित्र गति है ? ऐसे संकट में पड़ कर भी मै अपने इष्ट स्थान के समीप ही आ पहुंचा हूं। मृत्यु के मुख में गई हुई राजकुमारी भी मुझे जीवित ही मिल गई। ऐसे मरणान्त संकटों में भी मेरा भाग्य मुझे पूर्ण सहायता दे

रहा है इसलिये मुझे संकट पूर्ण विनोद से जरा भी हिम्मत नही हारना चाहिये।

महाबल—भद्रे ! क्या इस राजा के यहा कुछ नई घटना घटी है ?

आगन्तुक युवती—हां इस राजा की एक मलयासुन्दरी नामक विवाह लायक एक कन्या थी, उसके लिये राजा ने स्वयंवर शुरू किया है। देश देशान्तर से राजकुमारों को बुलाने के वास्ते चारों तरफ राजदूत भेंजे हुए है। आज से तीसरे दिन, याने चतुर्दशी के दिन स्वयम्बर का मुहूर्त था और राजा ने स्वयम्बर की तमाम सामग्री तैयार करली थी परन्तु उस कुमारी की सौतेली मां रानी कनकवती ने उस रंग में भंग कर डाला। मैं उस कनकवती रानी की सोमा नामक मुख्य दासी हूँ। मैं उसकी पूर्ण विश्वासपात्र होने से उसका कोई भी कार्य मुझसे छिपा हुआ नहीं है। कनकवती मलयासुन्दरी पर निरन्तर द्वेष रखती थी और उसके छिद्र देखती रहती थी।

मलया—सोमा ! कनकवती किस कारण राज-

कुमारी से द्वेष रखती थी ?

महाबल—इसमे क्या पूछना है ? विमाता को स्वाभाविक ही अपनी सौतन की सन्तान पर द्वेष होता ही है।

सोमा— कुछभी हो मुझे इस बात का पता नही। हाँ, इतना मैं कह सकती हूँ कि राजकुमारी का आज तक कुछभी अपराध या छिद्र नही देखा गया। उस निर्दोष बालिका के पीछे पड़ने पर भी कनकवती उस कुमारी का कुछ भी न बिगाड़ पाई। कलही की बात है मैं और मेरी मालकिन केवल हम दोनों ही महल में बैठी थीं कि अकस्मात् रानी कनकवती की गोद में राजकुमारी का लक्ष्मीपुञ्ज हार आकर गिरा। चित्त को आनन्द देने वाला हार का नाम सुनते ही नवचैतन्य-सा प्राप्त कर कुमार सहसा बोल उठा— सोमा ! वह हार उसकी गोद में कहाँ से आ पड़ा था ?

सोमा—वह हार आकाशमार्ग से पड़ा था। उसे देख कर हम दोनों ने नीचे ऊँचे चारों तरफ देखा पर उस हार को फेंकने वाले का कुछ भी पता न लगा।

कुमार ने मन ही मन सोचा—उसी व्यन्तरी देवी ने मेरे पास से ले जाकर लक्ष्मीपुंज हार वहाँ डाला होगा, जिसने उसके साथ मेरी अन्य वस्तुएँ भी चुराई हैं। मालूम होता है उस व्यन्तरीदेवी का कनकवती के साथ कुछ जन्मान्तर का स्नेह सम्बन्ध होगा; इसीसे उसने वह हार उसे जाकर दिया होगा। अहा! जिस हार का अब तक भी कही पता न लगा, जिसके लिए मैं संकट में पड़ा हूं स्वप्न में भी कलपना नहीं होती थी कि हार कहां होगा उसी हार का पता अनायास ही लग गया।

महाबल—सोमा! वह हार ले कर कनकवती ने क्या किया और इस वक्त वह हार कहां पर है?

सोमा—हार मिलने से अति हर्षित हो कर कनकवती ने मुझसे कहा—भद्रे! देख, यह कैसा अपूर्व आश्चर्य है कि जहा पर पुरुष का संचार भी होना कठिन है ऐसे स्थान में रहने वाली राजकुमारी मलयासुन्दरी का यह अपूर्व हार अकस्मात् मेरी गोद में आ गिरा है। तू चारों तरफ देख, इस समय कोई

मनुष्य महल मे छिपकर यह सब कुछ देख तो नहीं रहा है ? मैंने और मेरी स्वामिनी कनकवती ने भी महल में सर्वत्र देखा परन्तु हमें कोई भी मनुष्य देखने में न आया ।

कुछ देर मौन रह कर मेरी स्मामिनी ने मुझसे कहा ! सोमा तू इस हार की प्राप्ति का जिक्र किसोको भी मत करना । मैंने वह बात शिरोधार्य की । स्वा–मिनी ने उस हार को कही गुप्त-स्थान पर छिपा दिया। इसके बाद हम दोनों महाराज वीरधवल के पास गईं । मेरी स्वामिनी ने हाथ जोड़ कर महाराज से प्रार्थना की—'महाराज ! मैं आपसे एकांत में कुछ आपके हित और लाभ की बात कहना चाहती हूँ' । महाराज वीर-धवल यह सुन 'बहुत अच्छा' कह कर उठ खड़े हुए और मेरी स्वामिनी के साथ एक अलग कमरे में चले गये । वहां पर मेरी स्वामिनी ने महाराज से कहा स्वामिन् ! पृथ्वीस्थानपुर के भूपति सूरपाल राजा का महा पराक्रमो सुन्दर और तेजस्वी महाबल नामक एक कुमार है । उसका एक मनुष्य गुप्त रीति से कई बार

आपकी अति प्यारी राजकुमारी मलयासुन्दरी के पास आता है। राज्य का भूषण रूप और दिव्य प्रभाववाला वह लक्ष्मीपुंज हार आज ही कुमारी ने महाबल कुमार के लिए उस आदमी के हाथ भेज दिया है और साथ ही उसे यह भी कहलाया है कि स्वयंवर के बहाने से बहुत सी सेना लेकर तुम इस अवसर पर अवश्य आना। अन्य राजकुमार भी इस समय अवश्य आयेंगे। आपके संकेत पर वे आपकी सहायता भी करेंगे। इस-लिए इस समय राज्य को ग्रहण करने का यह अमूल्य अवसर है। मेरा विवाह भी आपके ही साथ होगा।

महाराज! सचमुच ही कुमारी सरल स्वभावी है। उसे राज्य लोभी धूर्त और अपने बल से गर्वित महाबल कुमार ने भरमा कर अपने वश में कर लिया है इसी कारण उसने इस प्रकार का भयंकर राजद्रोह और कुलघातक विचार किया है। प्राणनाथ! स्त्रियों की वाणी मधुर होती है परन्तु उनकी बुद्धि बड़ी तुच्छ होती है। मुख में कुछ और हृदय में कुछ और ही होता है। मूर्ख स्त्रियाँ तुच्छ लालसा में फँसकर

अपने माता, पिता, भाई आदि समस्त कुटुम्ब को कष्ट में डाल देती है इसी कारण यह गुप्त रहस्य मैंने आपके सामने निवेदन किया है। अब आपको जो उचित मालूम हो सो करे। यदि आपको मेरे इन वचनो पर विश्वास न हो तो आप इस समय कुमारी के पास से हार मागे, जो उसने आपको हार दे दिया तो उस दिन से आप मुझे सदा के लिए झूठी और ईर्ष्यालु ही समझिये अन्यथा मेरा कथन सत्य समझ कर आप अपने और नष्ट होते हुए राज्य को बचाने का उपाय कीजिये। इत्यादि अनेक असत्य वचनों से राजा को ऐसा भ्रम में डाल दिया कि क्रोधावेश में आ राजा ने तत्काल ही हमें वहां से जाने को कहा और कुमारी की माता चम्पकमाला को बुला कर कनकवती रानी से सुनी हुई तमाम बातें कही, परंतु चम्पकमाला को उन बातो पर जरा भी यकीन नही आया। जब महाराज ने हार के विषय में सुनाया तो रानी ने यह बात स्वीकार कर ली कि हा यदि हार उसके पास न मिले तो इन बातों पर विश्वास

किया जा सकता है। रानी का अभिप्राय मान्य करके महाराज ने उसी समय राजकुमारीजी को बुलवाया और उसके पास से लक्ष्मीपुंज हार मांगा। पहले तो कुमारी से कुछ भी उत्तर न देते बना। वाद में वह कुछ सोच कर बोली, पिताजी ! उस हार को मेरे पास से किसीने चुरा लिया प्रतीत होता है। कई दिन से वह मेरे पास से गायब है और ढूँढने पर भी वह नहीं मिला।

यह उत्तर सुनते ही मारे क्रोध के राजा के नेत्र लाल सूर्ख हो गये, होंठ फड़कने लगे। वह तिरस्कार पूर्वक गरज कर बोला—पापिनी ! दूर हट जा मेरे सामने से और अपना मुँह न दिखा। तेरे सारे प्रपंचों का पता लग गया है।

इधर रानी चम्पकमाला भी तिरस्कार कर उसे फटकारने लगी। माता सहित पिता को क्रोधातुर देख कर मलयासुन्दरी तुरन्त ही पीछी लौट कर अपने महल में आ गई।

उसका मुखकमल चिन्ता की छाया से मुरझा

गया। वह सोचने लगी; माता-पिता के इतने क्रोध का क्या कारण हो सकता है ? मैंने मन वचन और शरीर से अभी तक कभी भी प्यारे माता - पिता के अनिष्ट की वान्छा नहीं की। मेरे हाथो भारी से भारी कीमती वस्तु नष्ट होने पर भी पिताजी ने मुझ पर कभी क्रोध नही किया। आज यह क्या हुआ जो माता और पिता दोनों ही कोपायमान हो रहे है ? उनके इस अकारण कोप की क्या वजह है यह मालूम नही हो रहा। न जाने अब इस भयानक क्रोध का क्या परिणाम पैदा होगा ? इसी सोच विचार में वह हृदय में झूरती हुई मानसिक वेदना से छटपटाती हुई अपने कमरे में आकर बैठ गई।

राजा ने चम्पकमाला से कहा—देवी ! इस दुष्ट दिल वाली कुमारी ने सचमुच ही लक्ष्मीपुंज हार महाबल को दे दिया है। कनकवती का कथन असत्य नहीं स्वयम्बर में आनेवाले अनेक राजकुमारोंसे यह लड़की मुझे मरवा डालेगी। हमने इसे कितना लाड़ लड़ाया, इसके स्वयम्बर के निमित्त कितना महान् खर्च उठा

कर मण्डप तैयार कराया है। यह पुत्रीके रूप में जन्म लेने वाली हमारी कोई पूर्व जन्म की शत्रु है। सचमुच ही अनुरागिनी स्त्री मनुष्य को मौत से बचाती है और विरक्ता स्त्री मनुष्य को मृत्यु के द्वार पर पहुँचाती है। मित्र को शत्रु और शत्रु को मित्र बना देती है। इसलिए हे प्रिये ! मेरा विचार यह है कि जब तक वे दुश्मन राजकुमार यहां पर न आ पहुँचें तब तक इस दुष्टा लड़की को यमराज के हवाले कर देना चाहिये। रानी चम्पकमाला ने कुछभी उत्तर न दिया। अनेक विचारो में उलझ कर रानी ने राजा के साथ कष्ट से रात्रि व्यतीत की। प्रातःकाल होतेही राजा ने कोतवाल को बुलाकर आज्ञा दी कि इस मेरी पापिष्टा पुत्री कुमारी मलयासुन्दरी को यहांसे दूर जंगल में ले जाकर जान से मार डालो। इस विषय में मुझे वारम्बार पूछने या विचार करने की तुम्हें कोई आवश्यकता नही !

इस बात की खबर होते ही बुद्धिनिधान सुबुद्धि नामक प्रधानमन्त्री शीघ्र ही महाराजा के पास आया

इस समय राजा का क्रोध उग्र रूप को धारण किये हुए था। क्रोध से विकृत बने राजा को देख कर प्रधान मन्त्री नमस्कार कर नम्रतापूर्वक बोला— महाराज! ऐसा असमंजस और भयानक कार्य करने का क्या कारण है? इस समय कुमारी मलयासुन्दरी आपकी वही पुत्री नही जिसके विनयादि गुणोंकी आप प्रशसा किया करते थे? क्या अब उस पर आपका वात्सल्य नही रहा? इस भोलीभाली मासूम राजकन्या ने प्राणदण्ड पाने का ऐसा कौनसा अपराध कर डाला? महाराज! जो कार्य करना हो उसे दीर्घदृष्टि से पूर्व पर विचार करके करना चाहिये। अविचारित कार्य का परिणाम किसी-किसी समय मरणांत कष्ट से भी अधिक दुस्सह होता है।

राजा—प्रधान! तुम्हारा कथन बिल्कुल ठीक है परन्तु मैं अविचारित कार्य नही कर रहा हूँ। बाहर से भोली दीखने वाली इस कुमारी ने हमारा भयंकर अपराध किया है। इसने हमारे वश को सर्वथा नष्ट करने का प्रपंच रचा है जिसका हमें कल ही पता

लगा है। इत्यादि कथन से राजा ने कनकवती द्वारा सुना हुआ वृतान्त मन्त्री को कह सुनाया। यह सुनकर मन्त्री भी भयभीत हो मौन धारण कर कुछ विचारों में खो गया। इसका निर्णय करने में उसकी बुद्धि कुण्ठित हो गई।

राजा की आज्ञा पाकर दो चार सिपाहियों को साथ में लेकर कोटवाल राजकुमारी के महल में आ पहुँचा और मन्द स्वर से मलयासुन्दरी से बोला—राजकुमारी! महाराज तुम पर अत्यन्त क्रोधित हुए हैं। इस कारण उनने तुमको मार डालने की आज्ञा दी है। हा! पराधीन हतभाग्य मै इस समय क्या करूँ? कोतवाल की बात सुन कर मलयासुन्दरी के नेत्रों से आँसुओं की झड़ी लग गई। उसके चेहरे पर मूर्धनी छा गई और अब मुझे क्या करना चाहिये बस इस विचार में वह मूढ़ बन गई। अवरुद्ध कण्ठ दीन भाव से कुमारी ने उत्तर दिया— कोतवाल! पिताजी का मुझ पर इस भयंकर क्रोधका कारण तुम जानते हो? कोतवाल बोला—राजकुमारी! मैं इस घटना

के रहस्य को बिल्कुल नहीं जानता।

मलयासुन्दरी दुःख से अस्थिर चित्त की अवस्था में होकर बोलने लगी—'पिताजी ! निर्दोष बालिका पर निष्कारण ऐसा प्राणघातक कोप किसलिए ? प्यारे पिता ! अनेक भूले होने पर भी आज पर्यन्त आपसे ऐसा अविचारित कार्य कभी नही हुआ। आज आपको क्या किसी ने भरमा दिया है ? इस समय पुत्रीपन का असीम प्रेम कहाँ चला गया ? माता चंपकमाला ! आज भी पत्थर के समान कठोर हृदय बनाकर निस्नेहा हो गई ! यदि आपको मुझसे कुछ अपराध ही हुआ मालूम होता है, तो क्या माता पिता सन्तान के एक अपराध को क्षमा नही कर सकते ? मुझपर असीम प्रेम रखने वाले हे भ्राता मलयकेतु ! क्या ऐसे समय तुम भी मौन धारण किये बैठे हो ! इस विषमता का क्या कारण है ? इस पर भी मुझे नही बतलाया जाता ? मैंने ऐसा कौनसा भयंकर अपराध किया है जिससे आज तमाम परिवार का मुझ से प्रेम नष्ट हो गया ? मैं मानती हूं कि आज मेरा पुण्य सर्वथा नाश हो चुका

है। इसी से प्राणों से प्यारी समझने वाला सारा राज-कुल आज मुझे दुश्मन समझ कर निष्ठुर बन गया है।

पूर्वोक्त विचारों की धुन में उसने यह निश्चय किया कि एक बार मै पिताजी से प्रार्थना करूँ, वे मुझे मेरा अपराध बताएँ। फिर जो मेरे भाग्य में होगा सो होगा। यह सोचकर उसने वेगवती को बुला कर अपना सारा अभिप्राय कह सुनाया और अपनी तरफ से प्रार्थना करने के लिए उसे राजा के पास भेजा।

वेगवती महाराज वीरधवल के पास आकर हाथ जोड़ नम्रता पूर्वक विज्ञप्ति करने लगी 'महाराज-मलया सुन्दरी ने मेरे द्वारा आपसे हाथ जोड़ कर नम्र प्रार्थना की है कि कृपा कर मुझे यह बताएँ कि मुझ हतभा-गनी से आपका क्या अपराध हुआ है ? यदि मुझे मृत्यु से पहले अपना अपराध मालूम होगा तो मेरे चित्त को संतोष होगा। मैं समझूँगी कि पिताजी ने मुझे मेरे ही अपराध की शिक्षा दी है। आपकी दी हुई प्राण-दण्ड की शिक्षा मुझे शिरोधार्य है, परन्तु प्राण त्याग

से पहले यदि आपकी आज्ञा हो तो अन्तिम समय एक बार आपके और माताजी के दर्शन करना चाहती हूं। अगर यह बात आपको बिल्कुल मंजूर न हो तो मैं दूर रही हुई आपकी तथा माता चम्पकमाला और सौतेली माता कनकवती को अन्तिम नमस्कार करती हूँ।

राजा—पापिष्टा लड़की ! अयोग्य काम करके भी मुझ से अपराध जानना चाहती है ? मुझे मालूम न था कि तू ऊपर से भोली दिखाई देने वाली भीतर से इतनी गूढ़ हृदय और कपट पूर्ण है। मैं अन्दर से विष तुल्य और ऊपर से अमृत के समान उसका मीठा वचन सुनना नही चाहता। अब उस कुलटा का मुख देखना नही चाहता और न तो मुझे उसके इस कपट पूर्ण नमस्कार की आवश्यकता है न मैं मिलना चाहता हू जिस तरह कोतवाल कहे वह अपने प्राण को त्याग दे।

राजा के अन्तिम वचन सुन वेगवती के दुःख का पार न रहा। उसका हृदय भर आया और आखों से आँसू बहाने लगी परन्तु अन्त में धीरज धारण कर

उसने मलयासुन्दरी का अन्तिम सन्देश सुनाया। महाराज ! यदि आपका यही अन्तिम निश्चय है तो मलयासुन्दरी गोला नदी के किनारे पर जो पाताल–कूप नामक अन्धकारपूर्ण गहरा कुँआ है उसमें कूद कर मृत्यु की शरण लेगी। इतनी बात कह कर और राजा का उत्तर सुनने की भी प्रतीक्षा न करके वेगवती वहां से तत्काल ही लौट गई और मलयासुन्दरी के पास जा कर उसने सविस्तार तमाम हकीकत कह सुनाई।

मलयासुन्दरी पर इस समय अकस्मात् विपत्ति का पहाड़ टूट पड़नेसे उसकी यह सच्ची परीक्षा का समय था। उसने जो बालवय में संस्कारी शिक्षण प्राप्त किया था उसके प्रभाव से हिम्मत और धैर्य का अवलम्बन ले वह अपने ही घोर कर्मों की निन्दा करती थी, उसके मुख से निम्न प्रकार के शब्द निकलते थे:—

जो भाग्य करे वह होताहै, नहीं होत दिलचिंतित तेरा
हे चित्त ! सदा उत्सुक हो कर,
करता उपाय क्यों बहुतेरा !

कठिन है बनना मन रे तुझे,
मरण का सहना दुःख है मुझे।
मम कुकर्म पुरातन रोष है,
जनक का इसमें कब दोष है?

राजा का अन्तिम निश्चय सुनकर मलयासुन्दरी ने धैर्य पूर्वक प्राण त्याग का निश्चय कर लिया। अब पच परमेष्टि मन्त्र का जाप करती हुई शहर से बाहर रहे हुए अन्ध कूप को लक्ष्य मे कर निर्भयता से अपने रक्षक पुरुषों के आगे-आगे चल पड़ी।

राजकुमारी की यह स्थिति देख कर आरक्षको के दिल मे भी दया का संचार होता था। उसके सखीवर्ग की स्थिति बहुत ही करुणाजनक थी। वे चौधारा आंसुओ से मुख धोती हुई रुदन करती थी। हे हृदय! राजकुमारी की ऐसी दशा देख कर भी तू किस तरह जीवन धारण किये हुए है? हे कुमारी! तेरे मधुर आलाप, सारगर्भित वार्ता और हृदय की सरलता से प्राप्त होने वाला आनन्द अब हम किससे पायँगी? हे देवी! यह तेरी दशा तेरी जगह हमे क्यो न प्राप्त हो

गई ? हे दिव्य गुण धारण करने वाली, सरल-हृदय बालिका ! तेरे बिना इस शहर में रहना हमारे लिए सर्वथा असम्भवित होगा ? इस प्रकार बोल कर उसे हृदय से चाहने वाली उसकी तमाम सखियां विलाप करके देखने-सुनने वाले मनुष्यों को भी रुलाती थी ।

राजा ने अपनी इकलौती कुमारी को क्रोध में आ कर मार डालने की आज्ञा दे दी है यह बात फैलने पर शहर में कोलाहल-सा मच गया । शहर के बड़े-बड़े प्रतिष्ठित व्यक्ति राजा के पास आ-कर विनय पूर्वक प्रार्थना करने लगे—हे नरनाथ ! यह क्रोध करने का स्थान नही है । बच्चों से अपराध होने पर क्या उन्हें प्राणदण्ड की शिक्षा दी जा सकती है ? हे चतुर नराधीश ! यदि आपको ऐसा ही अनर्थ करना था तो स्वयम्बर-मण्डप का आडम्बर किसलिए रचाया ? कन्या के विवाह के लिए उत्सुक हो-कर आये हुए अनेक राजकुमारों को आप क्या उत्तर देंगे ?

इत्यादि अनेक प्रकारसे प्रजाके आगेवान व्यक्तियों ने महाराज वीरधवलको बहुत समझाया परंतु क्रोधांध

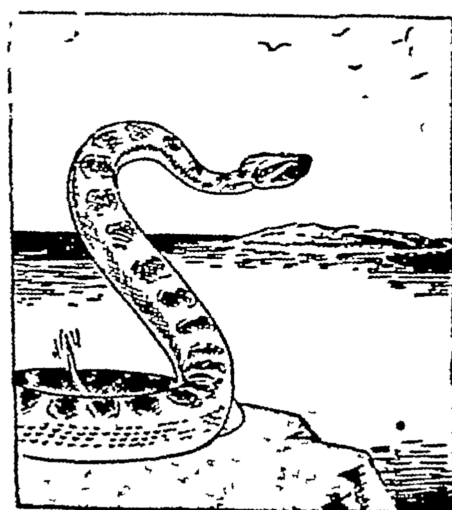
राजा अपने विचार से पीछे न हटा। नगर की स्त्रियां कहने लगीं—हाय महारानी चम्पकमाला कुमारी की माता होने पर भी अपनी सन्तान पर ऐसा जुल्म करते हुए राजा को मना नहीं करती। जितने मुँह उतनी ही बातें होती थीं, किंतु परिणाम में शून्य ही था।

अनेक राजपुरुषो से वेष्टित राजकुमारी उस अंध कूप के किनारे पर आ पहुँची। पंचपरमेष्टिमंत्र का शरण ले कर महाबलकुमार को याद करती हुई और दर्शकजनता के हाहाकार करते हुए राजकुमारी ने बिजली की झड़प से उस जल रहित कुँए में झंपा-पात कर दिया। हृदय को विदारण करने वाला यह भयानक दृश्य दयापूर्ण दिल वाले मनुष्यो से नही देखा गया। उनके नेत्रों से अविरल आसू बहने लगे। बहुत से आदमी राजा को कन्याघातक कह कर निन्दा करते थे। कितनेक दुर्दैव को उपालम्भ देकर उसे कोसते थे इस प्रकार कुमारी के दुःख से दुःखित होकर बड़े कष्ट से रात्रि को लोग वापिस अपने घरो को गये। राजपुरुषों ने भी शहर में आकर राज्यसभा में विचार

मग्न बैठे हुए महाराज वीरधवल को राजकुमारी के अन्धकूप में स्वयं गिर जाने की बात कह सुनाई।

कुमारी के मृत्यु का समाचार सुन कर राजा सकुटुम्ब आनन्दित हुआ। वह विचारने लगा—कुमारी की मृत्यु से मेरे राज्य और कुटुम्ब की रक्षा हो गई। स्वयंबर में आमन्त्रित सभी राजकुमारों को मैं अभी सन्देश भेज देता हूँ कि किसी गुप्त रोग के कारण मलयासुन्दरी की अकस्मात् मृत्यु हो गई है; इसलिए आप लोग स्वयम्बर में आने का कष्ट नहीं करें।





(१६)

पाप का घड़ा फूटा

मलयासुन्दरी की मृत्यु से राजकुल में शोक का कुछ भी चिह्न मालूम नही देता था। परन्तु कभी-कभी दास दासियो का टोला मिलकर आपस में मलया-सुन्दरी के गुणों को याद कर खेद प्रकट करता था। शहर के भी विशेष हिस्से में यही बात मालूम होती थी। जहाँ तहाँ पर स्त्री पुरुष मिलकर कुमारी का शोक प्रकट करते थे। यद्यपि राजा के मन में शोक का लेश भी न था, तथापि रह-रह कर कोई अव्यक्त वे-दना उसके हृदय को मसोसती थी। उसे लोक-लाज का भी थोड़ा बहुत भय जरूर था। राजकुटुम्ब में गत रात्रि का कुछ जागरण होने से एवं आज सारे दिन का थोड़ा बहुत खेद होने से ज्यों त्यों रात होती गई त्यों

त्यों राजमहल शांत स्थिति को धारण करता गया। तथापि अकस्मात् ही यह भयानक घटना बनने से इस घटना के साथ सम्बन्ध रखने वाले व्यक्तियों में अभी निद्रा देवी ने प्रवेश न किया था।

अर्धरात्रि का समय होने आया, सारे महल में शान्ति मालूम होती थी, इस समय दो मनुष्यों ने गुप्त वेष में रानी कनकवती के महल में प्रवेश किया। उस के रहने के कमरे के द्वार बन्द थे। वे दोनों पुरुष फिरते हुए दूसरे द्वार की तरफ लौटे। दरअसल में रानी के रहने के कमरे का यही मूलद्वार था जहां पर वे दोनों पुरुष अब आकर ठहरे है। दैववशात् कमरे का यह मुख्य द्वार भी उन्हे बन्द मिला, परन्तु द्वार के छिद्रों से अन्दर के दीपक का प्रकाश मालूम होता था। वे दोनों पुरुष चुपचाप वहां ही खड़े होगये और द्वार के छिद्र से दृष्टि लगाकर अन्दर देखने लगे।

इस समय कनकवती के आनन्द का पार न था। आज उसने उद्भट वेष पहना था। लक्ष्मीपुंज हार उसके हाथ में शोभ रहा था। हार के सन्मुख देखकर

वह हर्ष के आवेश में आकर बोलती थी—'हे दिव्य-हार ! मेरे बड़े सद्भाग्य से ही तू मेरे हाथ में आया है। तेरे ही प्रताप से मैंने आज अपने मनोवांछित कार्य को सिद्ध किया है। तुझे छिपा कर अनेक प्रपंच के वचनो से राजा को कोपित कर जन्मान्तर की वैरन मलयासुन्दरी को प्राणदण्ड दिला उससे बदला लिया है। चिन्तामणि के समान तेरी प्राप्ति भी बड़ी दुर्लभ है। अब से राजा को भी मेरे आधीन करके सदैव मुझे इच्छित फल की प्राप्ति कराना। हर्षावेश में कनकवती को इस समय इस बात का ध्यान बिल्कुल नही रहा था कि मैं क्या बोल रही हूं और मेरे इस नग्न सत्यपूर्ण कथन को कोई सुन तो नही रहा है।

कनकवती के हाथ में लक्ष्मीपुंज हार को देखकर उसके पूर्वोक्त वचनो को सुनते ही गुस्से के मारे उन दोनो का खून उबलने लगा। शान्त हुआ कोपानल फिर से अधिक भड़क उठा। उनमें से एक राजपुरुष सहसा चिल्ला कर बोला— ऐ पापिनी ! तूने मुझे प्रपञ्च में फँसा कर बुरी तरह ठग लिया ! निर्दोष

पुत्री के पास से हार चुरा कर प्रपंच के द्वारा मुझे कुपित कर निरपराध पुत्री का घात करवाया। हे दुष्टा कनकवती ! तूने मुझे कुटुम्ब सहित ठगा। मेरी उस मासूम लड़की ने तेरा क्या अपराध किया था ? उसने आज तक किसी चीटी तक को तकलीफ न पहुंचाई थी जिस पर ऐसा घोर कलंक !! इस प्रकार बोलता हुआ, जोर से द्वार को तोड़ कर और ऊँचे स्वर से पुकार करता हुआ दुःख से विकलित हो वह पुरुष मूर्छित होकर गिर पड़ा।

इस अर्धं रात्रि के समय कनकवती के महल में आने वाले ये दो व्यक्ति कौन है ? इस बात का भेद पाठकगण स्वयं समझ गये होगे। गश खा कर गिर पड़ने वाला स्वयं महाराज वीरधवल है और साथ में दूसरा मुख्यमन्त्री सुबुद्धि है।

वे रात्रिचर्या देखने हेतु गश्त देने निकले थे। उन्होंने अब तक सचाई जानने का प्रयास नही किया था, यदि इतनी दीर्घदृष्टि से सोचा होता तो मलयासुन्दरी को जीवितावस्था में अन्धकूप में धकेलने का

प्रसंग ही न आता। वे इस धारणा से कनकवती के महल पर आये थे कि कनकवती ने राज्य पर आक्रमण करने वाले और राजा को मार कर निर्वंश करने का भयंकर खुफिया भेद जान कर राज्य का महान् उपकार किया है इसलिए इस समय उसके पास जाकर कुछ विशेष हकीकत जाननी चाहिये और उसका बड़ा उपकार मानना चाहिये। इसी उद्देश्य से विशेष रात जाने पर भी मन्त्री और महाराज कनकवती के महल पर आये थे। परन्तु यहा आते ही कनकवती के उग्र पाप का घड़ा फूट गया—उसके गुप्त प्रपञ्च का पर्दा-फाश हो गया और उसके जाल में फँस कर, पूर्वा पर विचार न कर, राषभ-वृत्ति करने वाले राजा वीरधवल के हृदय का भी अन्धकार दूर हो गया।

राजा की पुकार और जमीन पर गिरने का शब्द सुनते ही सारे राजमहल में अकस्मात् कोलाहल हाहाकार मच गया। वहां पर शीघ्र ही अनेक राजपुरुष एकत्रित हो गये और राजा को होश में लाने का उपचार करने लगे।

सोमा कह रही है कि हे पथिकों ! इस अवसर का लाभ उठा कर मैं और मेरी स्वामिनी कनकवती दोनों मृत्यु के भय से पीछे की ओर वाली खिड़की से नीचे जमीन पर कूद पड़ी। हमें थोड़ी चोट तो जरूर लगी, परन्तु मौत के भय के आगे वह कुछ भी मालूम न हुई। हम वहां से भाग कर एक सूने मकान में जा घुसी और वहां छिप कर पास वाले रास्ते से आते-जाते व्यक्तियो की बातचीत सुनने लगी।

इतना कह कर सोमा बोली—हे कुमारो ! अभी तक जो मैंने आपके सामने वृत्तान्त कहा है यह सब मेरी नजरों के सामने हुई व अनुभव की हुई बात है। अब इसके बाद मैं जो कुछ कहूगी वह मैने छिप कर उस जनशून्य घर में रह कर लोगो के मुख से सुना हुआ है।

मलयासुन्दरी बोली—कुछ हरकत नहीं; फिर राजा की क्या दशा हुई ? यह सुनाओ।

सोमा—राजा कुछ देर बाद जागृत होते ही ऊँचे स्वर में पुकार करने लगा। भय से व्याकुल हो रानी

चम्पकमाला भी वहाँ आ पहुँची और प्रधान से कहने लगी—मन्त्री ! प्राणघातक अकस्मात् दूसरी कौनसी घटना घटित हुई ? अश्रुपात करते हुए सुबुद्धि नामक मन्त्री ने राजा के साथ स्वयं देखा हुआ तथा कानों से सुना हुआ कनकवती का सर्व वृत्तान्त महारानी चप-कमाला को कह सुनाया ।

राजकुमारी का सर्वथा निर्दोष होने और कनक-वती का प्रपंचजाल मन्त्री द्वारा मालूम होने पर मलया सुन्दरी की मृत्यु के शोक में तमाम लोगों की आँखों से आंसुओं की जलधार बहने लगी । रानी चम्पक-माला राजा के कण्ठ में कण्ठ मिला कर निर्दोष पुत्री के मृत्यु-शोक से करुण स्वर से रुदन करने लगी । इस समय सारे महल में ही नहीं बल्कि पूरे शहर में शोक का साम्राज्य छा गया । राजमहल में इतना करुणाजनक रुदन होने लगा कि जो सुनने वालों को भी रुलाये बिना न रहता था । विलाप करते हुए राजा और रानीको आश्वासन देते हुए मंत्री बोल उठा महाराज ! इस तरह रुदन करने से अब कुछ लाभ नहीं

नही होने वाला ! चलो जल्दी उठो और वहा जाकर उस अंधकूप में राजकुमारी की तलाश करें। कदाचित् हमारे पुण्योदय से राजकुमारी उस अन्धकूप में जिंदा हालत में मिल जाय।

रोना-धोना छोड़ कर राजा आदि अनेक मनुष्य मध्य रात्रि के समय उस अन्धकूप के पास जा पहुंचे। शीघ्र ही बड़ी-बड़ी मशालें जला कर प्रकाश का प्रबंध कर उस अन्धकूप में मंच द्वारा मनुष्यों को उतारा गया। परन्तु चारो तरफ तलाश करने पर भी उसमें राजकुमारी का कोई निशान तक न मिला। निराश होने के कारण क्रोधाग्नि से भभकता हुआ राजा वहां से वापिस रानी कनकवती के महल में आया। द्वार खुलवा कर अन्दर तलाश की परन्तु वहां कोई भी नजर नहीं आया। इसलिए महाराज ने राजपुरुषों को आज्ञा दी कि जाओ उस दुष्टा की तलाश करो; वह दुष्कृत करके कही भाग गई है! मालूम होता है वह पिछली खिड़की से कूद गई है। सब जगह तलाश कर उस दुष्टा को पकड़ लाओ।

हे सत्पुरुषों ! राजा वीरधवल की इस समय जो हालत है उसको देखते हुए वह रात्रि के व्यतीत होने तक भी जीवित रह जाय तो बड़ा भाग्य समझो। प्रातःकाल होने पर तो वह अवश्य ही चिता में प्रवेश करके प्राण त्याग करेगा उधर हमारी खोज मे फिरते हुए राजपुरुषों को देख कर कनकवती ने मुझसे कहा— 'अब हम दोनों को एक जगह रहना फायदेकारक नही है। यदि राजपुरुष हमें देख लेंगे तो शीघ्र ही मृत्यु की शरण कर देंगे। यों कह कर उसने मेरे पास से लक्ष्मी पुंजहार आदि सारी वस्तुएँ लेकर वह अपनी परिचिता मगधा नामक वेश्या के घर चली गई। वहाँ पर अकेली रहने की हिम्मत न पड़ने से मैं यहाँ से लुकती छिपती इस तरफ चली आरही हूँ।"

हे पथिको ! आपने जो मेरे भय का कारण और मेरा परिचय पूछा था; सो मैंने आपके सामने कह सुनाया।

महाबल—अहो ! आश्चर्य की बात ? दुष्टा ! स्त्रियों के कैसे विचित्र चरित्र होते है ! निर्दोष कन्या-

रत्न का नाश कराया ! राजा को मरणान्त कष्ट में डाला और अपने भी सुख का नाश कर, निन्दित होकर देश का त्याग किया। धिक्कार है ऐसी दुष्टा स्त्रियों की तुच्छ बुद्धि को !!!

पूर्वोक्त प्रकार से मलयासुन्दरी के संकट में पड़ने का रहस्योद्घाटन कर सोमा बोली—'अब रात्रि पूर्ण होने आई है; इसलिए न जाने मेरे पीछे मेरी खोज मे कोई राजपुरुष न आजाय, अतः मैं अब आगे जाती हूँ' यो कहती हुई और पीछे की ओर देखती हुई सोमा आगे चली गई। सोमा के चले जाने पर कुमार बोला कुमारी ! जिस रोज हमारा प्रथम मिलाप हुआ था उसी दिन ये वैर धारण करने वाली तुम्हारी सौतेली माता कनकवती ने मौका पाकर तुम्हें कष्ट में डाला है। हे सुलोचने ! कनकवती की दासी सोमा से ही मुझे तुम्हारा अति कष्टदायक वृत्तांत मालूम हो गया। अहो ! थोड़े ही समय में तुमने मृत्यु के समान कैसा महा भयंकर कष्ट सहा !

सुन्दरी ! उस अन्धकूप में झंपापात करने पर

और इस समय यहाँ पर अजगर के मुख से तुम्हारी प्राप्ति का यही कारण मालूम होता है, जब तुमने उस अन्धकूप में झपापात किया तब वहा पर रहे हुए इस अजगर ने तुम्हे मूर्छित अवस्था में निगल लिया। और उस अन्धकूप से बाहर निकलने का कोई मार्ग होगा उस मार्ग से निकल कर वह शीघ्र ही तुम्हे पचाने के लिये उस आम के वृक्ष से लपेटा देने के लिये यहां आया था। मैंने उसके दोनो जबड़े पकड़ कर उसे चीर डाला और उसके मुख से तुम्हें सीप से मोती के समान निकाल लिया।

पास ही में पड़े हुए अजगर को देखकर मलयासुन्दरी भयभीत हो उठी। महाबल बोला—'सुन्दरी ! अब तुम्हें डरने की जरूरत नही है ऐसी भयकर दशा में भी हमारा दुष्कर मिलाप भी हमारे अनुकूल भाग्य की सूचना करता है।

अब रात्रि व्यतीत होने आई थी; पूर्व दिशा ने अपने स्वामी सूर्य्य का आगमन जान कर लाल रंगकी साड़ी पहन ली थी। आकाश में टिमटिमाते हुए

कहीं पर राज पुरुष तुम्हारी ओर विशेष ध्यान से न देख पावें। मगधा वेश्या के घर जाकर आज की सारी रात तुम कनकवती और हार की खोज में निकालना। कल का सारा दिन भी वहां पर ही बिताना और संध्या के समय वापस यहां पर ही आना। मैं भी निर्धारित कार्य यथोचित करके वापस इसी भट्टारिका के मन्दिर में कल शाम को आऊंगा। दोनों का कल संध्या के समय यहां पर ही मिलाप होगा। मैं यहा से इस वक्त स्मशाम भूमि की ओर जाता हूं, क्योंकि तेरे वियोग से दुखित हुए तेरे माता पिताओं का रक्षण करना यह हमारा पहला कर्तव्य है। तुम्हारे हाथ में जो नामांकित अंगूठी है, यह मुझे दे दो क्यों कि शहर में इसे तुम्हारे हाथ में देख कर कोई चोर की भ्रान्ति में उपद्रव न खड़ा कर सके।

राजकुमारी ने महाबल की तमाम बातें विनीत भाव से ध्यानपूर्वक सुनी। कुमार का सहवास न छोड़ने की इच्छा होते हुए भी उसे मुद्रा रत्न दे कर

उसने उसकी तमाम बातों को शिरोधार्य किया । अब वे अपने-अपने कार्य की सिद्धि के लिए दोनों वहां से चल दिये । रास्ते में चलते हुए महावल विचारने लगा—स्वयम्बर में अपनी-अपनी सेना सहित अनेक राजकुमार आयेंगे, उस समय एक साधारण पथिकके समान स्वयम्बर में प्रवेश पाना भी असम्भव है । उस के पिता की सम्मति से राजकुमारी के साथ पाणि-ग्रहण करना तो दूर रहा परन्तु इस दशा में एकाकी उन राजकुमारों की पंक्ति में जाकर बैठना भी दुष्कर होगा । इसलिए मुझे ऐसे समय में अपने कार्य की सिद्धि हेतु कुछ प्रपंच अवश्य रचना पड़ेगा । जो कार्य्य बल से नहीं होता वह बुद्धिबल द्वारा सुगमता से हल किया जा सकता है । इत्यादि विचारों की उलझन में महाबल आगे बढे जा रहा था, इतने में ही एक वट-वृक्ष के नीचे एक हाथी बँधा देखा । उस हाथी के पास कई राजपुरुष उसकी लीद को पानी मे धो-धो कर चलनी में छान रहे थे । यह देख कर महाबल ने उसका कारण पूछा—

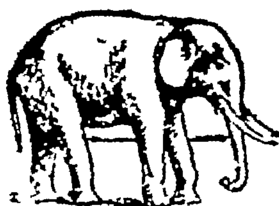
अनगिनत तारे धीरे-धीरे छिपते जा रहे थे। वृक्षों पर बैठे हुए पक्षियों ने चहचहाना शुरू कर दिया था। रात भर के क्षुधातुर पशु भी अपने भक्ष्य की खोज में इधर-उधर घूमने लगे थे। प्रातःक़ाल के मन्द और शीतल पवन से जंगल के बड़े-बड़े वृक्षों के डाल-पात हिल रहे थे। अब सूर्य्यदेव भी अपनी सुनहरी किरणो से जगत् को जागृत करने को उदयाचल पर बिराजमान हो गये थे। प्रातःकाल के ऐसे सुहावने समय में महाबल कुमार और पुरुषवेश धारक मलयासुन्दरी वहां से उठ कर समीपवर्ती गोला नदी पर आये। वहां पर दंतधावन तथा मुखप्रक्षालन आदि आवश्यक कार्यों से निबट कर वापिस उसी आम्र वृक्ष के नीचे आ गये और वहां आकर कुछ मात्रा में पके हुए आम्रफल खाये। इसके बाद वहां से चल कर गोला नदी के किनारे-किनारे वे भट्टारिका देवी के मठ पर आ पहुंचे।

वहां पर बहुत समयसे खड़ी की हुई काष्टफलियों को देखकर कुमार कुछ सोच-विचारके मस्तक हिलाता

हुआ राजकुमारी से बोला—सुन्दरी ! मुझे अब से मुख्य तीन काम करने होंगे, जिनमें पहला काम तुम्हारे वियोग से मरते हुए तुम्हारे माता पिता के प्राणों की रक्षा करना, दूसरा तुम्हारे माता पिता की सम्मति से अनेक राजकुमारों के समक्ष स्वयंबर में तुम्हारा पाणि-ग्रहण करना और तीसरा लक्ष्मीपुंज हार को स्वाधीन कर माता को देकर उनके प्राण बचा कर उनके समक्ष की हुई अपनी प्रतिज्ञा को पूर्ण करना है।

सुन्दरी ! इन तीनों कार्यों मे मुझे तुम्हारी पूर्ण सहायता लेना होगी। लक्ष्मीपुंज हार को स्वाधीन करना यह कार्य तुम्हें अपने जिम्मे लेना होगा। यह तुम्हारा पुरुष वेष अभी कुछ समय तक ऐसा ही रखना पड़ेगा। तुम्हें यहां से मगधा वेश्या के घर जाना चाहिये क्योकि अभी तक कनकवती वहां पर ही होगी। वहा जाकर तुम्हे ऐसा आचरण करना चाहिये कि जिससे कनकवती के पास रहा हुआ लक्ष्मीपुंज हार तुम्हारे हाथ आजाए। एक बात विशेषतया ध्यान में रखना, नगर में इस तरह प्रवेश करना कि

राजपुरुषों ने उत्तर दिया— महाशयजी ! कल बहुत-से लड़कों के साथ यहां पर राजकुमार आये थे उस समय एक गन्ने में अपने गले की स्वर्ण-जंजीर लपेट कर वे यहां खेलने लगे। गन्ना हाथी के पास गिर जाने से उसने सोने की जंजीर सहित उस गन्ने को अपनी सूँड से उठा कर खा लिया। अब उस जंजीर को पाने के लिए राजा की आज्ञा से हम लोग हाथी की लीद को पानी में धो कर छान रहे है। यह बात सुन कर महाबलकुमार ने उन सबकी आँख बचा कर एक घास का पूला उठा लिया और उसमें राजकुमारी की नामांकित सुवर्ण-मुद्रिका (अंगूठी) डाल कर पूला हाथी के सामने फेंक दिया। उस पूले को जब हाथी ने अपनी सूँड से उठा कर खा लिया तब महाबल वहां से चल पड़ा।



(१७)
सिद्ध ज्योतिषि

लगभग एक पहर दिन चढ़ चुका था। इस समय गोला नदी के किनारे हजारों मनुष्यों का जमघट लगा था, पास में ही एक चिता बनी हुई थी। उस में से मन्द मन्द धूम्र की शिखा काले आकाश के कालेपन में वृद्धि कर रही थी।

इस समय हाथ ऊंचा किये हुए एक सिद्ध ज्योतिषी उन लोगो के जमघट की तरफ दौड़ा हुआ आता नजर आया। वह जोर जोर से चिल्ला रहा था ठहरो ! ठहरो ! साहस मत करो, राजकुमारी मलयासुन्दरी अभी जीवित है।

कानों को अमृत के समान उस सिद्ध ज्योतिषी के वचन सुन कर उस भीड़ में से कई लोग उसके सामने

दौड़े और उसे और भी जल्दी आने के लिये हाथों का इशारा करने लगे। तमाम लोगों की नजर उस आगन्तुक ज्योतिषी की तरफ ही लगी हुई थी। उसके नजदीक आते ही उत्सुकता के साथ कई आदमी बोल पड़े, हे महानुभाव ! क्या राजकुमारी कहीं जीवित है ?

सिद्ध—"हां हां कुमारी जीवित है और वह सुख में है" यह सुन हर्षित हो भीगे हुए कपड़े धारण किये हुए महाराजा वीरधवल और रानी चम्पकमाला आतुरता से बोले "क्या सच ही हमारी पुत्री मलयासुन्दरी जीवित है ?"

सिद्ध—',महाराज ! राजकुमारी कुए में पड़ने से मरी नहीं, वह अभी जीवित है। मैं आप को सब कुछ बतलाऊंगा, आप पहले पानी से इस चिता को ठण्डी करवा दें। राजा की आज्ञा न होने पर भी कई राजपुरुषों ने चिता को ठण्डी कर दिया। ज्योतिषि बोला—महाराज ! मैं जो कुछ कहूँगा उसमें आप पूर्ण विश्वास रखें। मैंने अष्टांग-निमित्त शास्त्र का खूब

अध्ययन किया है। अतः मैं अपने अचूक निमित्त ज्ञान से ठीक कह रहा हूं कि आप धैर्य धारण करे और व्याकुलता का परित्याग कर स्वस्थ हो जायँ ! मलया सुन्दरी जीवित है और वह आपको अवश्य मिलेगी।

सिद्ध ज्योतिषि के अमृत-तुल्य वचन सुन कर प्रसन्न हो राजा बोला—निम्तिज्ञ महाशय ! क्या मेरा इतना पुण्य अभी बाकी है कि यमराज के उदर समान उस अन्धकूप में गिर जाने वाली मेरी निर्दोष पुत्री को मैं फिरसे इन आँखों से जीवितावस्था में देख सकूँ ? मैंने कल रात को ही उसे उस अन्ध-कूप में तलाश करवाया परन्तु वहां पर उसका पद-चिन्ह तक का पता न लगा, इसलिए मालूम होता है कि उसे अवश्य ही किसी हिंसक प्राणी ने भक्षण कर लिया होगा ! हाय ! संतान-घातक मुझ पापी को आश्वासन देकर मरण की शरण लेने से क्यों रोकते हो ?

सिद्धज्योतिषि—राजन् ! आज जेठ माह की कृष्ण पक्ष की द्वादशी है। आज से तीसरे दिन अर्थात् चतुर्दशी को जब विभिन्न प्रदेशो के अनेक राजकुमार

हाथ जोड़ कर उस निमित्तज्ञान-शिरोमणि सिद्ध ज्योतिषी से बोले—महानुभाव ! आप कृपा कर हमारी यह तुच्छ भेंट स्वीकार कीजिये। इस समय आपने जो हम पर उपकार किया है, उसके बदले में हम यदि अपना सर्वस्व भी दे डालें तो भी वह कम होगा।

सिद्ध ज्योतिषी बोला—सज्जनों ! मैं तुमसे प्रत्युपकार में एक कौड़ी भी न लूंगा। क्योंकि उपकार के बदले में यदि कुछ ले लिया जाय तो वह उपकार कैसा ? सिद्धज्योतिषी के निस्पृह वचन सुन कर राजा और प्रजा को बड़ा आश्चर्य हुआ और उन्हें उसके वचनों पर विशेष श्रद्धा जम गई।

राजा बोला—सिद्धज्योतिषीजी ! स्तम्भ के पूजन का जो विधान आपने बतलाया है वह सब आपको ही करना होगा। जबतक आपके कथनानुसार सब बातें न मिलेगी तब तक आपको यहीं रहना होगा। सिद्ध ज्योतिषी ने महाराज वीरधवल की आज्ञा शिरोधार्य की। महाराज ने विशेष आश्चर्य से पूछा— ज्ञानी महाशय ! आशाजनक ये तमाम बाते तो आपने हमें

बतलाई परन्तु आप कृपया अपनी ज्ञानदृष्टि से देख कर यह भी बतलायें कि मेरी पुत्री मलयासुन्दरी का विवाह किसके साथ होगा ? सिद्धज्योतिषी ने थोड़ी देर ध्यानस्थ मुद्रा में रह कर बड़ी गम्भीरता से कहा —पृथ्वीस्थानपुर के नरेश महाराज सूरपाल का पुत्र महाबलकुमार आपकी पुत्री मलयासुन्दरी का वरण करेगा। वरकन्या का योग्य मिलाप होगा, यह समझ कर वहां पर मौजूद तमाम लोग सिध्द ज्योतिषी के अद्भुत ज्योतिषज्ञान की प्रशसा करने लगे।

अब पूर्ण मध्यान्ह का समय होने आया था। अतः सुबुद्धि मन्त्रीने महाराज वीरधवल से हाथ जोड़ कर प्रार्थना की कि महाराज ! अब समय बहुत हो गया। आपको राजमहल में पधारना चाहिये। मन्त्री के वचन सुन सिदुधज्योतिषी को साथ ले महाराज वीरधवल ने बड़े समारोह के साथ याचकों को दान देते हुए नगर में प्रवेश किया। स्नानादि से निश्चिन्त हो कर महाराज ने सर्व प्रथम सिदुध ज्योतिषी को भोजन कराया फिर आप भोजन किया। बाद में ज्यो-

आ कर स्वयम्बर–मण्डप में विराजमान हुए होंगे उस समय हजारों व्यक्तियों के समक्ष दोपहर के वाद अनेक वस्त्राभूषणों से विभूषित राजकुमारी का सबको दर्शन होगा। राजन् ! आप उत्साह पूर्वक स्वयम्वर मण्डप को तय्यारी करावें। देशदेशांतर से आने वाले राजकुमारों को कुमारी के मर जाने की आशंका से मत रोकिये। यदि आपको मेरे कथन पर विश्वास न आता हो तो ज्ञानदृष्टि से देख कर, अपने वचनों की प्रतीति दिलाने के लिए आपको इच्छा हो तो मैं कुछ प्रमाण भी बतला सकता हूं।

राजा की सहमति होने से सिद्धज्योतिषि कुछ देर ध्यानस्थ-सा रह कर बोला—महाराज ! कुमारी के हाथ का नामांकित मुद्रारत्न कल ही आपको मिलना चाहिये। चतुर्दशी के दिन प्रातःकाल नगर के पूर्व दरवाजे के पास राजकुमारों की परीक्षा के लिए लग-भग छः हाथ प्रमाण लम्बा और अनेक प्रकार के रंगों से चित्रित एक स्तम्भ कहींसे आपकी गौत्रदेवी लाकर रखेंगी। वह स्तम्भ आपको स्वयम्बर-मण्डपमें स्थापन

करना होगा; उसके पास वज्रसार नामक धनुष जो तुम्हारे घर मौजूद है बाण सहित पूजन कर रखना होगा। उस धनुष पर बाण चढ़ा कर जो मनुष्य उस स्तम्भ का भेदन करेगा वही राजकुमारी का पाणिग्रहण करेगा। उस स्तम्भ की कुछ पूजन-विधि भी करनी होगी। हे राजन्! ये तमाम बातें मैंने ज्योतिष-ज्ञान बल के आधार से जान कर आपको बतलाई है। मेरे बतलाये हुए इन प्रमाण या निशानियों में फरक मालूम पड़े तो आप अपनी इच्छानुसार कर सकते हैं।

सिद्धज्योतिषी ने उपर्युक्त बातें ऐसे ढङ्ग से कही कि जिससे राजा और वहांपर उपस्थित समस्त जनता के दिल पर बड़ा भारी प्रभाव पड़ा। राजाके हृदय में विश्वास जमने के साथ ही जनता को इतना आनन्द हुआ कि हजारों मनुष्य हर्षित हो मुक्त कण्ठ से उस सिद्धज्योतिषी की प्रशंसा करने लगे और मारे खुशी के लोगो ने अपने शरीर से कीमती वस्त्राभूषण उतार-उतार-कर उसके सामने ढेर लगा दिया। सब लोग

तिषी के साथ वार्त्तालाप करते हुए दिन के दोनों पिछले पहर और कुछ निद्रा लेने पूर्वक सारी रात्रि का समय राजाने आनन्द से व्यतीत किया। प्रातःकाल होते ही हाथी की लीद छानने वाले मनुष्य महाराजके पास आकर हाथ जोड़ निम्न प्रकार से निवेदन करने लगे :—

महाराज ! विशेष कुछ नही जानते, हाथी की लीद छानते हुए उसमें से राजकुमारी की यह नामाकित अगूठी हमें मिली है। यों कह कर उन्होंने वह अगूठी महाराज को दे दी। राजा कुमारी की मुद्रिका को देख मस्तक हिलाने लगा और निर्निमेष दृष्टि से उस सिद्धज्योतिषी की ओर देखने लगा। यह देख उत्साहपूर्वक हिम्मत करके ज्योतिषी बोला—महाराज ! ज्ञानी का बतलाया हुआ भविष्य कभी अन्यथा नही होता।

एक लम्बा सास लेते हुए राजा ने कहा— ज्ञानी महाशय ! कुमारी का यह मुद्रारत्न मदोन्मत्त हाथी के पेट में किस तरह पहुँच गया होगा ? इससे मुझे

निराशा-जनक शंका पैदा होती है।

सिद्ध ज्योतिषी बोला—'राजन् ! हाथी के पेट में मुद्रा-रत्न जाने का रहस्य मेरे ज्ञान में स्पष्टतया मालूम नही होता, तथापि यह सर्वप्रभाव आपकी कुलदेवी का ही मालूम होता है।' यह बात सुन कर राजा को हर्ष के साथ संतोष पैदा हुआ और उसने इस प्रमाण के मिलने पर स्वयंबर मडप तो प्रायः प्रथम ही संपूर्ण तैयार हो चुका था, परन्तु बीच में इस दुर्घटना का विघ्न पड़ने के कारण कुछ थोड़ा सा काम शेष रह गया था, वह अब मुद्रा-रत्न की प्राप्तिजन्य प्रतीति से पूर्ण होने लगा।

दूसरी तरफ राजा और राजकुमारों के ठहरने के लिए निवास स्थान भी तैयार कराए गये। स्वयंबर मंडप की सभी तैयारियां होती हुई देखकर शहर के बहुत से मनुष्य तरह-तरह की बातें करते थे। देखो ! राजा की कितनी मूर्खता है ? कन्या को मरवा कर स्वयंबर मडप रचा रहा है। यदि कदाचित् ज्योतिषी के कहे अनुसार राज-कन्या न मिली तो स्वयंबर में

आए हुए राजकुमारों को वह क्या उत्तर देगा ? इससे देश भर में राजा की कितनी लघुता होगी इस बात का उसे कुछ खयाल है ? अगर ऐसा हुआ तो निराशा और अपमान से क्रोधित हो देश-देशान्तर से आए हुए वे राजकुमार राजा को कुछ उपद्रव न करेंगे ? कोई जवाब देता है कि भाई ! इस समय इस विषय में युक्तायुक्त कुछ नहीं कह सकते। समय आने पर सब कुछ देखा जायगा।

संन्ध्या के समय चारों दिशाओं से अनेक राजा और राजकुमार अपने-अपने परिवार सहित चंद्रावती में आने लगे। महाराज वीरधवल ने उन सबको सन्मान पूर्वक अलग अलग ठहरने के स्थान समर्पण किये सिद्ध-ज्योतिषी ने राजा से कहा—राजन् ! मुझे एक मंत्र साधना है, वह आधा तो सिद्ध हो चुका है, परन्तु आधा सिद्ध करना बाकी रहा है। यदि वह शेष रहा हुआ मंत्र आज रात को सिद्ध न किया जाय तो मेरा कार्य सिद्ध होना असंभवित है, इसलिए उस मंत्र को सिद्ध करने के लिए आज की रात मुझे आपकी आज्ञा मिलनी

चाहिये। प्रातःकाल होते ही मैं आपकी सेवामें उपस्थित हो जाऊँगा राजा ने खुश होकर सिद्धज्योतिषी से शेष मन्त्र साधने की आज्ञा देकर कहा "मंत्र साधने के लिये जो कुछ उपयोगी वस्तु या द्रव्य आवश्यकता हो सो जरूर साथ लेते जाइये। राजा के कहने से थोड़ा सा द्रव्य साथ ले सूर्यास्त हुए बाद सिद्ध ज्योतिषी वहां से बाहर निकल गया। अब उस के गये बाद आशा निराशा जनक अनेक प्रकार की विचार-तरगों में गोता खाते हुए राजा ने बड़े कष्ट से रात बिताई।

प्रात.काल शहर के द्वार खुलते ही सिद्धज्योतिषी राजमहल में राजा वीरधवल से आ मिला। उसे देखकर महाराज वीरधवल के हर्ष का पार न रहा और वह उत्सुकता पूर्वक बोल उठा— "महानुभाव ! ज्ञानी ! तुम्हारा मंत्र सिद्ध हो गया ?" सिद्धज्योतिषी बोला "महाराज वह कोई साधारण मत्र नही है, बड़ा दुःसाध्य है, उसका बहुतसा अंश तो सिद्ध कर आया हूं परन्तु कुछ हिस्सा और करना

बाकी रहा है। मैं कल संध्या समय आपको प्रातः-काल आने का वचन दे गया था इसी कारण और आप अधीर न हों इसी लिये मुझे दूसरे काम की परवाह न करके आपकी सेवा में उपस्थित होना पड़ा। अब स्तम्भ की अर्चन विधि कर शेष रहे मत्र की सिद्धि के लिए मुझे वापिस जाना पड़ेगा।

यह सुन कर प्रसन्न हो महाराज वीरधवल मुक्त-कण्ठ से सिद्ध ज्योतिषी की प्रशंसा करने लगा और मन ही मन सोचने लगा—अहो! यह ज्योतिषी कैसा परोपकारी? सचमुच ही ऐसे ज्ञानवान परोपकारी मनुष्य अपने कहे हुए वचन को पालन करने में बड़े तत्पर होते है, दूसरों के कार्य के लिए निष्कारण इस प्रकार कष्ट उठाने वाले संसार में विरले ही मनुष्य होते है। इस प्रकार जब राजा ज्योतिषी की मन ही मन प्रशंसा कर रहा था ठीक उसी समय स्तम्भ की तलाश में नगर से बाहर भेजे हुए राजपुरुष वहां पर आ पहुंचे और राजा से हाथ जोड़ कर कहने लगे—महाराज! आपकी आज्ञा पाकर स्तम्भ की शोध में

हम शहर से बाहर गये थे वहां पर तलाश करते हुए दरवाजे से बांई तरफ किले के कोने में विचित्र चित्रों से चित्रित एक महान् स्तम्भ सीधा खड़ा देखने में आया है।

यह बात सुनते ही सिद्ध पुरुष के ज्ञान की प्रशंसा करता हुआ महाराज वीरधवल सिद्ध ज्योतिषी और उन राजपुरुषो को साथ ले नगर से बाहर स्तम्भ के पास आया। उस विचित्र काष्टस्तम्भ को देख कर सब लोगों को बडा आश्चर्य हुआ। वे सबके सब आँखे फाड़-फाड़ कर उस स्तम्भ को देखने लगे। कितने ही प्रधान पुरुष उस स्तम्भ को हाथ लगा कर देखने को तैयार हुए परन्तु सिद्धज्योतिषी ने शीघ्र ही आगे आ कर उन्हें वैसा करने को रोक दिया और कहा—बिना स्नान किये यदि कोई भी मनुष्य इस स्तम्भ को हाथ लगायगा तो राजकुल की देवी रुष्ट हो जायगी। सिद्ध ज्योतिषी के कहने से राजा आदि तमाम प्रधान व्यक्ति पीछे हट गये।

अब स्नान कर पुष्पादि पूजा की सामग्री मँगवा

कर सिद्ध ज्योतिषी ने स्वयं स्तम्भ की पूजा प्रारम्भ की। उसने पद्मासन लगा कर ध्यानस्थ मुद्रा में बैठ, ह्रींकार आदि मन्त्रोच्चारण द्वारा जाप शुरू किया। कुछ देर वाद गायन और नृत्यादि संगीत प्रारम्भ करवाया।

इस प्रकार लगभग डेढ़ प्रहर -दिन चढने तक पूजन-विधि का कार्यक्रम चलता रहा। इसके वाद ४ बलवान पुरुषों को स्नान करवा कर उनके गले में सुगन्धित पुष्पों की माला पहना कर उनके द्वारा वह स्तम्भ उठवा कर राजा तमाम मनुष्यों और सिद्ध-ज्योतिषी सहित नगर की तरफ चल पड़े। स्तम्भ के आगे नाच और गाना हो रहा था। बन्दीजन जयजय की ध्वनि कर रहे थे। इस प्रकार आदर और सन्मान पूर्वक वह स्तम्भ स्वयम्वर–मण्डप में लाया गया। वहां पर छः हाथ की लम्बी एक शिला मँगवा कर जमीन में सीधी गड़वा कर खड़ी की गई। सिद्ध–ज्योतिषी के कथनानुसार उस शिला के आधार से उस स्तम्भ को हिफाजत के साथ सीधा खड़ा किया

गया। शिलाके पश्चिम की ओर वज्रसार धनुष बाण सहित रख दिया गया। दक्षिण और उत्तर की तरफ स्वयम्बर में आये हुए राजा तथा राजकुमारों के सिंहासन लगाये गये। मण्डप में गन्धर्वों ने मधुर स्वरो में संगीत शुरू किया। नाचने वाली सुन्दरियों ने ताल और लय के साथ नृत्य प्रारम्भ किया। इस वक्त धनुष और बाण का पूजन कर सिद्ध ज्योतिषीने राजा से स्वयम्बर में तमाम राजकुमारों को बुलवाने के लिए कहा। राजाके निमन्त्रण करने पर तमाम राजकुमारादि स्वयम्बर मण्डप में आकर अपने-अपने पहले से निर्धारित सिंहासनों पर बैठ गये। सबके साथ में अपनी-अपनी योग्यतानुसार परिवार भी था। महाराज वीरधवल को राजकुमारों को यथायोग्य स्थान देने और उनका सत्मान करने में व्यस्त देख सिद्ध-ज्योतिषी एकाएक वहां से गायब हो गया।

जिस समय स्वयम्वर में आने वाले राजा व राज कुमारादि अपने-अपने सिंहासनो पर परिवार सहित आ बैठे उस समय महाराज वीरधवल ने पीछे पलट

कर देखा तो वहां सिद्धज्योतिषी नजर नहीं आया। मण्डप में चारों ओर नजर घुमाने पर भी जब वह कहीं भी दिखाई न दिया तब राजा ने उसे अपने राज पुरुषों से सब जगह तलाश कराया, परन्तु कही परभी उसका पता न लगा। विचार में पड़े हुए राजा को कुछ देर बाद याद आया कि वह अपने अर्धसाधित मंत्र को सिद्ध करने गया होगा।

सिद्धज्योतिषी की कही हुई तमाम बातें अभी तक पूरी तरह सत्य साबित हुई है; परन्तु उसने जो यह कहा था कि राजकुमारी का पाणिग्रहण पृथ्वी-स्थानपुर के नरेश सूरपाल का पुत्र महाबल करेगा। यह बात अभी तक नही मिली। किसी कारण वह इस स्वयम्बर-महोत्सव में यहां पर नही आ सका होगा तब फिर वह मेरी कन्या का पाणिग्रहण किस प्रकार करेगा ? राजा इन्ही विचारों की उलझन में पड़ गया इधर अपने-अपने स्थान पर स्वयम्बर में बैठे हुए राज-कुमारों ने राजकन्या को वहां पर न देख कर और किसी के द्वारा यह सुन कर कि राजकुमारी को स्वयं

अन्धकूप में डलवा दिया है, वे परस्पर वार्तालाप करने लगे, क्यों भाई ! आप किसलिए यहां पधारे है ? स्व-यंबर मंडप मे बैठकर किसलिए मूछों पर ताव दे रहे हैं ! जिसकी आशा में आप यहां पधारे हैं उसे तो राजा ने कूप मे गिरवा दिया है । उठो किसका पाणि-ग्रहण करोगे ? क्या यह मण्डप रच कर स्वयबर के बहाने हमें यहां पर बुलवाकर राजा ने हमको मूर्ख तो नही बनाया ? इत्यादि बाते कह कर वे परस्पर एक दूसरे का मन उत्तेजित करने लगे ।

इसी समय महाराज वीरधवल की आज्ञा से एक राज-पुरुष ने खड़े होकर निवेदन किया । दुर्धर बाहुबल धारण करने वाले राजा महाराजा और राजकुमारो ! आप सावधान होकर सुने, यह जो आप लोगो के सा-मने वज्रसार नामक धनुष रक्खा है इस पर लीला पूर्वक प्रत्यंच चढ़ाकर, दृढ़ नाराच के एक ही प्रहार से दो हाथ प्रमाण इस स्तम्भ के अग्र भाग को भेद कर, जो बलवान राजा या राजकुमार इसके दो हिस्से कर देगा वही कही से भी प्रकट होने वाली राजकुमारी

मलयासुन्दरी का पाणिग्रहण करेगा, इस तरह हमें हमारी गोत्र देवी ने कहा हुआ है। इसलिए हे सामर्थ्यवान् राजकुमारों! आप इस स्तम्भ को भेदन करने का प्रयत्न करें। उस राजपुरुष के वचनों से प्रेरित हो महान् उत्साही लाट देश का नरेश खड़ा हुआ, परन्तु धनुष की दुर्घर्षता देख हिम्मत हारकर वापिस अपने आसन पर बैठ गया।

चारण की प्रेरणा से चोल देश के राजकुमार ने अपने आसन से उठकर जमीन पर पैर तो रक्खा परन्तु वज्रसार धनुष की उत्कटता देखकर उसके मुख पर ग्लानि छा गई अतः सबकी हँसी पूर्वक उसे वापस अपने स्थान पर बैठ जाना पड़ा।

आमर्ष से उठा हुआ गौड़ देश का राजा धनुष को हाथ में उठाते ही उसके वजन से जमीन पर गिर पड़ा, यह देख सभा में बैठे हुए समस्त राजकुमार तालियाँ बजाने लगे। इससे शर्मिन्दा होकर गौड़ देश के नरेश को भी नीचा मुँह कर अपने स्थान पर बैठ जाना पड़ा।

कर्नाटक देश के राजकुमार ने जोश में आकर धनुष को उठा तो लिया, परन्तु उस पर बाण चढ़ाते ही वह झुककर जमीन पर गिर गया। इस प्रकार बहुत से राजा व राजकुमारो का अपमान देख कितने ही तो अपने स्थान से उठे तक नही। कितने ही लक्ष्य से भ्रष्ट हुए, कई ने स्तम्भ पर बाण भी मारा परन्तु स्तम्भ के दो भाग न हुए। अनेक राजकुमार अपने उद्देश्य की पूर्ति में असफल हो हारे हुए पहलवान के समान लज्जित होकर चुप-चाप अपने स्थान पर जा बैठे। वह दृश्य देखकर महाराज वीरधवल चिन्ता समुद्र में गोते खाने लगे। वह सोच रहे थे कि अभी तक कन्या प्रकट नही हुई, इससे लोगों में मेरी बड़ी हँसी और अपमान होगा।

राजा वीरधवल को चिन्तातुर देख मण्डप में वीणा बजाने वालों में से एक युवक वीणा बजाता हुआ उठा और वह स्तम्भ के पास आ खड़ा हुआ। उसने अपनी वीणा वादन की कला से सारी सभा को मोहित कर दिया, फिर धनुष को हाथ में लेकर वह महाराज वीर-

धवल से बोला—राजन् ! अब आप मेरा भी सामर्थ्य देखें यों कह उसने शीघ्र ही धनुष पर बाण चढ़ा दिया उस वीणा-वादक के हाथ में धनुष बाण देखकर पूरी सभा में कोलाहल मच गया। बहुत से मनुष्य उसे धनुष-बाण जमीन पर रख देने के लिए बोलने लगे। परन्तु उसने सबकी बातें सुनी अनसुनी कर धनुप पर एक टंकार किया और उस स्तम्भ के मर्म को जानने के कारण स्तम्भ के जोड़ पर ज़ोर से बाण मारा। स्तम्भ पर बाण लगते ही उसके दोनों संपुट एक साथ ही खुल गये और उसके बीच से अकस्मात् राजकुमारी प्रकट हो गई।

पाठक महाशय ! आपके दिल में इस बात को जानने की जिज्ञासा पैदा हुई होगी कि वह वीणा वा-दक कौन है ? और इन सब कार्यों की योजना कराने वाला वह सिद्ध ज्योतिषी जो इस समय गुम है कौन था ? आपकी इस उत्कंठा को शान्त कराने के लिए इस विषय में थोड़ा यहां बता देते है। वह अन्य कोई नहीं था परन्तु इसी कथानक का मुख्य पात्र महाबल

कुमार ही है। कुमारी के हाथ की अंगूठी वाला घास का पूला हाथी को खिला कर आगे चलते हुए अपने आपको छिपाने के लिये महाबल ने सिद्ध ज्योतिषी का वेश धारण किया था और इसी वेश के द्वारा उसने राजा को मृत्यु के मुँह से बचाया था। उस समय सिद्धज्योतिषी के सिवा 'मलयासुन्दरी जीवित है' यह बात अन्य किसी के वचन पर राजा को विश्वास आना अशक्य था। मलयासुन्दरी को वैसी ही दशा में महाराज वीरधवल को सुपूर्द कर देना यह भी उस अकेले युवक के लिये हितकर नही था और वैसा करना मलयासुन्दरी के लिए प्रतिष्ठा या गौरव बढ़ाने की बात भी नही थी, इत्यादि अनेक बातों पर पहले विचार कर समयानुसार उचित समझ कर ही राज-कुमार ने सिद्धज्योतिषी का रूप धारण किया था। अपना वह प्रपंच प्रकट न हो या उस परिस्थिति में रहने से राजकुमारी का पाणिग्रहण करना कठिन होगा, इस कारण अब वह स्वयम्बर मंडप में-से गुम होकर और दिव्य प्रभावशाली गुटिका के प्रयोग से

अपना रूप बदल कर वीणा-वादक के वेश में मण्डप में आ बैठा था। दूसरे अन्य किसी वेश में उस सभामें स्थान मिलना कठिन था। तथा उसने राजकुमारी के साथ प्रथम से ही यह संकेत भी किया हुआ था कि जब मैं वीणा बजाऊँ तब तुम यन्त्र प्रयोग से लगाई हुई अन्दर की कील को खींच लेना। इससे स्तम्भ के दोनो भाग स्वयं खुल जायँगे। इत्यादि कारणों से उसे वीणा-वादक का रूप बनाना पड़ा था। साथ में कोई भी परिवार वाले न होने के कारण अनेक राजकुमारों से भरे हुए स्वयम्बर मण्डप में एकाएक असली रूप में प्रकट होना योग्य भी न था।



(१८)

मलयासुन्दरी स्वयंबरमंडप में

मलयासुन्दरी को स्वयम्बरमण्डप में देख कर सारी राज्यसभा आश्चर्यचकित हो गई। उसके शरीर पर कपूर चन्दन कस्तूरी आदि सुगन्धित पदार्थों का विलेपन किया हुआ था। सुन्दर वस्त्र और दिव्य अलकार पहने हुए थे। उसके वक्षस्थल पर लक्ष्मीपुन्ज नामक दिव्य हार शोभ रहा था। मुख में पान और दाहिने हाथ में वरमाला धारण किये हुए थी। मलयासुन्दरी को अकस्मात इस अलंकृत अवस्था में देख कर महाराज वीरधवल और रानी चम्पकमाला के हर्ष का पार न रहा। महाराज वीरधवल हर्ष के आवेश में राजकुमारी के नजदीक आ उत्सुकता से पूछने लगा

—'प्यारी पुत्री मलया ! तू इस काष्टस्तम्भ में कब और कैसे आ गई ?

शुभाशुभ कर्म के परिणाम को समझने वाली व इसी कारण पिता को नही अपितु अपने ही कर्मों को दोष देने वाली मलयासुन्दरी ने पिताकी ओर स्नेहभरी दृष्टि से देखते हुए उत्तर दिया—'पिताजी ! जिसकी कृपा से मैं अब तक जीवित रही हूं, वह कुलदेवी ही इस बात को जानती है।'

कुमारी को पहले के समान ही बोलती हुई देख, तमाम राजकुटुम्बी उसके पास आ कर प्रेम भरे शब्दों मे कहने लगे—'कुमारी ! हम तुम्हे याद ही करते थे कि क्या हम इन नेत्रो से अब फिर तुम्हे देख सकेंगे !' आज अकस्मात् ही आशा लगाये हुए चातक को शांति देने वाले मेघ के समान तुम्हारा दर्शन बड़े पुण्ययोग से प्राप्त हुआ है।'

चम्पकमाला—(हर्षाश्रु भरे नेत्रों से) 'प्यारी पुत्री ! मैंने तेरी माता होते हुए भी तेरे साथ वैरन के समान व्यवहार किया। बेटी ! ऐसा घोर दुःख तुमने

कैसे सहन किया होगा ? निर्दोष पुत्री ! अपने अज्ञानी माता-पिता के इस घोर अपराध को क्षमा करना।

राजा—'विनीत पुत्री ! अन्धकूप में पड़ते ही हमारी कुलदेवी ने तुझे अधर धारण कर अपने पास रखी होगी। तुझे योग्य वर प्राप्त हो इस हेतु से राजकुमारो के बल की परीक्षा के लिए इस स्तम्भ में रखा होगा ऐसा मालूम होता है। कनकवती के पास से यह लक्ष्मीपुंज हार वापिस ले कर तेरे गले मे पहिना दिव्य वस्त्राभूषणों से शृंगारित कर हाथ में वरमाला देती हुई उस कुलदेवी ने ही तुझे विभूषित की है ऐसा मालूम होता है। बेटी ! जिस काष्ठ-स्तम्भ के भीतर से तू प्रकट हुई है यह स्तम्भ इस पाणिग्रहण महोत्सव के प्रसग पर हमे आज ही प्राप्त हुआ है। यह तमाम वृत्तांत हमें एक सिद्धज्योतिषी ने बतलाया था, परन्तु हमारे कुल की रक्षा करने वाली कुलदेवी ने हमे आज तक कभी स्वप्न में भी यह बात नही बताई। न जाने इसका क्या कारण होगा ? कदाचित् संभव है उस सिद्धज्योतिषी के रूप में ही कुलदेवी ने हमारी सहा-

यता की हो। मलयासुन्दरी मनही मन मुस्कुराती हुई सोचती है कि यह कार्य कुलदेवी का है या कुलदीपक का है यह इनको क्या मालूम ?

मंत्री ! सिद्धज्योतिषी की तमाम बाते सत्य सिद्ध हुईं परन्तु एक ही बात मेरे दिल में खटकती है और वह यह कि उसने कहा था—'राजकुमारी का पाणि-ग्रहण महाराज सूरपाल का पुत्र महाबलकुमार करेगा' यही बात अन्यथा प्रतीत हो रही है। हमें अपनी की हुई प्रतिज्ञा के अनुसार महान् और दिव्य स्तम्भ को इस तेजस्वी वीणा बजाने वाले युवक ने विदारित किया है इसलिए कुमारी का पति भी यही होना चाहिये। महाराज वीरधवल के इन अन्तिम वचनों को पास में ही खड़ा हुआ महाबल ध्यानपूर्वक सुन रहा था। इसी समय स्तम्भ-संपुटमें खड़ी हुई मलयासुन्दरी के पास कई सखियां आ पहुंची और उन्होंने मलया-सुन्दरी को सहारा दिया। आगे बढ़ कर मलयासुन्दरी बोली—'दासी ! कलानिधान वह वीर पुरुष कहां है? जिसने मेरे पिता के दुःख के साथ इस स्तम्भ को विदा-

रण किया है। मैं उसके गले में वरमाला पहनाऊँगी मलयासुन्दरी की धायमाता वेगवती ने नज़दीक आकर स्तम्भ को विदारण करने वाले उस वीर युवक की ओर इशारा किया। प्रेमपूर्ण नेत्रों से निहारती हुई अनेक राजकुमारो के मनोरथ निष्फल करती हुई, लोगों के चित्त को संतोष देती हुई, गंधर्व के वेष में रहे हुए तथापि काम देव के समान रूपवान् महावल कुमार के गले में मलयासुन्दरी ने हर्षित हो, वरमाला पहना दी मलयासुन्दरी के रूपसे चकित हो, और गंधर्व जाति के युवक के गले में वरमाला आरोपित होने से पराभव पाए हुए राजकुमार परस्पर कहने लगे—देखो ! इस विदग्धा राजकुमारी की कैसी अधम-परीक्षा ! उत्तम क्षत्रिय वंश के राजकुमारों को छोड़कर अज्ञात कुल वंशीय वीणा बजाने वाले साधारण मनुष्य के गले में वरमाला डाल दी ! इस प्रकार हम अपना घोर अपमान नही सह सकते। हम इस गंधर्व को मार कर भी स्वयंबरा को ग्रहण करेगे। इस तरह विचार कर मारे इर्ष्या के वे सबके सब राजकुमार गंधर्व के वेष में वहां

पर अकेले खड़े हुए महाबल की तरफ बढ़ आगे । यह देख महाराज वीरधवल ने उस युवक की रक्षा के लिए उसके चारों तरफ अपनी सेना खड़ी करदी ।

इस समय महाबल भी स्वयंवर में रखे हुए वज्रसार धनुष को उठाकर उन राजकुमारों के सामने आ डटा । महाबल के अमोघ प्रहारों से वे तमाम राजकुमार अपने प्राण बचाने के लिए चारों तरफ बिखर गये ।



(१९)

घट स्फोट और विवाह

उस समय स्वयम्वर-मण्डप के प्रसंग पर पृथ्वीस्थानपुर से स्वाभाविकतया आये हुए एक चारण के ध्यानपूर्वक देखने से उसने महाबल को पहचान लिया और उच्च स्वर से बोल उठा— "हे महा पराक्रमी सूरपाल नरेश के पुत्र महाबल कुमार ! आपकी सदा विजय हो।" उस चारणके ये शब्द सुनते ही महाराज वीरधवल की खुशी का पार न रहा। विचारने लगा कि क्या सचमुच ही गंधर्व के रूप में यह महाबल कुमार ही है ? ठीक है साधारण जाति में उत्पन्न होने वाले गंधर्व युवक में ऐसा प्रबल पराक्रम कैसे हो सकता है ? यह विचार कर शीघ्र ही चारण के पास

आ राजा ने उससे पूछा "क्या तू इस कुमार को पहचानता है ?' चारण ने हाथ जोड़ नम्रता से कहा— महाराज ! मेरे कथन में जरा भी सदेह नही, मैंने बचपन से ही इन्ही के कुल में परवरिश पाई है। सचमुच यह महाराज सूरपाल का पुत्र महाबल कुमार ही है । राजा हर्षित होकर बोला अहा ! अकस्मात यह बिना बादल वृष्टि हुई । जो काम मन से भी कठिन प्रतीत होता था वह इस समय प्रत्यक्ष सिद्ध हो गया । सिद्धज्योतिषी का समस्त कथन सत्य हो गया । सच ही कहा है, अचल पर्वतो के चलायमान होने पर भी ज्ञानो पुरुषों के वचन अन्यथा नहीं होते। परन्तु यह कुमार अकेला ही कैसे आया होगा ? क्या यह अकस्मात् आकाशमार्ग से आगया ? मुझे इस बात को जानने से भी अधिक आश्चर्य उस परोपकारी सिद्ध ज्योतिषी को जानने का है। जिसके प्रताप से यह तमाम कार्य सिद्ध हुए बाद दर्शन तक भी न हुआ। न जाने वह देवपुरुष हमारी तमाम इच्छाओं को पूरी कर कहां चला गया ?

कुछ देर विचार कर महाराज वीरधवल ने यह निश्चय किया कि इस समय इस चिन्ता की आवश्यकता नही। कुछ समय के बाद राजकुमार के मुख से ही यह तमाम बातें सुनूँगा। इस वक्त जो कार्य नष्ट हो रहा है पहले उसे सुधारना चाहिये। यह विचार कर राजा वीरधवल शीघ्र ही युद्धके लिए तैयारी करते हुए उन राजकुमारो के पास आया और उन्हे यह विश्वास दिलाया कि वह वीणावादक और कन्या के हाथ वरमाला पहनने वाला युवक गन्धर्व नही परन्तु पृथ्वी स्थानपुर के नरेश महाराज सूरपाल का तेजस्वी पुत्र महाबल कुमार है। इत्यादि वचनों से समझाकर उन्हें युद्ध के प्रसंग से बचा लिया। वापिस आ कर कुमार और राजकुमारी मलयासुन्दरी को भोजन कराया। अन्य स्वजनों को भोजनादि से निबटा कर स्वयम्बर में आये हुए तमाम राजकुमारों के लिए भी उनके स्थान पर ही भोजन का प्रबन्ध करवा दिया।

इस शुभ प्रसंग पर सिद्धज्योतिषी को प्रीतिदान दे कर प्रसन्न करने के लिए राजा ने उसकी चारों तरफ

तलाश कराई किंतु उसका कहीं पर भी पता न लगा। इससे राजा ने यह विचार किया कि वह सचमुच ही परोपकारी दिव्य पुरुप था, अव उसके मिलनेकी आशा नहीं है। तव उसने विधिपूर्वक अपनी कुलदेवी की पूजा कर बन्धुवर्ग को वस्त्राभरण आदि दे कर संतुष्ट किया। याचकजनों को भी दान देने में उसने अपनी लक्ष्मी का खूब ही उपयोग किया। राजकुमारी के विवाह के हर्ष में नगर में जगह-जगह उत्सव मनाया जा रहा था। अनेक प्रकार के वाद्यों की मधुर ध्वनि से आकाश गूँज रहा था। कही पर मधुर स्वरो से गन्धर्वों का संगीत चल रहा था, कही पर मारे खुशी के स्त्रियों का नृत्य चल रहा था तो कही कोकिल-कंठ से सधवा स्त्रियां धवलमंगल गीत गा रही थी। कहीं पर चारण भाटो के जय जयकार के शब्द उच्चरित हो रहे थे। अनेक आभूषणों से भूषित दोनों वरवधू कल्पलता और कल्पवृक्ष के समान शोभा पा रहे थे। पाणिग्रहण के समय उज्ज्वल नेपथ्य को धारण करने वाला दम्पति युग्म साक्षात् रति और कामदेव के तुल्य

प्रतिभासित हो रहा था।

माता-पिता ने उस नवदम्पति को आशीर्वाद दिया कि चन्दा और चांदनी के समान तुम्हारा सम्बन्ध अविच्छिन्न कायम रहे। राजा ने अपनी शक्ति के अनुसार हाथी, घोड़ा, रथ, हीरा, माणक, मोती शस्त्र व ग्राम आदि अनेकानेक वस्तुएँ कन्यादान (दहेज) में दी। विवाह प्रसंग पूर्ण होने पर हर्षित हुए नवदम्पति एकान्त निवास स्थानमें गये। इस समय राजा वीरधवल कुमार के पास आ कर अपने संशय के निवारण की बातें पूछने लगे। 'राजकुमार ! आप अपने शहर से स्वयम्बर के प्रसंग पर अकस्मात् कैसे आ पहुँचे ?

अपनी प्रिया के सन्मुख देखते हुए, पूर्व में परस्पर संकेत किये मुजब कुमार ने उत्तर दिया — मुझे पृथ्वी स्थानपुर से उठाकर किसी देवी ने यहा पर अकस्मात लाकर रख दिया है।' यह सुन राजा वीरधवल कुछ गर्दन हिलाते हुए बोल उठे—'आपका कहना सच है; यह सब कार्य हमारी कुलदेवी का ही मालूम होता है।'

महाबल—'महाराज ! मेरे वियोग को न सहन

करने वाले मेरे माता-पिता विरह दुःख से दुःखित हुए मेरी चारो ओर तलाश करते होगे। अति स्नेहित हृदय वाले माता-पिता की सेवा में यदि मैं बारह प्रहर के अन्दर न पहुँच सका तो सचमुच ही वे मेरे वियोग से प्राण त्याग कर देगे। इसलिये आप कृपाकर, मुझे जल्दी विदा करें। यदि मैं प्रतिपदा के दिन सूर्योदय से पहिले पृथ्वीस्थानपुर पहुँच जाऊँगा तो मुझे अपने पूज्य माता-पिता का मिलाप हो सकेगा; अन्यथा उनका मिलना असंभव सा मालूम होता है।'

राजा—'कुमार! आपको जरा भी चिन्ता न करनी चाहिये। आपकी तमाम चिताएँ मेरे सिर पर है। पृथ्वीस्थानपुर यहां से बासठ योजन है। अतः आप रात के प्रथम प्रहर तक सुख-पूर्वक यहां रहें: तब तक मैं आपके लिए एक उत्तम जाति की व अति वेग से चलने वाली साडनी तैयार कराता हूँ, तथा कोपायमान हुए उन राजकुमारों को भी सत्कारित कर विदा कर आता हूं।' यों कह कर महाराज वीरधवल वहां से चले गये।

महाबल—प्रिये ! आज हमारा इच्छित कार्य सिद्ध हुआ। तुम्हारे समक्ष की हुई प्रतिज्ञा आज जनता के समक्ष तुम्हारे पिता की सम्मति पूर्वक पाणिग्रहण करने से पूर्ण हुई। परन्तु पृथ्वीस्थानपुर जाकर, अपनी माताको हार देनेकी की हुई प्रतिज्ञा अभी सफल नही हुई, वह पूर्ण होने पर ही हमें शान्ति और आनन्द का समय मिलेगा। कल हम भट्टारिका के मन्दिर में मिले थे। परन्तु अपने-अपने कार्य की चिन्ता होने से दो दिन मे किये हुए कार्या सम्बन्धी वार्तालाप करने का विशेष समय नही मिला। इस समय महाराज भी हमारे प्रयाण की तैयारी में गये है; इसलिये अब एकान्त में उन बातों को जानना चाहिये, महाबल कुमार इसके आगे कुछ कहना हो चाहता था, इतने में ही वहां पर मलयासुन्दरी की धाय-माता वेगवती आ पहुंची। उसने मलयासुन्दरी को आकर पूछा—'बेटी मलया ! सच कह इस घटना का क्या रहस्य है ?क्या सचमुच हो यह देव-कर्तव्य है या बुद्धि प्रयोग द्वारा रचा हुआ अन्य प्रपच है ?'

मलयासुन्दरी—स्वामिन् ! मेरे गुप्त रहस्य को जाननेवाली और माता से भी बढ़कर मुझ पर अति प्रेम भाव रखनेवाली यह मेरी धायमाता है इसलिये आप जरा भी संकोच न रख कर इस मेरी धाय वेग-वती के समक्ष समस्त तमाम वृत्तान्त सुनाएँ। यह उसे जानने को बड़ी उत्सुक है। मलयासुन्दरी के आग्रह से महाबल ने वेगवती के समक्ष अपना वृत्तान्त सुनाना शुरू किया "भट्टारिका देवी के मन्दिर से हम अपने अपने कार्यार्थ जुदा हुए थे, वहा तक का वृत्तान्त वेग-वती को सुना कर उसके बादका हाल मलयासुन्दरीको लक्ष्य कर महाबल कहने लगा— 'प्रिये ! उनसे जुदा हो कर मैंने तुम्हारी नामांकित अंगूठी को एक घास के पूले में रख कर वह पूला हाथी को खिला दिया था। फिर स्मशान की तरफ जा कर सिद्ध ज्योतिषी के भेष में राजा का बचाव किया और दूसरे दिन संध्या के समय तक मैं राजमहल में राजा के पास ही रहा। संध्या को मंत्रसाधन का बहाना बना कर और राजासे कुछ द्रव्य लेकर राजमहल से चला गया। बाजार में

जा कर उस द्रव्य से कुछ आवश्यक हथियार, कपूर, कस्तूरी चन्दन रंग और वस्त्रादि खरीद कर मै भट्टा-रिका देवी के मन्दिर में गया। वहां पर काष्टफाली देखी थी, उसे छील कर खूब रमणीय बनाया। उसके अन्दर गर्भभाग में यन्त्रप्रयोग वाली कीलिका लगाई। इसी समय वहा कितनेक चोर एक सन्दूक ले कर आ पहुँचे और उस सन्दूक को एक चोर सहित मन्दिर के पीछे सुरक्षित रख कर बाकी के तमाम चोर वापिस शहर की ओर चले गये। बढ़ई के हथियार और अन्य वस्तुएँ एक जगह छिपा कर चोर की सज्ञा से उस छिपे हुए चोर को बुलाता हुआ मैं उसके पास गया। मुझे भी चोर ही समझ उस लोभी चोर ने मुझसे प्रार्थना की कि मैं इस सन्दूक का ताला नही तोड़ स-कता इसलिए तुम कृपा कर किसी तरह इसका ताला खोल दो। मैंने उसका ताला खोल दिया। उसने सं-दूक में से सार सार वस्तुएँ निकाल कर एक गठड़ी बांध ली। उस हीनसत्व चोर ने मुझसे फिर कहा—हे महानुभाव ! यदि मैं यहां से चला जाऊँगा तो मेरे

पैरों का खोज लेते हुए वे चोर जो शहर में गये हैं या राज पुरुष मुझको पकड़ लेंगे इसलिए आप कृपा कर मेरे बचाव का कोई उपाय बतलायें !

मैंने उसके बचाव के लिए भट्टारिका के मन्दिर के शिखर पर का ऊपरी पत्थर निकाल कर उस गठड़ी सहित चोर को अन्दर धकेल कर ऊपर उसी शिला से ढककर उसे बन्द कर दिया। फिर मन्दिर के नज़दीक वाले वटवृक्ष पर तुम्हारे आने का इन्तजार करने लगा इतने ही मे अकस्मात् उस वटवृक्ष की खोखल की ओर मेरी दृष्टि पड़ी जिसमें मुझे कितनेही वस्त्र और अलंकारादि पड़े हुए नजर आये। देखने पर मालूम हुआ कि सभी वस्तुएँ मेरी ही थी जिन्हे कुछ दिन पहिले देवी ने मेरे महल से वस्त्राभरण आदि हरण कर लिये थे उसीने यहां लाकर रखे होंगे यह समझ कर उनको मैं ने अपने कब्जे में कर ली। फिर जब मैंने रास्ते की ओर देखा तो उन्मार्ग से आती हुई तुम दिखाई दी। फिर शीघ्र वड़ से नीचे उतर कर मैं तुमसे आ मिला, उस रोज का मेरा यही वृत्तांत है। प्रिय कान्ते ! अब

तुमभी अपना हाल सुनाओ, तुमने कैसे अपना कार्य किया ?

मलयासुन्दरी—'प्राणनाथ ! उसदिन आपके द्वारा दी हुई शिक्षा को हृदय में धारण कर मैं शीघ्र ही शहर में आई और मगधा वैश्या का मकान पूछती हुई तथा उसकी तलाश में शहर में फिरती हुई मैंने उसे एक मन्दिर में पाया जिसे किसी एक चालाक व धूर्त व्यक्ति ने महा सकट में फँसा रखी थी। इससे वह वहां से आगे पीछे नही जा सकती थी। उसके दुःख का कारण पूछने पर निःश्वास डालती हुई उसने उत्तर दिया—'हे सत्पुरुष ! मैं तुम्हे अपने दुःख की क्या बात सुनाऊँ ? मेरी बुद्धि कुण्ठित हो गई है। एक दिन मैं अपने मकान के आंगन बैठी थी उस समय कही से फिरता हुआ यह धूर्त मनुष्य मेरे पास आ बैठा मुझे यह मालूम न था कि यह मनुष्य इतना चालाक है। मैंने हँसी में इससे कहा— तू मेरा शरीर संवाहन कर, मैं तुझे कुछ दूँगी। यह मनुष्य शरीर संवाहन क्रिया में बड़ा निपुण निकला। इसने मेरे शरीर को

संमर्दित कर मेरी तमाम थकावट को दूर कर दिया। मैंने खुश होकर इसे भोजन करने के लिए कहा। यह बोला मुझे भोजन की आवश्यकता नहीं है, तुमने मुझे कुछ देने के लिये कहा था। इसलिए मुझे तो बस अब कुछ दे दो। मैं ने इसको अच्छे वस्त्र और धनादि देना चाहा पर इस धूर्तने कुछभी न लेकर मेरी जबान से निकले हुए 'कुछ दूंगी' इस शब्द को पकड़ कर अब मुझसे यह 'कुछ' मांगता है। परन्तु मैं समझ नही पा रही हूं कि कुछ किस वस्तु का नाम है? इसी कारण न तो यह खुद जाता है और न मुझे ही यहां से जाने देता है। प्रिय स्वामिन्! यह दशा देख मैंने विचार किया कि वेश्या इस समय आपत्ति मे फँसी है; यदि मैं इस संकट से इसका उद्धार करूँ तो अवश्य ही मेरा निर्धारित कार्य जल्दी सिद्ध होगा। यह सोच कर मैने मगधा को अपने पास बुला उसके कान में एक बात सुनाई। फ़िर मैंने उन दोनों से कहा—जाओ तुम दोनों इस समय भोजन करो और तीसरे प्रहर मेरे पास आना मैं अवश्य ही इस विवादका फैसला कर दूंगा।

महाबल—"प्यारी ! उसका यह विवाद सचमुच ही बडा विषम था। तुमने किस तरह इसका समाधान किया ?"

मलया—"स्वामिन् , सो मैं आपको सुनाती हूँ। मैं वहां तक के मार्ग परिश्रम से कुछ थक गई थी अतः मैं वहा पर ही सो गई। तीसरे प्रहर वह दोनों ही मेरे पास आ गए, मगधा ने मुझे उठाया, मैने गुप्त रीति से उससे देव मन्दिर मे एक घड़ा रखवाया और बहुत से लोगो को साक्षी रखकर कहा–देखो भाई ! मै अब तुम्हारे सामने इस मनुष्य को कुछ दिलाता हूं, यह अपने वचन से पीछे न फिर जाय इसलिये इस मेरे किये हुए इन्साफ मे आप लोग साक्षी रहे। यह बात उस धूर्त ने भी उपस्थित जनता के समक्ष स्वीकार कर ली। इस बात पर लोगों को भी बड़ा आश्चर्य हुआ कि देखे यह नवयुवक इसे 'कुछ देकर' किस तरह फैसला करता है ? मेरा इशारा पाकर मगधा ने उसे कहा कि इस मन्दिर के उस कोने में एक घड़ा रक्खा है, उसमे एक चीज पड़ी है, उसे तुम ले आओ,

फिर तुम्हें कुछ दिया जायगा। धूर्त ने वहाँ जाकर घड़े का ढक्कन उठा कर उसमें हाथ डाला। परन्तु तुरन्त ही फुँकार करता हुआ सांप उसके हाथ के ऊपर लिपट गया। तत्कालही उसने घड़े से हाथ खीच लिया और चिल्ला कर बोल उठा—'अरे! इसमें तो कुछ है। यह सुन मगधा ने हर्ष प्राप्त करते हुए कहा—'इसमें तेरे लिए ही 'कुछ' रखाहै। और अब इस कुछ को तू ग्रहण करके अपने घर ले जा! अब तेरे मेरे बीच लेने देने का कोई सम्बन्ध नही रहा!' यह देख खुश हो कर तमाम लोग हँस कर कहने लगे—'वाह रे धूर्त! वस्त्र धन न ले कर तूने यह अपने कहने के अनुसार अच्छा 'कुछ' लिया! उस धूर्त को सर्प ने डस लिया था। इसलिए उसका विष उतारने के लिये उसे तोतलादेवीके मन्दिर पर ले जाया गया और मुझे साथ ले कर मगधा अपने मकान पर आ गई।

उसके गृहद्वार में प्रवेश करते ही कुछ आश्चर्य से मैंने मगधा से कहा—'मगधा! मैं तुम्हारे घर में प्रवेश नहीं कर सकूँगा, क्यों कि मुझे मालूम होता है,

तुम्हारे घर में कोई राजद्रोही मनुष्य छिपा हुआ है। मेरे शब्दों से भयभ्रान्त हो अनेक प्रकार के तर्क वितर्क करती हुई मगधा मेरे पैरों में गिर पड़ीं और हाथ जोड़ कर बोली— 'हे भद्र पुरुष ! आपने सब कुछ अपने ज्ञानबल से जान लिया है परन्तु कृपा कर यह बात किसी अन्य के सामने न करें। राजा की रानी कनकवती जिसने कपट द्वारा राजा की निर्दोष पुत्री को कल जान से मरवा दिया। उसका कपट प्रकट होने से उसे पकड़ने के लिए चारों तरफ राजपुरुष घूम रहे हैं। बचपन के स्नेह के कारण वह पिछली रात में छिपकर मेरे घर आकर रही है। हे सत्पुरुष ! किसी भी उपाय से धधकती हुई आग को आप मेरे घर से बाहर निकालें इससे मैं आपका वड़ा उपकार मानूंगी।

मैंने कहा—'यदि मैं इस समय उसे तेरे मकान से बाहर निकाल दूँ तो इसमें भयंकर परिणाम उपस्थित होगा। बाहर निकले बाद अगर उसे किसी राजपुरुष नें देख लिया तो उसके साथ ही हम सबको महान् सकट में पड़ना होगा। तथापि तेरा विशेष आग्रह है,

तो मैं कुछ ऐसा उपाय करूंगा जिससे तेरे घर से वह स्वयं ही चली जाय। इस कार्य के लिये मुझे आज रात को एकान्त में मुझे उससे मिलाना। यह सुन मगधा बड़ी खुश हुई और भाव–भक्ति पूर्वक मुझे भोजन कराकर रात में उसने कनकवती से मेरी भेट कराई। मुझे पुरुष रूप में देख कर उसका हृदय कामवासना से पीड़ित हो गया। वह बारम्बार मेरे सामने कटाक्ष करती हुई निर्लज्जता पूर्वक मुझसे विषयभोग की याचना करने लगी। मैंने उससे कहा कि भद्रे! मेरा एक अति प्रिय मित्र है, वह रूप में साक्षात् कामदेव जैसा है और उसे तुम्हारे समान स्त्री की जरूरत भी है। किसी कार्य से वह आज गांव गया हुआ है। उसने मेरे साथ संकेत किया है कि आगामी रात्रि को गोला नदी के किनारे पर भट्टारिका देवी के मन्दिर में मिलूंगा। इसलिए यदि तुम्हारी मर्जी हो तो तुम वहां पर आ जाना। वहां तुम दोनोंका अच्छा संयोग मिल जायगा। कदाचित् किये हुए संकेतानुसार वह वहांपर न भी आया तो फिर हम दोनों तो है ही।

कनकवती ने मुझसे पूछा कि आप कौन है और यहां किसलिए आये है ? मैंने कहा, हम क्षत्रिय पुत्र हैं और देशान्तर जाने के लिए घर से निकले हुए है। रास्ते में इस शहर को देखने के निमित्त मैं यहां ठहर गया हूं। मेरा कथन सत्य समझ कर मेरे मित्रसे मिलने के लिए उसने उत्सुकता दिखलाई। अपने किये हुए कर्म का वर्णन करते हुए और उस कृत्य के कारण अपने ऊपर आये हुए संकट सम्वन्धी वार्तालाप में उस महाभाग ने सारी रात्रि व्यतीत कर दी। सुबह होने पर मैंने उससे पूछा— सुन्दरी ! तुम्हारे पास कुछ वस्त्रभूषणादि भी है या नही ? मुझ पर विश्वास और प्रीति रखती हुई कनकवतीने अपनी तमाम वस्तुएँ मेरे पास ला कर रख दीं। तलाश करने पर मुझे उसमें अपना इच्छित हार दिखाई न दिया। अतः मैंने उससे फिर पूछा—क्या इतनी ही वस्तुएं तुम्हारे पास है या और भी कुछहै ? उसने कहा, लक्ष्मीपुंज नामक एक हार और है, वह मैंने गुप्त रीति से एक जगह जमीन में दबाया हुआ है। वह स्थान पूछने पर वह

बोली—यहां से थोड़ी दूरी पर एक शून्य खण्डहर घर है उसके निकट एक कीर्तिस्तम्भ है उसकी दीवाल में मैंने उस हार को छिपा के रखा है। वहां पर मैं दिन में तो जा ही नहीं सकती। रात में भी राजपुरुषों के भय से बड़ी कठिनता से वहां जाया जा सकता है। यदि मेरी बतलाई हुई निशानी के अनुसार वहाँ जाकर आप उस हार को ला सकें तो ले आइये। फिर हम दोनों ही यहां से चले जायँगे। अगर आप नही ला सकते हो तो आज ही संध्या समय मैं स्वयं वहाँ जा कर उस हार को ला दूँगी। इस प्रकार वार्तालाप कर मैं उसके पास से उठ कर कमरे से बाहर आ गई।

मुझसे मगधा ने पूछा— सत्पुरुष ! मेरे घर से उसको बाहर निकालने का कोई उपाय किया ? मैंने उत्तर दिया—भद्रे ! तेरी प्रार्थना से मैंने ऐसा उपाय कर दिया है। यदि तू उसे जाने से रोकेगी भी तथापि अब वह तेरे घर मे नही रहेगी। इस पर हर्षित हो मगधा वेश्या ने मेरे लिए भोजनकी व्यवस्था कर दी।

इधर कनकवती की बतलाई हुई निशानी के

अनुसार मैने दिन में वहां जा कर उस स्थान को बहुत खोजा परन्तु मुझे हार का पता न लगा। इसलिए वापस मगधा के घर आ कर मैंने कनकवती से कहा कि मुझे ढूंढने पर भी वहां हार न मिला। अतः रात को हार लेकर तुम गोला नदी के किनारे भट्टारिका देवी के मन्दिर में मुझसे आकर मिलो। यों कह कर मगधा से विदा हो, मैं वहां से अपने साकेतिक स्थान की तरफ चल पड़ी। परन्तु मैं रास्ते मे यहां आने का मार्ग भूल जाने से उन्मार्ग से चल कर पुण्य योग से उस वड़ के नीचे आप से आ मिली।

अब मलयासुन्दरी ने अपनी धायमाता की तरफ़ नजर कर इसके आगे का वृत्तान्त कहना प्रारंभ किया। क्यो कि महाबल तो उस वृत्तान्त को जानता ही था।

माँ वेगवती ! मैंने अपने स्वामी से आ कर तुरंत ही यह बात कही कि आपको अपना पति बनाने के लिए कनकवती लक्ष्मीपुञ्ज हार ले कर अभी आने ही वाली है। मेरे स्वामी ने उत्तर दिया, प्रिये ! यह तुम

क्या बात कहती हो ? ऐसी नीच और कमीनी औरत के साथ बात करना भी उचित नहीं तब फिर उसे पत्नी बनाने की तो बात ही क्या ? यों कह कर कनक वती को दूर से आती देख कर ये वहां से उठ कर मन्दिर के दूसरी तरफ छिप कर खड़े हो गये। कनक-वती तब तक वहां आ पहुँची। मैंने उसे प्रेम से पास बुलाया और कहा—भद्रे ! इस समय चुपचाप मौन रख कर खड़ी रह ! क्यों कि यहां पर चोर फिर रहे हैं। तेरे पास जो कुछ वस्तु हो वह मुझको सौप दे। जिसको मैं हिफाजत के साथ सुरक्षित अपने पास रख दूँ। उसे मुझ पर विश्वास तो था ही अतः उसने अ-पने पास का सब कुछ माल मुझे दे दिया। मैंने उस गठड़ी को देख कर उसमें से लक्ष्मीपुंज हार और एक कचुक निकाल लिया। शेष तमाम चीजे उस चोर की खाली सन्दूक में डाल दीं। मैंने फिर से कनकवती से कहा— भद्रे ! जब तक यहां पर चोरों का संचार मालूम होता है तब तक तुम इस सदूक में बैठ जाओ, क्रूर हृदया परन्तु कायर स्वभाव वाली कनकवती मेरी

बात मंजूर कर उस सन्दूक में बैठ गई। उसके अन्दर बैठते ही मैंने सन्दूक को बन्द कर उसमें ताला लगा दिया। इसके बाद मैंने अपने स्वामी को बुलाया, हम दोनों ने उस सन्दूक को उठाकर नजदीक में बहने वाली गोला नदी में बहा दिया। फ़िर मेरे मस्तक पर किया हुआ जो तिलक था वह मेरे स्वामी ने अपने थूक से मिटा दिया, इससे तत्काल ही मेरा स्वाभाविक स्वरूप बन गया। अपने स्वामी की आज्ञा पाकर मैंने अपने शरीर पर चदनादि से विलेपन कर उस वट-वृक्ष की खोखल में मिले हुए कुण्डल आदि आभूषणों को धारण किया। कनकवती के पास से प्राप्त किया हुआ लक्ष्मी-पुंज हार और कंचुक पहन कर तथा हाथ में वरमाला ले मैं उस काष्ठ स्तम्भ के दल में खड़ी हो गई। मुझे इन्होने समझा दिया था कि तू धीरज रखना यह सब काम इसी तरह किया जायगा। जब मैं स्वयम्बरमंडप में वीणा बजाऊंगा तब तू फालियों के बीच लगाई हुई इस कील को जोर से खीच लेना आदि शिक्षा देकर, अधिक समय तक ठंडक रहे ऐसी वस्तु मेरे पास रखके

और अन्दर हवा आने जाने के लिए स्तम्भ के ऊपरी भाग में दो बारीक से छेद रख उस फाली के साथ उन्होंने दूसरी फाली जोड़दी । फिर मैंने अन्दर की कोल लगाली । इसके बाद क्या हुआ मुझे मालूम नही ।

महाबल—प्रिये ! इसके बाद उस स्तंभ को मैंने ऐसे सुन्दर रंग-बिरंगे चित्रो से चित्रित किया कि जिससे उसके बीच की सन्धियाँ बिलकुल मालूम न दें । उसी समय मंदिर के पीछे उस सन्दूक को रख कर शहर में गए हुए चोर बहुत सा चोरी का माल लेकर वापिस आये । परन्तु वहां पर उस रक्षक चोर सहित संदूक न मिलने पर वे उसकी खोज मे चारों तरफ घूमने लगे । मैंने उन्हें चोरों के संकेतानुसार बुलाया, वे मेरे पास आकर विश्वस्त मनुष्य के समान बोले कि यहा पर संदूक सहित एक मनुष्य था वह कहां गया ? मैंने उन्हे पान देते हुए कहा—'तुम इस स्तम्भ को उठा कर पूर्व दिशा वाले शहर के दरवाजे के पास ले चलो तो मैं तुम्हें उस मनुष्य का पता बताऊँगा । उन्होने मेरी बात मान कर और लाया हुआ चोरी का माल

नदी के किनारे रख उस स्तम्भ को उठाया। मेरे कहे अनुसार शहर के पूर्व दरवाजे के पास लाकर स्तंभ को खड़ा कर दिया। अब फिर उन्होंने उस चोर के विषय में पूछा। मैंने सोचा उस बिचारे को मंदिर के शिखर मे बता दिया तो ये उसे जानसे मार डालेंगे। यह समझकर मैंने उन्हें असत्य उत्तर दिया 'भाई! वह चोर तो सन्दूक का ताला तोड़ कर उस में से सब माल निकाल एक पोटली में बांध कर सन्दूक को नदी में बहा और स्वयं उस पर बैठकर तैरता हुआ नीचे की तरफ चला गया है। चोर बोले—आपका कथन सत्य मालूम होता है क्योंकि वह रात भर सन्दूक पर बैठकर नदी मार्ग से गमन करेगा और प्रातःकाल होते ही उस धन की पुटलिया को लेकर कहीं पर चला जायगा। उनमें से एक बोला—भले वह कहीं पर जाय फिर भी तो कभी मिलेगा न? यों बोलते हुए वे चोर मेरे पास से वापस चले गए। मैंने सावधान रह रात भर उस स्तंभ की रक्षा की। प्रातःकाल होने पर स्तंभ की खोज में उस तरफ आते हुए राजपुरुषों

को देखा तब मै निश्चिन्त होकर गुप्त रीति से चल कर शहर में राजा से आ मिला। इसके बाद का वृत्तान्त तुम्हें वेगवती सुनायगी, क्योंकि यह सर्वजन-प्रसिद्ध है। प्रिये! मुझको अब उस चोर की बात याद आई, अगर उसे मन्दिर के शिखर में से बाहर नही निकाला तो हमारे चले जाने बाद उसकी क्या दशा होगी? वह बिचारा अन्दर ही मर जायगा और उसका दोष मुझे ही लगेगा; इसलिए तुम यहां रहो मैं उस चोर को आजाद करके शीघ्र ही लौट कर वापिस आता हूं।

मलया—प्राणनाथ! आप मुझे ऐसी आज्ञा न करें! मैं अब आपसे जुदा न रहूंगी। अब आप पहिले की तरह बहाना बना कर मुझे छोड़ कर नही जा सकते। और अब तो मेरे माता-पिता ने ही आपको मेरा जीवन सौंप दिया है। माता वेगवती! यदि हमारे आने से पहिले यहां पर पिताजी पधार जायँ तो तुम उनको कह देना कि मलयासुंदरी नें गोला नदी के किनारे वाली देवी को मानता की थी

इसलिये वे दोनों वहां पर नमस्कार करने गए हैं और अभी वापस आ जायँगे। वेगवती को इस प्रकार कह-कर मलयासुन्दरी महाबल के मना करने पर भी उस के साथ चली गई।

इधर धीरधवल राजाने उन राजकुमारों के पास जाकर उन्हें खूब समझाया परन्तु उन्हों ने एक न सुनी उल्टा रोष में आकर वे महाराज वीरधवल को डराने लगे कि प्रातःकाल होने पर हम तुम्हारे जमाई को मार कर कन्या को लेकर जायँगे परन्तु खाली हाथ हम यहां से जानेवाले नहीं। अब महाराज वीरधवल ने उनको समझाना बुझाना छोड़ महल में आकर महाबल के लिये तुरन्त ही एक शीघ्र गामिनी सांडनी तैयार कराई और जल्दी तैयार कराने के लिये राजा मलयासुन्दरी के महल में आया परन्तु वहा आकर उसने महाबल और मलयासुदन्री को न पाया। वेग-वती ने कहा—वे गोला के किनारे देवी के दर्शन करने गये हैं अभी वापस आ जायँगे। राजा उनको राह देखता हुआ वहां पर ही बैठ गया। राह देखते

हुए रात्रि का दूसरा प्रहर वीता, तीसरा प्रहर भी बीत गया और अन्त में प्रातःकाल होने आया परन्तु उन दोनों में से एक भी वापस न आया। राजा आकुल व्याकुल हो गया और गोला नदी, भट्टारिकादेवी का मन्दिर इत्यादि सब जगह तलाश करने पर भी उनके कहीं पद-चिन्ह तक नहीं मिले। प्रातःकाल में महाबल और मलयासुन्दरी के गुम होने का समाचार सुन कर वे तमाम राजकुमार निराश होकर अपने अपने देश को चले गए।



(२०)

दुःखी वीरधवल और व्यन्तरों का वार्तालाप

न दु.ख मे मन धैर्य तजे कभी, न सुख मे वह हर्ष भजे कभी।
न सत से जिसका पथ अन्य है, जगत में वह मानव धन्य है।।

पुत्री और जमाई का पता न लगने से महाराज वीरधवल के दुःख का पार न रहा। उन्होंने घुड़सवार और पैदल सिपाही उस दम्पति की खोज में चारों तरफ दौड़ाए किन्तु दुर्दैव वश वे फ़िर फिराकर जैसे गए थे वैसे ही वापस आगए। इससे राजा वीरधवल को तमाम संसार सूना मालूम होने लगा। कल ही उनके दुःख का अन्त आया था, आज फिर उन पर यह नया दुःख आ पड़ा। वे पुत्री और जमाई के

वियोगजन्य दु ख से दुखित होकर मूर्छित-से हो गए।

इस दुःख को दूर करने में मंत्री और सामन्तों की वुद्धि भी कुछ काम नही करती थी। कुमारो की धाय माता वेगवती ने हाथ जोड़ विनय पूर्वक राजा को धीरज देते हुए कहा—महाराज! आप धीरज धारण करे, कुविकल्प करने से काम नही चलेगा; कदाचित् वे किसी प्रयोग से पृथ्वीस्थानपुर चले गये हों क्यों कि उन्हे वहां पहुंचने की बहुत जल्दी और उत्सुकता मालूम होती थी। इसलिए किसी आदमी को यहाँ से पृथ्वीस्थानपुर भेज कर यह तमाम समाचार महाराज सूरपाल को विदित कर देना चाहिये। यदि वहा पर वे न भी पहुँचे होंगे तो वे पुत्र—वात्सल्य से दुःखित हो आपके समान सर्वत्र खोज करायँगे!

यह बात सुन कर राजा वोरधवल धैर्य धारण कर वेगवती की बुद्धि की प्रशंसा करने लगा। उसने देश देशांतरों मे उनकी खोज में कई राजपुरुष भेजे व अपने मलयकेतु नामक राजकुमार को पृथ्वीस्थानपुरमें महाराज सूरपाल के पास भेजा।

इधर महाबल और मलयासुन्दरी का क्या हुआ ? यह भी देख लीजिये। एक तरफ तो कृष्ण चतुर्दशी की रात, दूसरी तरफ भयानक स्मशान भूमि, पास में बहती हुई गोला नदी के प्रवाह का कल-कल नाद, अपरिचित मार्ग, चोरों का उपद्रव, प्रतिस्पर्धा से बैरी हुए राजकुमारो का भय, गीदड़, उल्लू, आदि निशाचर जानवरों के घोर शब्द, इत्यादि कारणों से नदी की ओर का मार्ग भयंकर मालूम होता था।

महाबल—प्रिये ! ऐसी भयानक स्मशानभूमि व अँधेरी रात मे स्त्री सहित फिरना यह मेरे लिए लाभदायक नही है। इसलिये मेरी इच्छा है कि गुटिका के प्रयोग से तुम्हारा पुरुष रूप बनाकर निर्भयता से फिरें।

मलया—स्वामिन् ! आपकी इच्छा में ही मेरी इच्छा है। महाबल ने तुरन्त ही आम्ररस में गुटिका घिसकर मलयासुन्दरी के मस्तक पर तिलक कर दिया। गुटिका के प्रभाव से पहले के जैसे ही उसका पुरुष रूप बन गया।

अब दोनों ने देवी के मन्दिर में जाकर मन्दिर के शिखर में छिपे हुए चोर को वाहर निकाला, और उसे कह दिया कि कल तेरे साथी तेरी तलाश कर वापिस चले गये। अब जहां तेरी इच्छा हो वहां जा सकता है। चोर बोला—आपने मुझे जीवन और द्रव्य लाभ प्राप्ति में सहायता की है, आपका मैं यह उपकार कदापि न भूलूँगा। यों कह और नमस्कार कर वह चोर वहां से अन्यत्र चला गया। देवी के मन्दिर से वापिस शहर की ओर आते हुए जब वे पास के वट-वृक्ष के नीचे आये तब उन्हें उस वड़ पर कुछ आवाज़-सी सुनाई दी।

महाबल बोला—प्रिये ! रात्रि के इस भयानक समय में इस वटवृक्ष पर कोई व्यन्तर देव वार्तालाप करते हुए मालूम होते हैं। हम भी थोड़ी देर ठहर कर ध्यान पूर्वक सुनें कि ये आपस में क्या वार्तालाप करते हैं। परन्तु तुम्हारे गले का लक्ष्मीपुंज हार न उड़ाले इसलिये यह हार मुझे दे दो। लक्ष्मीपुंज हार लेकर महाबल ने अपनी कमर में बाध लिया फिर गुप्त रीति

से उस वट की खोखल में खड़े होकर वे दोनों ही बड़ी सावधानी के साथ व्यन्तर देवों का वार्तालाप सुनने लगे।

एक व्यन्तर ने प्रश्न किया—क्यों भाई ! किसी ने पृथ्वी पर आज कोई नई घटना देखी या सुनी है ?

दूसरा व्यन्तर—एक जगह एक घटना बनने की तैयारी है परन्तु वह घटना कल बनेगी और उसका स्थान भी यहां से कुछ दूर है।

तीसरा—'कहो तो सही कहां पर क्या घटना बनेगी ?'

दूसरा—आप सावधान होकर सुनें, पृथ्वीस्थानपुर के नरेश सूरपाल राजा के एक महाबल नामक कुमार है। उसकी माता रानी पद्मावती का एक हार किसी ने हरण कर लिया है, उसके लिये अपनी माता के समक्ष महाबल ने ऐसी प्रतिज्ञा की है कि यदि पांच दिन के अन्दर मैं उस हार को ढूंढकर तुम्हें न ला दूं तो अग्नि में प्रवेश कर मर जाऊंगा। इसी तरह की प्रतिज्ञा उसकी माता ने भी की है कि यदि पांचवें दिन

हार न मिले तो मैं भी जीवित न रहूँगी। हार को खोज में गये हुए राजकुमार का अभी तक कोई पता नही लगा, और वह प्रतिज्ञा वाला पांचवां दिन कल सुबह ही होगा। अपने कुमार और हार की खोज न मिलने से मरने के लिए उत्सुक हुई रानी को देख कर ही मैं अब यहां आया हूं। पता नहीं वह रानी किस तरह से प्राण दे देगी। यह भी हो सकता है कि रानी के मर जाने से राजा भी जोवित्त न रहे।

व्यन्तर देवों के उपर्युक्त वचन सुनकर राजकुमार महाबल कौतुहल छोड़कर चिताग्रस्त हो गया। वह सोचता है कि देवताओं का वचन असत्य नही होता। सचमुच ही इस कथन की घटना होना सम्भवित है। मैं कितना मूढ़ हूं कि प्रतिज्ञाभ्रष्ट हो कर, यहां पर अभी तक विलास कर रहा हूँ और वहा पर मेरे दुखी कुटुम्ब का क्षय होने का अवसर उपस्थित होरहा है! इतने ही में फ़िर एक व्यन्तर की आवाज सुनाई दी। वह बोला—चलो, इस वक्त वहां चल कर हमें क़ौतुक देखना चाहिये। दूसरे व्यन्तर ने कहा—हां, यह तो

ठीक है। इस घटना को अवश्य देखना चाहिये। सब की सहमति होनेपर सबने मिल कर हुँकार शब्द बोला और हुँकार शब्द के साथ ही वह वटवृक्ष कुमार तथा मलयासुन्दरी सहित आकाश-मार्ग से उड़ चला।

यह हम प्रथम ही लिख चुके हैं कि महाबल और मलयासुन्दरी उस वटवृक्ष की ही खोखल में चुपचाप खड़े हो कर व्यन्तरों की वार्त्तालाप सुन रहे थे। हवाई जहाज के समान अति वेग से आकाशमार्ग से उड़ता हुआ वह वटवृक्ष थोड़े ही समय में एक छोटे-से पहाड़ की चोटी पर आकर स्थिर हो गया। वट वृक्ष नीचे उतर गया। वे तमाम व्यन्तर गोला नदी के किनारे पर स्थित धनञ्जय नामक यक्ष के मन्दिर की तरफ चले गये। महाबल ने भी इस प्रदेशको पहिचान लिया था। अतः उसने मलयासुन्दरी से कहा—प्रिये! अभी तक हमारा पुण्य जागृत है। यह बड़ हमारे पृथ्वीस्थानपुर नगर के समीप ही आ पहुँचा है। अब हमें शीघ्र ही इस बड़ के आश्रय का त्याग कर देना चाहिये। यदि देवाज्ञा से यह वृक्ष फिर कहीं वापिस आगे उड़

कर चला गया तो न जाने हम किस विषम स्थान पर पहुँच जायँगे। यों कह तुरन्त ही महाबल और मलया सुन्दरी उस बड़ की खोखल से बाहर निकल आये। और नजदीक वाले एक केलों के बगीचे में जा कर दोनों ने विश्राम किया।

कुछ देर बाद उस वटवृक्ष को फ़िर आकाश में उड़ता देख महाबल ने कहा—सुन्दरो ! देखो वह वृक्ष फिर अपने स्थान पर जा रहा है। बहुत अच्छा हुआ, हम लोग उसकी खोखल से निकल कर यहाँ आ गये। अभी रात बहु बाकी थी इसलिए निर्भयता से वे दोनों केलों के बगीचे में बैठ कर समय बिता रहे थे। इतने ही में करुण स्वर से रुदन करती हुई किसी एक स्त्री का शब्द कुमार के कानों में पड़ा। उस स्त्री का रोना सुन कर महाबल बोला—प्रिये ! यह किसी दुःखित स्त्री के विलाप का शब्द सुनाई देता है। समर्थ पुरुषों का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वे दुःखीजनों की सहायता करें। तुम यहां ही रहो; और धीरज रखो। इस दुःखी स्त्री को सहायता देकर अभी वापिस आता

हूं। अब यहां पर किसी प्रकार का डर रखने की आवश्यकता नहीं। क्यों कि यह सब हमारे नगर की ही हद का प्रदेश है। मलयासुन्दरी इस बात का कुछ भी उत्तर न दे सकी; इसलिए उसे वहां पर ही छोड़ कर दयालु दिल वाला महाबल-परदु:ख दूर करने के लिए उस रुदन शब्द के सहारे उस दिशा में चल पड़ा।



(२१)

पति-वियोग में मलयासुन्दरी पर आफत

अन्धेरी रात ! तेरे कर्त्तव्य भी तेरे ही समान काले होते हैं। तूने चन्द्रावती में राजा वीरधवल को पुत्री एवं जमाई का वियोग कर संकट में डाला और मलयासुन्दरी को भी तुरन्त हो पति-वियोग करा कर दुःख के गढ़े मे डाल दिया। हे निष्ठुर विधि ! तेरी भी अजीब गति है ! मनुष्य क्या विचारता है और तू उसके विपरीत क्या से क्या कर डालता है ?

इस समय मानवसंचार–रहित अन्धेरी रात में केलो के बगीचे में मलयासुन्दरी पुरुष के वेश में अकेली बैठी है। बारम्बार हठ करके पति की इच्छा के विरुद्ध

उनके साथ जाना योग्य नही। यह समझकर ही मलया ने इस समय महाबल के साथ जाने का आग्रह नहीं किया। वह थोड़े समय का वियोग दुःख सहकर भी एक दुःखी स्त्री के दुःख को पति के द्वारा दूर हुआ देखने के लिए उत्सुक थी। इसी कारण उसने मौन द्वारा अपने पति को दुखिया का दुःख दूर करने को सम्मति दी थी। मेरे स्वामी अभी आयेंगे, वे इस दिशा में गये हैं; इस प्रकार सोच विचार करती हुई महाबल के आगमन की आशा में टकटकी लगाकर वह उसी तरफ देखती रही। पिछली रात बीत गई, प्रात.काल होने पर सूर्यदेव भी उदयाचल पर आगया, परन्तु आशा तरङ्गो में डुबकिये खानेवाली मलयासुन्दरी का हृदयेश्वर महाबल नही आया।

ऐसे अपरिचित जंगल में मुझे अकेली छोड़ न जाने वे कहा गये होंगे ? जो अभी तक भी नही आये। माता-पिता को मिलने की उत्कण्ठा से क्या वे शहर में तो नही चले गये होगे ? इत्यादि संकल्प विकल्प करती हुई, मलयासुन्दरी ने शहरमें जाने का निश्चय किया

जब वह शहर के दरवाजे के पास पहुंची तब उसे सन्मुख आता हुआ शहर कोतवाल मिला। दिव्य वेष और सुन्दर रूप देखकर कोतवाल ने उसका नाम व स्थान पूछा। परन्तु पुरुषवेश में मलयासुन्दरी प्रश्न का उत्तर न देकर सोच विचार में पड़ गई और घबराये हुए मनुष्य के समान वह चारों ओर देखने लगी। इससे कोतवाल को शंका पैदा हुई। उसके पास क्या क्या वस्तुएँ है ? यह तलाश करने पर उसके कानों में पहने हुए कुण्डल और शरीर पर धारण किये हुए वस्त्र महाबल कुमार के मालूम हुए। यह देख कोतवाल आश्चर्य में पड़कर विचारने लगा—महाबल कुमार के वस्त्र और इस युवक के पास ? कोतवाल उसको पकड़कर राजा के पास ले आया। उसका रूप और वेश देखकर सब आश्चर्य में पड़ गए।

राजा—कोतवाल ! यह पुरुष कौन है ? इसकी पहनी हुई पोशाक महाबलकुमार की मालूम होती है ?

कोतवाल—महाराज ! यह युवक शहर के दरवाजे में प्रवेश करते हुए मेरे देखने में आया है। इसका

नाम स्थान पूछने पर यह कुछ भी उत्तर नही देता।

राजा—(मलयासुन्दरी के सन्मुख देख) क्यों भाई तू कौन है ? किसका पुत्र है ? यह सुन मलया-सुन्दरी विचार में पड़ी। यदि इस समय मैं अपनी सत्य बात कहूँगी तो राजा आदि किसी भी मनुष्य को उस पर विश्वास न आयगा क्योंकि हम दोनों के मिलाप और विवाह की घटना ही ऐसी है जो सुननेवाले को असंभवित मालूम हो तथा इस समय मेरा स्वरूप भी पुरुष का है इसलिये जबतक मुझे अपने स्वामी का मिलाप न हो तबतक सत्य घटना प्रकाशित नही करनी चाहिये, जो कुछ मेरे नसीब में होगा सो होगा। यह सोच कर उसने कल्पित उत्तर दिया। मैं महाबल-कुमार का प्रिय मित्र हूं, उन्हीं ने मुझे यह तमाम वेश दिया है।

सूरपाल—महाबलकुमार इस समय कहां है ?

मलया—कहीं नजदीक में ही स्वेच्छा से फिरते होंगे।

सूरपाल—कुमार अगर नजदीक में ही होते तो

वह अपने कथन व वचनानुसार हमें क्यो न आमिले ? कुमार कही नजदीक में नही हो सकता। अगर यहां नजदीक में ही होता तो चारों तरफ तलाश करने पर भी उसका पता क्यों नही लगा ? खैर यदि तू मेरे पुत्र का प्रिय मित्र है तो इन तमाम मनुष्यो में से कोई भी तुझे क्यों नही पहिचानता ? यह सुन मलया सुन्दरी ने कुछ भी उत्तर न दिया और वह चुपचाप खड़ी रही।

राजा सूरपाल मन ही मन विचारने लगा—यह सम्भव होता है कि कुछ दिन पहले कुमार के वस्त्रादि चुराये गये थे। वह सब अलम्ब पर्वत की गुफा में रहने वाले प्रचण्ड चोर लोहखुर ने ही चुराया होगा; जिसे कल ही मरवा दिया गया है। यह युवक उसी चोर का छोटा भाई, स्नेही अथवा उसके सगे-संबंधियों में से मालूम होता है, और उसके वियोग से उदासीन या सम्भ्रान्त हो उसे देखने हेतु जहा-तहां फ़िरता हुआ मालूम होता है। कुमार के कुण्डल और वस्त्र भी इसे उस चोरके पास से हो मिले होंगे तथा अल्पभाषी

और विशेष चुप्पी, यह चोर का लक्षण भी इसमें पाया जाता है। यह भी सम्भव है कि इन चोरो ने मिल कर कही कुमार को मार ही डाला हो ? इस लिए यह मनुष्य भी मेरा दुश्मन ही है।

इन विचारों की उलझन में भयाकुल हो राजा सूरपाल बोल उठा—अरे कोतवाल ! इस चोर को भी वही पर ले जाओ जहां कल उस चोर को बांध कर मारा था; वही पर ले जा-कर इसको भी मार मार डालो। राजा के शब्द सुन कर मलयासुन्दरी का हृदय काँप गया। उसने सोचा दुर्दैव वश अब फिर मुझ पर मरणान्त विपत्ति का बादल आ घिरा। इस संकट का कैसे निस्तार होगा ? धैर्य पाने के लिए इस समय उसने महाबल द्वारा याद कराये हुए उस श्लोक का स्मरण किया। उसको याद करने से उसके हृदय में धैर्य ने प्रवेश किया। वह स्वयं ही अपने आप को आश्वासन देने लगी। अपने शुभाशुभ कर्म पर निर्भर हो कर उसने अपने मनमें हिम्मत धारण की।

उसकी शान्त और तेजस्वी आकृति को देख कर

मन्त्री मण्डल पर उसका बड़ा प्रभाव पड़ा। अकस्मात् राजा की अविचारित अनर्थकारी आज्ञा से मन्त्रीमंडल में खलबली मच गई। अतः प्रधानमन्त्री बोला—महाराज! इस युवक की ऐसी भद्र और सुन्दर आकृति से यह अनुमान नही होता कि यह चोर होगा! इस दिव्य पुरुषने अपराध किया है यह निर्णय जबतक नहो इसे प्राणदण्ड देना सर्वथा अनुचित है। तथापि इस विषय में आपकी भ्रान्ति दूर न हो सकती हो तो आप इसकी कोई दिव्य परीक्षा ले सकते हैं। यदि उस कठिन परीक्षा से इसका पराभव हुआ तो इसे चोर समझा जायगा। अगर उस परीक्षा में इसका पराभव न हुआ तो इसे निर्दोष माना जायगा। इस प्रकार से जनता में भी आपका अपवाद न होगा।

राजा—तुम्हारा कहना यथार्थ है। परन्तु इसकी परीक्षा किसतरह की जाय? मन्त्री ने उत्तर दिया—महाराज! एक घड़े में सर्प डाल कर उसे इसके हाथ से निकलवाया जाय। यदि वह सर्प इसे डस ले तो यह सदोष और वह यदि इसको न डसे तो सर्वथा

निर्दोष समझना चाहिये। बस इससे बढ़ कर कठिन परीक्षा और क्या हो सकती है ? यह बात स्वीकार कर राजा ने गारुडिक लोगो को बुलवाया और अलंब नामक पहाड़ की किसी गुफा में से एक भयंकर सांप पकड़ लाने की आज्ञा दी।

राजा ने पुरुष रूपी मलयासुन्दरी के पास से कुमार के वस्त्र और कुण्डलादि उतरवा लिये व उसे कोतवाल की निगरानी में सौप दिया। ठीक इसी समय राजमहल से रानी पद्मावती की दासी ने आ कर उदास हो नम्रता से राजा को निवेदन किया—महाराज ! महारानी पद्मावती आपसे यह प्रार्थना करती है कि अभी तक भी कुमार का कही पता नही लगा। उनके कथनानुसार आज पांचवाँ दिन है, यदि कुमार जीवित होते तो अवश्य ही अपनी प्रतिज्ञानुसार वे आज आये बिना न रहते। लक्ष्मीपुंज हार का भी अभी तक मिलने का कोई समाचार नही प्राप्त हुआ। जहां कुमार के अस्तित्व का ही अभाव मालूम होता हो वहां हार प्राप्ति की आशा रखना तो सर्वथा व्यर्थ

है । अपने इकलौते पुत्र के अभाव में मैं प्राण धारण करने के लिए बिल्कुल असमर्थ हूं । मैंने आज दिन तक आपका जो कुछ अविनय अथवा कोई अपराध किया हो उसे आप कृपाकर क्षमा करें । एवं मुझे अब आज्ञा दें ताकि मैं अलम्ब पर्वत के शिखर पर झम्पापात कर प्राण त्याग कर अपनी आत्मा को शान्ति दूँ ।

राजा ने कहा—दासी ! रानी को हिम्मत दो और हमारी तरफ़ से कहो कि यह असहनीय दुःख हम दोनों को समान ही है । कुमार की खोज में मैंने सब ओर मनुष्य भेजे हैं उनके लौटने तक सन्तोष रखो । कुमार का कोई न कोई समाचार अवश्य मिलेगा, क्यों कि आज पांचवां दिन है । अगर रात तक कुमार का कुछ भी समाचार प्राप्त न हुआ तो कल जैसा योग्य होगा, वैसा ही किया जायगा । दासी ! आज इस सुन्दर शरीर वाले मनुष्य के पास से कुमारके कुंडल और कुछ वस्त्र मिले हैं । सम्भव है इसी प्रकार हार और कुमार भी मिल जायगा । आज इस मनुष्य को दिव्य दण्ड देकर इसकी परीक्षा करनी है । यह तमाम

समाचार कह रानी को कुमार के ये कुण्डल और वस्त्र देना, यों कह राजा ने कुण्डल और वस्त्र दासी को दे दिये। दासी ने रणवास में जाकर वह कुण्डल व वस्त्र महारानी पद्मावती को दे दिये। उन्हे देख रानी को अत्यानन्द प्राप्त हुआ।

रानी—दासी ! ये कुण्डलादि कहां से मिले ? और मेरे समाचार का राजा ने क्या उत्तर दिया ? दासी ने राजा का कथन किया हुआ सब वृतांत कह सुनाया। अब हर्ष और शोक से व्याकुल हो रानी पद्मावती अनेक प्रकार के संकल्प विकल्प करने लगी। क्या सचमुच ही वह मेरे पुत्र का प्रिय मित्र होगा ? वह अकेला ही यहा क्यो आया होगा ? क्या वह कुमार का समाचार लाया है ? या कोई धूर्त मनुष्य मेरे पुत्र को मार कर तो उसके कुण्डल वस्त्रादि नही लाया ? मैं उस पुरुष को देखूं तो सही।

यह विचार कर रानी ने दासी से कहा—दासी ! जिस जगह उस पुरुष की दिव्य-द्वारा परीक्षा की

जायगी । मुझे भी वहां पर जाना है । उसे देख कर मैं भी इस विषय में कुछ विशेष निर्णय कर सकूंगी । इसलिये वहां चलने की सर्व सामग्री तैयार कर रानी के आने के पहले ही धनञ्जय–यक्ष के मन्दिर में राजा आदि हजारों मनुष्य उस कठिन-परीक्षा को देखने के लिए आ पहुँचे थे । इस समय सर्प लाने को भेजे हुए गारुड़िक भी वहां आगये । वे राजा को नमस्कार कर बोले—महाराज ! अलंबगिरि की अनेक गुफाएँ ढूंढते हुए हमें श्यामवर्ण और दीर्घकाय वाला एक भयंकर सर्प मिला है । उसे हम घड़े में डालकर यहां लाये है । यों कह कर उन्होंने वह घड़ा राजा के सामने रख दिया ।

राजा ने उस घड़े को धनञ्जय-यक्ष के मन्दिर में उसकी मूर्ति के सामने रखवा दिया, और क़ोतवाल को आज्ञा दी कि जाओ उस पुरुष को यहां ले आओ । राजा की आज्ञा पाते ही शस्त्रधारी अनेक राज–पुरुषों से परिवेष्टित उस पुरुष-रूप मलयासुन्दरी को वहाँ पर लाया गया । उसके तेजस्वी और भद्राकृति वाले चेहरे

को देखकर प्रधान नागरिक आपस में कहने लगे क्या ऐसी आकृति वाला कभी चोर हो सकता है ? यदि जल से अग्नि उत्पन्न हो, चन्द्र से अंगार बरसे, और अमृत से विष प्रकट हो तो ऐसे पुरुष से अकार्य हो सकता है। यह सोच-विचार कर प्रधान नागरिक राजा से बोले—महाराज ! इसकी सुन्दर और सौम्य मुख-मुद्रा से यह मनुष्य कुलीन और किसी बड़े खानदान का मालूम होता है। अतः ऐसे मनुष्य को इस तरह का भयंकर दिव्यदंड देना योग्य नहीं है। उसकी सौम्य आकृति देख रानी ने भी ऐसी घोर परीक्षा लेने से राजा को निषेध किया।

राजा— सज्जनो ! कठिन दिव्य दंड देने में किसी तरह का दोष नहीं है, जिस तरह सच्चा स्वर्ण अग्नि में डालने पर अधिक तेजवान होकर शुद्ध होता है वैसे ही यदि यह पुरुष निर्दोष होगा तो इसकी कीर्ति में विशेष वृद्धि होगी। राजा के मुख से यह उत्तर सुनकर रानी व नागरिक-गण चुप रह गये।

राजा की आज्ञा से प्रधान-मंत्री ने उस पुरुष को

कहा महाशय आप कौन है ? हमें इस बात का कुछ पता नही । आप पर चोरी का अपराध रखा गया है इसके साथ ही महाबलकुमार के शरीर को नुकसान पहुंचाने का शक भी आप पर किया जाता है । उस विषय में तुम निर्दोष हो या सदोष हो यह निर्णय करने के लिये वहां पर तुम्हें कठिन परीक्षा देनी होगी । इस यक्ष के मन्दिर में सर्प डाल कर एक घड़ा रखा हुआ है; वह घड़ा खोल तुम्हें अपने हाथ से पकड़ कर उस घड़े में से सांप को बाहर निकालना होगा । फिर अपने हाथ से ही उस सर्प को घड़े में रख देना होगा । यदि इसके दरमियान उस साप ने तुम्हे न डसा तो तमाम जनता तुम्हें निर्दोष मानेगी । यदि तुम दोषी हुए तो अवश्य ही वह सर्प तुमको डस लेगा और इसीसे तुम्हारे दोष का तुमको दण्ड भी मिल जायगा । महाराज सूरपाल की आज्ञा से तुम्हारी निर्दोषिता प्रकट करने के लिए यह कठिन परीक्षा ली जा रही है । निर्दोष मनुष्य की यह सत्य की रक्षा करने वाला यक्षदेव अवश्य ही सहाय करता है ।

प्रधान का कथन पूर्ण होते ही पुरुष वेषधारी मलयासुन्दरी धैर्य धारण कर शीघ्र ही उस घट के पास खड़ी हुई और पंचपरमेष्ठि महा–मन्त्र नवकारको स्मरण कर, महाबल द्वारा बतलाए हुए उस श्लोक के भावार्थ को याद कर उसने प्रसन्नता पूर्वक उत्साह से उस घड़े के ढक्कन को उठाया और आश्चर्यपूर्वक जनता के देखते हुए उस घड़े में हाथ डाल कर सांप को बाहर निकाला। मलयासुन्दरी का हाथ लगते ही रस्सी के समान हो कर किसी स्नेही की तरह वह सांप उस का मुख देखने लगा। बहुत समय तक हाथ में रखने पर भी उस भयंकर सर्प ने मलयासुन्दरी को कुछ भी नुकसान नहीं पहुंचाया।

इससे उसकी सत्यता के लिए उपस्थित जनता खुश हो कर उच्च स्वर से निर्दोष! निर्दोष!! पुकार कर तालियां बजाने लगी। मलयासुन्दरी के हाथ में पाले हुए सर्प के समान रहे हुए उस भीमकाय सांपने अपने मुख से एक दिव्य हार उगला और धीरे - धीरे उसके गले में डाल दिया। यह आश्चर्य देख तमाम

लोग विचार शून्य हो गये। अहा ! यह कैसा आश्चर्य ! राजा ने उस हार को पहचान लिया और वह बोल उठा—अहो ! यही वह लक्ष्मीपुंज हार है, जिसकी खोज के लिए महाबल कुमार गया है। तमाम मनुष्य एक दूसरे के सामने देखने लगे। इतने ही में उस साँप ने ऊपर फण उठा कर अपनी जीभ से उस परीक्षा देने वाले युवक का मस्तक चाटकर, उसके मस्तक पर लगे हुए तिलक को मिटा दिया। तिलक मिटते ही वह नवयौवना स्त्री बन गई। सर्प उसके मस्तक पर अपनी फणाओं को छत्राकार में विस्तारित कर आनंद से झूमने लगा। इस आश्चर्य को देख कर तमाम लोगों के छक्के छूट गये। किसी के भी मुँह से कुछ शब्द न निकला। वे भयभीत हो स्तब्ध से रह गये।

इस चमत्कार को देख भय से कंपित हो, महाराज सूरपाल बोला—अरे मैंने मूर्खता में आकर कैसा अयोग्य कार्य किया ! जनता और रानी के मना करने पर भी मैंने इस दिव्य पुरुष की ऐसी भयंकर परीक्षा

लेकर महा अनर्थ पैदा किया ? यह सर्प कोई साधारण सर्प नहीं है; परन्तु कोई देव या दानव सर्प का रूप लेकर आया मालूम होता हैं। अथवा इस सत्पुरुष को सत्यता के कारण यह शेष नाग हो इसकी सहायता करने के लिए आया हो, या इस मन्दिर का अधिष्ठाता धनंजय—यक्षराज ही प्रकट हुआ हो, यह अनुमान होता है। इस घटना का कुछ परमार्थ समझ में नहीं आता। मुझे इनकी आराधना करनी चाहिये। क्योंकि भक्ति से ही देवता अपने अनुकूल होते है। यह सोच-कर राजा ने पुष्प और धूप मँगवाकर उस नाग देवकी पूजा की और हाथ जोड़ कर नम्रता से कहा—हे पन्न-गाधिराज ! मैंने तुम्हें अनेक प्रकार से कष्ट पहुँचाया है, कृपाकर मेरा अपराध क्षमा करो।

राजा जब यह कह रहा था, तब मलयासुन्दरी ने उस सर्प को नीचे जमीन पर रख दिया। राजा ने दूध मँगवाकर उस सर्प के सामने रक्खा। जब सर्प ने दूध पी लिया तब राजा ने उस सर्प को लाने वाले गारुडियों से कहा, इस नागराज को जहां से तुम लाये हो; उसी

जगह इस तरह छोड़ आओ कि जिससे इसे जरा भी तकलीफ न हो। यदि इस नागदेव को वहां छोड़ने तक जरा भी तकलीफ़ पहुँची तो मैं तुम्हें प्राणदंड दूँगा। राजा का आदेश पाते ही गारुडी लोग उस सर्प को बड़ी हिफाजत से उठाकर लेगये।

अब राजा मलयासुन्दरी से पूछने लगा—भद्रे! तू पहले पुरुष रूप में थी और इस समय हमारे देखते हुए तेरा स्त्री रूप बन गया, इस बात में क्या रहस्य है? अपना सच्चा वृतान्त सुना कर हमारे सब के मन को शान्त कर. मलयासुन्दरी इस समय यह विचार कर रही थी, कि पहले भी मेरे मस्तक पर किए हुए तिलक को मेरे स्वामी के थूक से मिटाने पर मेरा स्वाभाविक रूप बन गया था, और उन्होंने मुझे यह कहा भी था, कि जब तक मैं अपने थूक से इस तिलक को न मिटा दूँगा तब तक तेरा स्वाभाविक रूप कदापि न होगा, परन्तु इस वक्त तो इस सर्प के ही थूक चाटने से मेरा स्वाभाविक रूप बन गया! यह लक्ष्मी-पुंज हार भी इस सर्प के मुख में से निकला, तो क्या

मेरे स्वामी ने ही सर्प का रूप धारण किया होगा। यह बात समझ में नहीं आती। यदि इस समय मैं अपनी सत्य घटना राजा को सुना दूं तो उसमें किसी तरह की हानि मालूम नही होती। यह सोच कर मलयासुन्दरी बोली—महाराज! मैं चन्द्रावती-नरेश महाराज-वीरधवल की मलयासुन्दरी नाम की पुत्री हूँ, इसके सिवाय और मैं कुछ नहीं जानती।

भद्रे! तेरा यह वचन विश्वास करने योग्य नही है क्योंकि जब तू पुरुष रूप में थी तब कुछ और ही कहती थी। कहां चन्द्रावती और कहां पृथ्वीस्थानपुर नगर! बासट योजन का अन्तर और फिर महाराज वीरधवल की कन्या यहां पर एकाकी किस तरह आ सकती है? खैर यदि यह बात सच भी होगी तो खातरी होने पर या वहाँ से कोई तुम्हारी खोज में आयगा तो तुम्हारा सत्कार कर उसके साथ तुम्हें वापस भेज दिया जायगा। अब रानी के सामने नजर कर राजा ने कहा—प्रिये! लक्ष्मीपुंज हार सहित अभी तो तुम इस कन्या को अपने पास रखो। प्रतिज्ञा

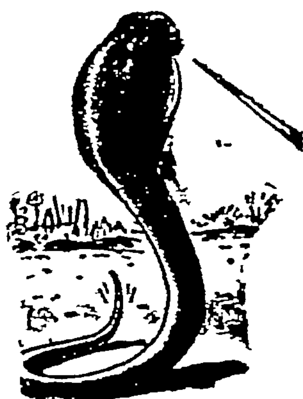
के अनुसार हार पांच ही दिनों में आगया है। सत्य प्रतिज्ञावाला कुमार भी किसी स्थान पर सुखी या दुखी अवस्था में अवश्य होगा। और अब वह जल्दी ही आ मिलेगा' अतः अब तुम प्राण त्याग के अभिप्राय को त्याग दो क्योंकि हार के लिये की हुई प्रतिज्ञा भी तुम्हारी पूर्ण हो चुकी है।

रानी पद्मावती बोली—प्राणनाथ! पुत्ररत्न को खोकर क्या इस हार की प्राप्ति से मुझे सन्तोष हो सकता है? मैं अपने इकलौते सद्गुणी पुत्र के सिवा किस तरह जीवन धारण रख सकती हूं? मेरी बुद्धिमत्ता को धिक्कार है, मैंने मूढ़ता में आकर इस हार के लिये अपने प्राण प्यारे-प्यारे पुत्र को संकट में डाला। सचमुच यह मैंने वैसा ही किया जैसा कोई मूर्ख मनुष्य नीम के लिये अपने घर में लगे हुए कल्पवृक्ष को नष्ट कर देता है। प्यारे पुत्र को गँवा कर अब मैं जीवित नहीं रह सकती! इसलिये महाराज! मुझे आज्ञा दे दें तो मैं झंपापात करके अपने प्राण त्याग कर दूं।

देवी ! मैंने तुम्हे प्रथम ही कह दिया कि कल तक धीरज धारण करो। जब लक्ष्मीपुंज हार मिल गया तो कुमार भी अवश्य आ मिलेगा। इस प्रकार रानी को धीरज देकर राजा महल में आया। जनता भी आश्चर्य करती हुई अपने अपने स्थान पर चली गई। मलयासुन्दरी ने भी रानी के साथ महल मे आकर भोजन कर वह शेष दिन व्यतीत किया। राजकुमार की चिन्ता में राजा और रानी ने वह दिन और सारी रात बड़े कष्ट से व्यतीत की।

प्रात:काल होते ही कुमार की खोज में भेजे हुए राजपुरुष चारों तरफ से जैसे गये थे वैसे ही वापिस आने लगे। धीरे-धीरे सबने वापिस आकर उदासीन हो कुमार के न मिलने का समाचार दिया। इस स-माचार से राजा और रानी के दिल में निराशा के घोर बादल छा गये। रानी पद्मावती ने झम्पापात कर प्राणत्याग का दृढ़ निश्चय कर लिया। निरुपाय हो राजा को भी वैसा ही स्वीकार करना पड़ा। अब वे पर्वत शिखर से गिर कर प्राण त्याग करने के लिए

समीपवर्ती अलम्ब नामक पहाड़ की तलहट्टी में आ पहुँचे। शहर भर की जनता हैरान थी, मलयासुन्दरी को भी दुःख का पार न था।



(२२)

महाबल पर मरणान्तक कष्ट

पृथ्वीस्थानपुर नगर समीप प्रचंड प्रवाह में गोला नदी बह रही है। किनारे पर धनञ्जय–यक्ष का मन्दिर है। मन्दिर से थोड़ी ही दूर एक विशाल वट-वृक्ष है। शाखा–प्रशाखाओ से विस्तार पाये हुए उस वट–वृक्ष के नीचे अनेक मनुष्य और पशु-गण विश्रांति लेते हैं। इसी वट-वृक्ष की एक मजबूत शाखा के साथ लटका कर आज से तीन दिन पहले लोहखुर नाम के एक चोर को राजा की आज्ञा से मरवा दिया था। उस चोर के नजदीक की दो शाखाओं के मध्य में एक युवा पुरुष उल्टे मस्तक लटक रहा था। उसके दोनों पैर दो शाखाओं के साथ मजबूत बंधनों से बँधे हुए

थे । वह युवक अपने असह्य दुःख के कारण एक शब्द भी मुख से नहीं बोल सकता था ।

उस तरफ जाने वाले कई एक राहगीर वार्तालाप करते जाते थे, कि महाराज सूरपाल तथा पद्मावती रानी पुत्र वियोग में आज झंपापात कर मरने के लिये इस समय पहाड़ की तरफ गये है । महाबल कुमार की चारों तरफ तलाश की गई परन्तु कही भी पता नही लगा । पुत्र विरह में आज राजकुल खतम हो रहा है। पृथ्वीस्थानपुर की प्रजा आज अनाथ हो जायगी । इत्यादि बातें करते हुए वे सब लोग उस विशाल वट-वृक्ष के नीचे आ पहुँचे इधर-उधर दृष्टि डालने से वह मृतक चोर एक शाखा के साथ लटकता हुआ उनको नजर आया । सब लोग कहने लगे आज से तीन दिन पहले राजाने जिस चोर को सजा दी थी वह यही मालूम होता है । इतने में उसके पास ही उल्टे मस्तक लटका हुआ व मजबूत बन्धन से बँधा हुआ एक युवक नजर आया । सब लोग आश्चर्य से बोले कि यह फिर कौन ? यह तो जीवित मालूम होता है बड़ी मुश्किल

से श्वासोच्छ्वास ले रहा है उत्सुकता पूर्वक एकदम नजदीक जाकर सूक्ष्म नजर से देखा तो मालूम हुआ कि अरे यह तो महाबल कुमार ही है जिसके वियोग से राजा व रानी आत्मघात करने के वास्ते अभी ही अलंब पर्वत की तरफ गये हैं। दौड़ो-दौड़ो राजा-रानी को खबर दो व उनको बचाओ। जल्दी करो नही तो राजा-रानी पर्वत से झंपापात कर देगे। झंपापात की तय्यारी हो ही रही थी इतने में वे सब लोग दौड़ते दौड़ते अलंब पर्वत पर जा पहुँचे। महाराज व महारानी को खबर दी कि महाबल कुमार तो उस वट-वृक्ष की शाखा के मजबूत बंधनों से बँधा हुआ उल्टे मुख लटक रहा है। बड़ी मुश्किल से श्वासोच्छ्वास ले रहा है। अभी हम देख कर आये हैं यह खबर सुनते ही राजा, रानी तथा मलयासुन्दरी आदि सब लोग शीघ्रातिशीघ्र उस वट-वृक्ष की तरफ गये। महाबल कुमार को उसी हालत में देख कर सबका हृदय भर आया। राजा ने तुरन्त सुथार को बुलवा कर वट की शाखे कटवाई और बड़ी हिफाजत से कुमार को नीचे

उतारा। अत्यन्त पीड़ा के कारण कुमार बोलने में असमर्थ था परन्तु अनेक उपचारों के पश्चात् कुमार कुछ होश में आया।

कुमार को गोद में लेकर राजा आंखों से आंसू टपकाता हुआ बोला—बेटा ! तेरी यह दशा कैसे हुई ? मेरे राज्य-बल और भुजा-बल को धिक्कार है जो मैं राजा होकर भी बेटा आज तुझको इस दशा में देख रहा हूँ ! थोड़ी देर बाद कुछ विशेष होश में आकर महाबल ने अपने नेत्र खोले, पद्मावती रानी भी आंखों से आंसू बरसाती हुई पुत्र की तरफ देख कर बोली—बेटा ! मेरे जैसी दुर्भागिनी माता इस दुनिया में बहुत कम होगी जो शृङ्गार के क्षणिक सुख के लिये तुझको ऐसी भयंकर विपत्ति में डाला। बेटा ! इतने दिन तू कहां था ? ऐसी भयंकर दशा कैसे हुई ? किस पापी ने तुझको यहाँ बांधा ? यह सब हकीकत सुनने के लिये हमें आतुरता हो रही है।

महाबलकुमार को किसी प्रकार की चोट तो

लगी नहीं थी केवल बन्धन और उल्टे मस्तक से लटकने के कारण अत्यन्त दुःख सहना पड़ा। अब वह दोनो कारण दूर होने से धीरे धीरे विशेष स्वस्थ होने लगा। सर्वथा शान्ति पाकर वह धीरे से बैठा होगया और चारों ओर नजर घुमा कर देखने लगा। पास में बैठी हुई मलयासुन्दरी पर जब उसकी दृष्टि पड़ी तब अकस्मात् उसके चेहरे पर प्रसन्नता झलक उठी। अब वह माता-पिता के आग्रह से अपना विचित्र वृत्तान्त सुनाने लगा।

उस दिन मध्य रात्रि के समय महल में एक हाथ देखने में आया था। वहां से लेकर आधी रात को मलयासुन्दरी को केलों के बगीचे में अकेली छोड़ एक औरत के रोने का शब्द सुन उसका कष्ट दूर करने की भावना से उस शब्द के अनुसार जंगल में गया था, वहां तक का सारा वृत्तांत उसने कह सुनाया।'

रुदन करती स्त्री के शब्दानुसार आगे जाते हुए मंत्र साधन करने की सर्व तय्यारी किये बैठा हुआ एक योगी देखने में आया। मुझे देखकर उसने अपना काम

छोड़ दिया और सन्मान देकर विनय पूर्वक वह मेरे पास आकर याचना करने लगा कि हे कुमार ! आप परो-पकार करने में प्रवीण हैं। मेरे पुण्योदय से ही आप इस समय अकस्मात् यहां आ पहुँचे हैं। मैंने एक महा-मंत्र सिद्ध करना प्रारंभ किया है। वह मंत्र सिद्ध होने पर सुवर्ण पुरुष की सिद्धि होगी। मैंने सव सामग्री तय्यार कर रक्खी है। परन्तु उत्तर साधक के अभाव से अटक रहा हूं। इसलिए कुछ देर के वास्ते आप मेरे उत्तर-साधक बने, जिससे आपकी सहायता से मेरी मंत्र सिद्धि हो।

पिताजी ! योगी की प्रार्थना से मुझे दया आगई। इसलिए उसकी प्रार्थना मंजूर कर और उसके कथना-नुसार हाथ में खड़ग लेकर मैं उसका उत्तर-साधक बना। योगी ने कहा—हे वीर पुरुष ! जहाँ पर यह स्त्री रुदन कर रही है उस बड़ की शाखा से बँधा हुआ अक्षत-अङ्ग वाला एक चोर का मृतक शरीर है। उसे आप यहां ले आवे।

मैं तलवार हाथ में लिये बड़ के नीचे पहुँचा।

वहा चोर के मुरदे के नीचे जमीन पर बैठी हुई रुदन करती मुझे एक स्त्री देखने में आई। मैंने उससे पूछा—भद्रे ! तू कौन है ? किसलिये करुण स्वर से रुदन करती है ? और ऐसी भयंकर रात्रि में तुम्हारा एकाकी स्मशान में आने का क्या कारण ? मेरी बात सुनकर वह निश्चल दृष्टि से मेरे सन्मुख देखती हुई बोली—सत्पुरुष ! मै मन्दभाग्या अपने दुःख की तुम्हें क्या बात सुनाऊँ ? इस बड़ की शाखा से जो पुरुष लटकाया हुआ है वह अलंब पर्वत की गुफा में रहने वाला लोहखुर नामक चोर है। आज से दूसरे दिन पहले राज-पुरुषों ने छल प्रपंच से उसे पकड़ कर राजा के पास हाजिर किया। राजा ने क्रोध में आकर इस बड़ की शाखा से बँधवा कर मरवा दिया। मैं उसकी प्रिय स्त्री हूँ। जिस दिन इसकी मृत्यु हुई उस दिन ही सुबह मैं इसे मिली थी, और पत्नी बनकर रही थी। थोड़े ही समय में इसने मुझसे प्रेम किया था वह अभी तक मेरे हृदय में खटकता है। सत्पुरुष ! आप कोई ऐसा उपाय करें जिससे मैं इसके मुख पर चंदन का

विलेपन करूं ।

उस स्त्रीके करुणाजनक वचनों से मेरा हृदय-द्रवित हो गया। मैंने उसे कहा—तू मेरे कन्धों पर चढ़कर तुझे उचित लगे वैसा कर। वह स्त्री उत्कंठा पूर्वक मेरे कंधों पर चढ़कर उस शवकी गर्दन में हाथ डालकर ज्योंही उसका आलिंगन करने लगी त्योंही मृतक ने अकस्मात् अपने दातों से उसकी नासिका पकड़ ली। वह दु:ख से रुदन करती हुई कांपने लगी। जब उसने नासिका छुड़ाने के लिये पीछे को जोर लगाया तब मजबूत पकड़ी हुई होने के कारण वह मुर्दे के मुख में ही टूट गई। यह आश्चर्य देख मुझे हँसी आ गई। क्योंकि जिस चोर के प्रेम के लिए वह स्त्री रोती थी और जिसे आलिंगन करने के लिए अधिक उत्कंठित थी उसी चोर के मृतक ने उसका नाक काट लिया।

मुझे हँसता देख अकस्मात् उस मृतक के मुख से यह शब्द निकले—महाबल मेरा चरित्र देख कर किस-लिए हँसता है ? कुछ समय के बाद तू भी मेरे समान

इसी बड की शाखा पर लटकाया जायगा, अगली रात्रि में ही तेरे ऊँचे पैर, और नीचा मस्तक करके तुझे यहाँ पर बांधा जायगा।

पिताजी! उसके यह शब्द सुनकर निर्भीक होने पर भी मेरे हृदय में कुछ भय पैदा हुआ। महाबल के मुख से यह कथन सुन वहां पर बैठे हुए राजा आदि तमाम लोग विस्मय पाकर बोल उठे—कुमार! बड़ा आश्चर्य है, क्या कभी मुर्दे भी कुछ बोलते हैं? पिता की तरफ देख कुमार बोला—पिताजी! आपका कहना सच है, मुर्दा नही बोल सकता, परन्तु मुर्दे के मुख में प्रवेश कर कोई व्यन्तर आदि देव ही बोल सकता है। मैं धैर्यवान था, तथापि देव-वाक्य मिथ्या नही होता यह जानकर क्षोभित हुआ।

कांपती हुई स्त्री मेरे स्कंधों से नीचे उतरी, उसने मेरा नाम स्थान पूछा, मैंने भी अपना नाम स्थान सत्य बतला दिया। इससे उसको मुझपर कुछ विशेष विश्वास हुआ हो ऐसा मालूम हुआ। जाते समय वह स्त्री मुझ से बोली; कुमार! जब मेरी नासिका अच्छी

हो जायगी तब मैं आपके पास आकर इस चोर का दबाया हुआ धनादि बतलाऊँगी ।

उसके चले जाने पर मन को दृढ़ कर मैं वटवृक्ष पर चढ़ा । चोर के मुर्दे को बन्धन से छोड़कर जमीन पर गिराकर मैं नीचे उतरा । परन्तु इतने ही में वह मुर्दा उछल कर फिर वापिस शाखा से जा बँधा । मुझे फिर से बड़ पर चढना पड़ा । मैं समझ गया कि यह कुछ देवी चमत्कार है, अन्यथा जमीन पर पड़ा हुआ मुर्दा स्वयं उठकर ऊपर नहीं जा सकता । ऐसी परि-स्थिति मे इस मुर्दे को योगी के पास किस तरह ले जाया जा सकता है ? मैंने एक उपाय सोच कर उस मृतक को बन्धन से छोड़ उसके केशों को पकड़ कर मैं उसके साथ ही नीचे उतरा और उसे पीठ पर लाद कर, योगी के पास लाकर रख दिया ।

महाबल कुमार की विचित्र घटना सुनते हुए श्रोताओं को कभी आश्चर्य, कभी शोक, कभी हास्य, कभी भय से कंपन, कभी आनन्द और कभी दुःख का अनुभव होता था ।

इस तरह अनेक रसों का अनुभव करते हुए लोगों को आगे क्या हुआ होगा ? यह जानने के लिए एकाग्र मन से उत्सुकता हो रही थी।

महाबल बोला—पिताजी ! योगी ने उस मुर्दे को स्नान करा कर चन्दनादि के रस से उसका विलेपन किया। फिर एक बड़ा अग्निकुण्ड बनाकर उसमे अंगारे प्रज्ज्वलित करके उसके पास उस मुर्दे को रखकर मुझे उत्तर-साधक के तौर पर खड़ा रक्खा। इधर योगी ने पद्मासन लगाकर, आँखे मीच एकाग्र चित्त से जाप जपना शुरू किया। जाप जपते हुए सुबह होने आया, परन्तु वह मृतक मंत्र प्रभाव से उठ-कर अग्निकुण्ड में न पड़ा। यह देख निराश हो योगी जाप जपने में शिथिल हो गया। इतने में वह मुर्दा भयंकर अट्टहास करता हुआ आकाश मार्ग से उड़ कर पहले की तरह उसी बड़ की शाखा पर जा लटका।

योगी बोला—राजकुमार ! मालूम होता है मन्त्र साधन में कही मुझसे भूल हुई है। इसी कारण मन्त्र सिद्ध नही हुआ और मृतक भी उड़कर चला गया।

अब आगामी रात्रि में फिरसे मन्त्र–साधन करना होगा। अतः मेरे ऊपर कृपाकर आने वाली रात्रि तक आप यहां ही रहें। परोपकारी राजकुमार आपकी सहायता के बिना मेरी मन्त्र सिद्धि अशक्य है। मुझे पूर्ण विश्वास है आप मेरी इस प्रार्थना को अवश्य ही स्वीकार करेंगे। योगी के अत्यन्त आग्रह से और कुछ परोपकार की प्रेरणा के कारण अपनी परिस्थिति को भूल कर दूसरी रात में भी उसकी मन्त्रसिद्धि में उसका उत्तर–साधक बनना मैंने स्वीकार कर लिया।

भय के कारण योगी मुझसे बोला—कुमार! आप को मेरे पास रहा हुआ देख राजपुरुष या अन्य कोई मनुष्य यह शंका करेगा कि इस योगी ने कुमार को किसी छल प्रपंच से अपने स्वाधीन किया हुआ है। अतः इसे मारकर राजकुमार को छुड़ालें, अन्यथा कुमार को साथ लेकर यह योगी अन्यत्र चला जायगा, आदि कई कारणों से मेरे ऊपर आपत्ति आना सम्भव है। इसलिये यदि आपकी इच्छा हो तो सूर्यास्त तक विद्याबल से मैं आपका रूप परिवर्तित कर दूं।

पिताजी ! मैने योगी का कथन स्वीकार किया मेरे पास से यह लक्ष्मीपुंजहार न चला जाय यह सोचकर मैंने उसे मेरे मुख में डाल लिया। योगी ने जंगल में से एक जड़ी लाकर उसे मंत्रित कर मेरे मस्तक पर उसका तिलक किया उसके प्रभाव से काजल से भी अधिक काला और देखने मात्र से भयंकर रूप वाला मै एक दीर्घकाय सर्प बन गया। मुझे रहने के लिये नजदीक में ही उसने एक गुफा बतलाकर वह स्वयं किसी कार्य के लिये अन्यत्र चला गया।

पवन का पान करते हुए जब मैं दुपहरी में उस गुफा मे समय बिता रहा था तब सर्प की खोज करते हुए वहां पर कईएक गारुड़िये आ पहुँचे। उन्होने मंत्र बल से मुझे स्तभित कर दिया और पकड़कर एक घड़े में डाल दिया और यक्ष के मन्दिर में आप के पास ला रक्खा। आपने उस नवीन पुरुष को दिव्य करने के लिये (परीक्षा देने के लिये) आज्ञा दी। उसने भी निर्भीक हो मुझे पकड़ कर घड़े से बाहर निकाला, उसे देखकर मैंने पहचान लिया इसलिये

अपने मुख में से निकाल कर मैंने उसके गले में हार डाल दिया। फिर वह पुरुष साक्षात् स्त्री बन गई। उस वक्त भयभीत होकर आप लोगों ने धूप पुष्प से सांप की पूजा की और उसे दूध पिलाया। फिर आपने उस पर्वत की उसी गुफा में छुड़वा दिया। यह तमाम बातें आप सबको मालूम ही है।

राजा—'पुत्र। वह नवीन पुरुष हमारे देखते हुए अकस्मात दिव्य रूपधारी स्त्री क्योंकर बन गई?

महाबल—पिताजी मध्यरात्रि में रुदन करती हुई उस स्त्री का शब्द सुने बाद उसके शब्दानुसार जाते समय (मलयासुन्दरी की ओर इशारा कर) इस आपकी पुत्र वधु को मैं अपने वस्त्राभूषण सहित पुरुष के रूप में केलों के बगीचे में छोड़ गया था। प्रातः-काल होने पर किसी तरह वह फिरती हुई यहां आ-गई और आपने उसकी घट-सर्प का भयकर दिव्य दे-कर कठिन परीक्षा ली। आपके महान् पुण्योदय से उस परीक्षा में विधाता ने मुझे ही सर्प के रूप में भेज दिया। मैंने उसे पहचानते ही गुटिका के प्रयोग से

पुरुष रूप बनानेवाला उसके मस्तक पर जो तिलक किया हुआ था वह तिलक अपनी जीभ से मिटा दिया। उसके मिटते ही वह आप लोगों के समक्ष अपने स्वाभाविक रूप में वीरधवल राजा की पुत्री हो गई।

यह राजकुमार की ही पत्नी है, यह निश्चय होते ही राजा आदि तमाम मनुष्य आदर और स्नेह की दृष्टि से मलयासुन्दरी के सन्मुख देखने लगे। इस समय महाबल ने मलयासुन्दरी की तरफ देख कुछ इशारा किया जिससे तुरन्त ही उठ कर मलयासुन्दरी ने अपने वस्त्र सकोच कर मर्यादा पूर्वक श्वसुर और सास के चरणों को हाथ लगाकर नमस्कार किया। उन्होने भी प्रसन्न हो उसे अखण्ड सौभाग्यवती रहो, यह आशी-र्वाद दिया।

इस समय अपने अपराध का पश्चात्ताप करते हुए महाराज सूरपाल के नेत्रो से अश्रु बहने लगे। मस्तक हिला वह बोल उठे—ओ कमनसीब सूरपाल ! अपनी पुत्रवधु पर शत्रु के समान इतना अनुचित आचरण ! !

नगर के प्रधान नागरिक बोले—महाराज ! इसमें आपका नही परन्तु अज्ञानता का ही अपराध है। रानी पद्मावती ने हाथ पकड़ कर पुत्रवधू को अपनी गोद में बिठाकर स्नेह से कहा—पुत्री ! तूने उस समय अपना सच्चा वृत्तान्त क्यो न बतला दिया ? अथवा उस अवसर पर तेरा मौन रहना ही ठीक था। क्योंकि तुम्हारी यह विचित्र घटना उस वक्त सच कहने पर भी किसी के मानने में न आती। पुत्री ! अज्ञानता के कारण हमने तुझे कैसा असह्य दुःख दिया है ? हा, हा ! यदि उस अवसर पर तेरा कुछ भी अनिष्ट हो जाता तो हमारी क्या दशा होती ? सचमुच ही अभी हमारे पुण्य का उदय है, इसी कारण इतना कष्ट सह कर भी हमारे कुल का उद्धार हो गया। बेटी ! तू परमार्थ को जानने वाली कुलीन बाला है अतः हमारा यह अपराध तुझे क्षमा करना चाहिये। तेरे जैसी सद्-गुण वाली राजकुमारी के साथ विधिपूर्वक विवाह कर वधू सहित सत्यप्रतिज्ञ राजकुमार को देख हम अपने मानव-जन्म को सफल समझते हैं। यो कहकर रानी

पद्मावती ने अपने कीमती आभूषण देकर पुत्रवधु मलया सुन्दरी का अच्छी तरह सत्कार किया।

राजा—बेटा! अलंबगिरि की गुफा में सर्परूप में फिरते हुए तुमने क्या क्या अनुभव किया? महाबल बोला पिताजी शेष दिन तो शान्ति से ही बीत गया था। संध्या समय योगी मेरे पास आया, उसने आक के दूध से मेरे मस्तक पर किये हुए तिलक को मिटा दिया, इससे मेरा स्वाभाविक रूप होगया। वह फिर मुझसे बोला—कुमार! चलो फिर अपना मन्त्र साधन शुरू करें।

मैं उसके साथ चला गया। अग्नि से जाज्वल्यमान कुण्ड के पास जाकर योगी ने मुझे फिर उस कल वाले मुर्दे को लाने की आज्ञा दी। मैंने पहले के समान ही बड़ से मृतक को नीचे उतार योगी के पास ला रक्खा। योगी ने उसे स्नान करा कर मण्डल के अंदर सुला दिया, और उत्तर–साधक के तौर पर मैं उसके पास खड़ा होगया। अब ज़्यों-ज्यों उस योगी ने मन्त्र जाप जपना शुरू किया त्यों-त्यों वह मृतक उठ-उठ कर

फिर वापिस नीचे गिरने लगा। इस तरह जाप करते हुए आधी रात बीत गई। तब आकाश में डमरू का शब्द सुनाई दिया। इसके बाद प्रत्यक्ष में यह ध्वनि सुनाई दी 'अरे ! यह मृतक अशुद्ध है, इससे सुवर्ण-पुरुष सिद्ध न होगा।'

यों बोलती हुई कोपायमान देवी आकाश से उतरी, और कपाली योगी को केशों से पकड़ कर ऊपर उछाल कर उसने उस दहकते हुए अग्नि-कुण्ड में फेंक दिया।

धैर्यवान होने पर भी मैं उस देवी की क्रूर और भयंकर आकृति को देख क्षुब्ध होगया। देवी ने एक नागपाश से मेरे हाथ बांध दिये और 'ऐसे सुन्दर रूप वाले कुमार को मारना ठीक नहीं' यों कह कर मेरा पैर पकड़ वह देवी मुझे आकाश मार्ग से ले चली। यहां आकर इस बड़ की शाखा में मेरे दोनों पैर बाँध-कर वह आकाश मे चली गई। मैं लटकता रह गया, वह चोर का मुर्दा भी वहां से उड़कर फिर यहां ही आ लटका।

लोगों ने गर्दन घुमा-कर उस चोर के मृतक की

तरफ देखकर कहा—यह मृतक तो अक्षतांग है, फ़िर देवी ने 'यह अशुद्ध है' ऐसा क्यो कहा होगा ? राजाने कुछ देर विचार कर मस्तक हिलाते हुए कहा—हां देवी का कहना ठीक था, जाकर देखो ! उस स्त्री का कटा हुआ नाक इसके मुख में होना चाहिये। और इसी कारण देवी ने इस मृतक को अशुद्ध बतलाया होगा। पास में जाकर देखा तो मालूम हुआ कि सचमुच ही उस मुर्दे के मुँह में उस स्त्री की नासिका का अग्र भाग था।

महाबल खेद पूर्वक बोल उठा—अहा मुझे भी यह बात मालूम नही रही। वह घटना ही मैंने योगी को नहीं सुनाई। व्यर्थ ही बिचारे योगी के प्राण गये और उसका कार्य भी सिद्ध न हुआ। राजा बोला—बेटा ! खेद न कर होनहार होकर ही रहती है। आगे बोलो तुम्हारे हाथों पर बँधा हुआ नागपाश किस तरह छूटा ? महाबल—पिताजी ! उस सर्प की पूँछ इधर-उधर हिलती हुई मेरे मुँह के आगे आगई। उस पूँछ को रोष में आकर मैंने अपने दांतों से ऐसी दबाई कि

जिससे वह सांप धीरे-धीरे मेरे हाथों से ढीला होकर नीचे गिर पड़ा। विषापहारी मन्त्र और औषधि के प्रभाव से मेरे शरीर में उसका जहर न चढ़ा। ऐसे असह्य दुःख में रात्रि के अन्तिम दोनों प्रहर मैंने बड़े कष्ट से बिताए। इस समय आपने आकर मेरा संकट दूर किया। यही मेरी राम कहानी है।

कुमार का पूर्वोक्त चमत्कारी वृत्तान्त सुन आश्चर्य और दु.ख का अनुभव करते हुए नगर के प्रधान नागरिक बोल उठे—कुमार ! धन्य है आपको। आपने अल्प समय में दुःख के भयंकर सागर को पार किया। ऐसे संकट में भी इतनी परोपकार बुद्धि और इतना धैर्य आपके विना और कौन रख सकता है।

महाबल कुमार से सब वृत्तान्त सुनकर राजा व सभी लोग महाबल को साथ में लेकर योगी के मन्त्र-साधन का स्थान देखने के लिए गये। उस अग्नि-कुण्ड में पड़ा हुआ योगी का शरीर सुवर्ण पुरुष के रूप में दिखाई दिया। उसको वहां से उठवाकर राजा ने अपने खजाने में भिजवा दिया। सुवर्ण-पुरुष का यह प्रभाव

होता है कि संध्या समय उसके हाथ पैर काट लेने पर रात्रि में वह फिर वैसा ही अंगोपांग सहित हो जाता है।

अब राजा अपने परिवार सहित नगर में आगया। प्रजाजन भी अपने-अपने स्थान पर चले गये। परिवार सहित राजा के पुनर्जन्म की प्राप्ति की खुशी में नागरिक लोगो ने नगर में दस दिन तक महोत्सव किया। राजा ने भी याचकों को खूब प्रीतिदान किया।



(२३)

मलयकेतु का समागम

बीसवें परिच्छेद में आपने पढ़ा होगा, महाबल राजकुमारी मलयासुन्दरी के अकस्मात् गुम होने के कारण उसके वियोग से दुःखित हो महाराज वीरधवल ने उनकी तलाश में अपने पुत्र मलयकेतु को पृथ्वीस्थान-पुर की तरफ रवाना किया था। अब वह बहन और बहनोई की तलाश करता हुआ पृथ्वीस्थानपुर में आ पहुँचा है। राजसभा में आकर उन दोनों के यहां पहुँच जाने का समाचार सुन वह अत्यन्त प्रसन्न हुआ और सूरपाल राजा तथा महाबल कुमार ने भी उसका बहुत ही स्वागत किया। उसीसे मलयासुन्दरी के माता-पिता के दुःखित होने का समाचार मालूम हुआ। मलयकेतु का स्वागत करने मे ही महाबल कुमार को आज राज-सभा में इतनी देर हो गई थी।

राजा के साथ बात-चीत किये बाद मलयासुन्दरी ने अपने भाई मलयकेतु को रनवास में बुलवा लिया, और उससे बड़े प्रेम पूर्वक मिलकर महाराज वीरधवल तथा अपनी माता रानी चंपकमाला आदि का सुख समाचार पूछा। मलयकेतु ने कहा—बहन! तुम लोगों के अकस्मात् चले आने से वे महान् दु.ख का अनुभव कर रहे हैं।

महाबल—दैविक प्रयोग से ही हमारा आकस्मिक आगमन हुआ था। इससे मुझे इस बात का दुःख है कि मैं चलते समय उनकी आज्ञा प्राप्त न कर सका। इत्यादि कथन पूर्वक उसने अपनी तमाम घटना कह सुनाई।

मलयकेतु—अहो! इतने थोड़े समय में आप लोगों ने बड़े भारी दुःख का अनुभव किया। यह कह कर उसने अपनी समवेदना प्रकट की; इसके पश्चात् परस्पर प्रेम भरी वार्तालाप करने में उन्होंने अपनी भूख प्यास को भी भुला दिया।

कुछ समय तक आनन्द से वहां रह कर एक दिन

मलयकेतु ने महाराज सूरपाल से प्रार्थना की कि अब आप मुझे घर जाने की आज्ञा दें, जिससे कि मैं जमाई और पुत्री के अमंगल की चिन्ता से महान् दुःख का अनुभव करते हुए माता-पिता को जल्दी जा कर सांत्वना दे सकूँ। इनके सुख समाचार की बधाई दे कर उनके दिल को आनन्दित करूँ !

महाराज सूरपाल—कुमार ! तुम्हारे विनयादि सद्गुणो के कारण तुम्हें विदा करने के लिए मेरा मन नही मानता तथापि तुम्हारे बतलाये हुए कारण से विवश होकर मैं तुम्हें इसी समय चन्द्रावती जाने की आज्ञा देता हूं। तुम अपने पिता से कहना, हमारा--उनका बहुत समय से प्रेम-सम्बन्ध चला आ रहा है। अब इस रिश्ते के कारण वह और भी दृढ़ता पूर्वक वृद्धि को प्राप्त हो गया।

मलयकेतु बोला—महाराज ! जरूर कहूँगा और ऐसा ही होगा।

इस प्रकार राजा की आज्ञा ले मलयकेतु ने अपनी वहिन और बहनोई से जाने की आज्ञा मांगी।

महाबल बोला—मेरी तरफ से मेरे सासूजी और श्वसुरजी प्रणाम अर्ज करके कहना कि आपकी आज्ञा लिये बिना आपकी कन्या-रत्न को लेकर चले जाने की धृष्टता करके जो महान् दुःख आपको महाबल ने पहुँचाया है; उस अपराध की वह आपसे बारम्बार क्षमा चाहता है और आपके इस दुःख का किसी स्वार्थ वश नही किंतु देववशात् पराधीनता से ही मैं हेतु बना हूं।'

मलयासुन्दरी— बड़े भय्या ! देवाधीनता के कारण ही हमारा यहां अकस्मात् आना हुआ है। यह बात माता-पिता से अवश्य कहना। अब वे मेरे लिए किसी प्रकार की चिन्ता न करे। मैं यहां पर सब तरह से महान् सुख में हूँ। मेरे निमित्त से पैदा हुए माता-पिता के दुःख के लिए मेरी ओर से तुम क्षमा-याचना करना और उनके चरण छू कर मेरा विनय-सहित प्रणाम कहना।

कुमार मलयकेतु ने उन तमाम सन्देशों को स्नेह-पूर्वक स्वीकार कर बहन-बहनोई के वियोग से उत्पन्न

हुए दुःख को अश्रुधारा से शान्त कर चन्द्रावती की ओर प्रस्थान कर दिया। थोड़े ही दिनों में चन्द्रावती नगरी में आ कर उसने बहिन और बहनोई के सुख-समाचार की बात अपने माता-पिता को सुना कर उन्हें बधाई दी। और शोक चिन्ता मिटा कर उन सबको आनन्दित किया।



(२४)

जंगल में रोती हुई स्त्री कौन थी ?

सांसारिक आनन्द से सुख शांति प्राप्त किये हुए दम्पती एक दिन महल की खिड़की में बैठे हुए पुण्य की प्रबलता, कर्मों की लीला एवं पाप की विषमता के बारे में परस्पर वार्त्तालाप कर रहे थे। उस समय महाबल कुमार ने अपने महल के सामने से आती हुई एक स्त्री को देखा जिसका नाक कटा हुआ था। उसे देख कर महाबल ने मलयासुन्दरी से कहा— प्रिये ! सामने आ रही इस नकटी स्त्री को देखो जिसका रुदन सुन कर उस दिन अँधेरी रात में दया से प्रेरित हो मैं तुम्हें बगीचे में अकेली छोड़ कर उसे संकट-मुक्त करने

गया था; वही यह स्त्री है !

मलयासुन्दरी ने उसकी तरफ गोर से देखा और आश्चर्य के साथ उसने उस स्त्री को पहिचान लिया। अतः वह बोल उठी—स्वामिन् ! अरे, यह तो वही रानी कनकवती है जिसे हमने उस दिन सन्दूक में बंद कर गोला नदी में बहा दिया था। यह यहां पर कहां से आगई होगी ? यह आपके पास कुछ गुप्त बात कहने के लिए आती हो ऐसा मालूम होता हे। यदि इसने मुझे पहिचान लिया तो लज्जा के कारण यह कुछ भी न कहने पायगी। इसलिए यदि आपकी आज्ञा हो तो मैं परदे में जा बैठूं। महाबल ने उसको वैसा ही करने को कह दिया।

द्वारपाल से महाबल की आज्ञा मँगवा कर वह स्त्री महाबल के पास आई और नमस्कार करके एक ओर खड़ी हो गई। महाबल ने भी उचित सन्मान-देकर उसे बैठ जाने का संकेत किया।

उस स्त्री के बैठ जाने बाद महाबल बोला—भद्रे तुम कौन हो ? तुम्हारा नाम क्या है तथा कहांसे आई

हो ? क्या तुम अपना परिचय मुझे दे सकती हो ?

कुछ विश्वास पाकर वह छिन्न-नासिका बोली—राजकुमार ! मैं विपदा की मारी तुम्हें अपना चरित्र क्या सुनाऊँ ? खैर, फिरभी सुनाती हूँ। सुनो, मैं चन्द्रावती नरेश महाराजा वीरधवल की कनकवती नामा रानी हूं। एक दिन निष्कारण ही राजा ने मुझ पर कोप किया, मुझे भी उस बात से बड़ा क्रोध आया और उसी क्रोध में मैं तमाम वस्तुओं और अपने तमाम सुख को ठुकरा कर निकल आई। रास्ते में मुझे एक परदेशी युवक मिला, उसने मुझे गोला नदी पर मिलने के लिये संकेत किया, मैं भी रात्रि के समय उसके किये हुए संकेत स्थान पर उससे जा मिली। उस धूर्त ने मुझ से कहा—यहां पर चोर फिरते हैं इसलिये कुछ देर मौन धारण कर खड़ी रह और जो तेरे पास कुछ माल हो वह रक्षण के लिए मुझे दे दे।

मैंने विश्वास करके अपने पास की तमाम चीजें उसको दे दी। फिर उसने मुझे वहां पर पड़ी हुई एक सन्दूक में कुछ देर छुप जाने के लिये कहा। मेरी दी

हुई उन वस्तुओं में से एक हार और एक कीमती कंचुक निकाल कर उसने बाकी के वस्त्रादि उस सन्दूक में डाल दिये। चोरों के डर से और उसके कहने से जब मैं उस सन्दूक में बैठ गई तब उस पापी ने उस सन्दूक को ताला लगा दिया। फिर संकेत किये हुए एक दूसरे युवक को बुला कर वह सन्दूक उन्होंने गोला नदी के प्रवाह में बहा दी।

महाबल—भद्रे ! क्या उन्होंने वह संदूक जान बूझ कर नदी में बहा दिया था ? क्या तुम उन्हें पहचानती हो ? उन्हें वैसा करने का कारण क्या तुम्हें मालूम है ?

कनक—मैं उन निष्कारण अपने दुश्मनों को बिल्कुल नही पहिचानती। मैंने उनका कोई अपराध नही किया था। तथापि उन्होंने मेरे साथ ऐसा दुर्व्यवहार क्यों किया यह मैं नही जानती !

महाबल— बिना मतलब उन्होने तुम्हारे साथ बड़ा असभ्य आचरण किया ! खैर, फिर वह सन्दूक कहां गया ?

कनकवती—वह सन्दूक नदी के प्रवाह में बहती-बहती प्रातःकाल होते-होते यहां धनञ्जय यक्ष के मन्दिर के पास आ निकली जहां से लोहखुर नामक कुख्यात चोर ने उस सन्दूक को बाहर निकाला और ताला तोड़ कर उस सदूक में से मुझे बाहर निकाली। मुझे नवजीवन देने वाले उस चोर के साथ मै अलम्ब गिरि के विषम प्रदेश में बनाये हुए उसके मकान पर गई। आपस में हमारा गाढ़ प्रेम हो गया। परस्पर अनन्य विश्वास हो जाने से नगर से चुराया हुआ सब धन उसने सन्मान और प्रेम से मुझे बतला दिया। मैंने भी अपना स्थान आदि सबकुछ उसे बता दिया। दोपहर तक मेरे पास रह कर किसी कार्यवश वह नगर में आया।

राजपुरुषों ने उसे पहचान कर पकड़ लिया और राजा के आधीन कर दिया। राजा ने उसे वटवृक्ष पर लटकवा कर मरवा दिया। उस समय उसकी राह देखती हुई मैं पहाड़ की चोटी पर खड़ी थी। मेरा मिलाप होते ही थोड़े ही समय में उसकी यह दुर्दशा

हुई देख मुझे बहुत दुःख हुआ। रात्रि के समय मैं उसके पास जाकर शोकसन्तप्त हृदय से रुदन कर रही थी उस समय आपने वहां आकर मेरे दुःख का कारण पूछा। इसके बाद का वृत्तान्त आप जानते ही है।

राजकुमार! यदि आप मेरे साथ चलें तो मैं वह स्थान आपको दिखा सकती हूँ जहां लोहखुर का बहुत धन भरा है। उसे ग्रहण कर जिसका हो उसे वापिस लौटा दें। मैं अकेली हूं और मुझे इतने धन की कोई आवश्यकता नहीं! तथा गुप्त वैभव भोगते हुए राज-पुरुषों को पता लगने पर मेरी भी चोर जैसी दुर्दशा न हो इसलिए मैं ऐसे द्रव्य को नहीं चाहती।

महाबल उस स्त्री को महाराज सूरपाल के पास ले गया और आवश्यकतानुसार कुमार ने महाराज को उसका परिचय दिया। राजा उस स्त्री को आगेवान कर कितनेक राजपुरुषों को साथ में लेकर उस पहाड़ की गुफा में गया। वहां उस स्त्री ने बड़ा भारी दबा हुआ खजाना बतलाया। राजा ने वह तमाम माल बाहर निकलवाया और प्रजा को बुला कर जिसकी

जो वस्तु चुराई गई थी उनमें से वह वस्तु वापस दे दी। जिस धन का कोई मालिक न था उसे साथ ले कर राजा वापिस शहर में आ गया। उसकी योग्यता के अनुसार उस धन में से कितना ही धन राजा ने उस स्त्री को दे दिया।

उसे ले कर कुमार के साथ वह फिर महल में आई। वहां पर उसने गले मे लक्ष्मीपुञ्ज हार धारण किये और आनन्दरस में निमग्न हुई मलयासुन्दरी को बैठे हुए देखा। मलयासुन्दरी को देखते ही उसके दिल को भयंकर चोट पहुँची हो इस तरह वह सहसा स्तब्ध रह गई।

आश्चर्यचकित हो वह विचारने लगी—अरे! यह दुष्ट लड़की किस तरह जीवित रही? अन्धकूप में से कैसे बाहर निकली और इस कुमार ने कब और किस प्रकार इसका पाणिग्रहण किया? ये तमाम बातें जानने की उसको तीव्र जिज्ञासा पैदा हुई। परन्तु कुछ भी पूछने का साहस न हुआ। उसने सोचा यदि मैं इससे यह पूछूँगी तो यह मेरा तमाम चरित्र प्रकट

कर देगी और फिर मेरा यहां रहना भी कठिन हो जायगा ! यह लक्ष्मीपुञ्ज हार भी उस मेरे शत्रु ने इसे लाकर दिया मालूम होता है। या क्या पता इन दोनों ने ही मिल कर नदी किनारे मुझ से ले लिया हो ! इससे तो ये ही मेरे शत्रु सिद्ध होते हैं।

इस प्रकार वह विचार कर ही रही थी उतने में मलयासुन्दरी बोली— माताजी ! आज यह अनभ्रा-वृष्टि कैसे हुई ? आप यहां अकेली कैसे आई ? और आपके नाक की यह दुर्दशा कैसे और कहां हुई ?

महाबल— प्रिये ! यह बात तुम इनसे मत पूछो इसकी तमाम बाते मैं जानता हूँ और समय पर तुम्हे सब बता दूँगा। अभी तुम अंदर जाओ। महाबल की आज्ञा मिलते ही मलयासुन्दरी अदर कमरे में चली गई।

महाबल—'कनवकती ! इस महल के बाहर पास मे ही एक राजकीय मकान है तुम वहांपर जा रहो।'

ऊपर से मीठी परन्तु दुष्ट हृदय वाली कनवकती कुमार द्वारा दिखाये हुए स्थान पर जाकर रहने लगी,

और धीरे-धीरे मलयासुन्दरी के पास आने-जाने लगी।

जब मनुष्य को उसका भाग्य चक्कर में डालता है तब उसकी तीक्ष्ण बुद्धि भी काम नही करती। इसी कारण एक महान् अपराधिनी को भी महाबलकुमार ने रहने के लिए स्थान दे दिया। इसके परिणाम में उसे कैसा भयकर दुःखदायी फल भोगना पड़ेगा इसकी उसे स्वप्न में भी खबर न थी। या यों कहना चाहिये कि होनहार के सामने मनुष्य की तमाम चतुराई बेकार हो जाती है।

कनवकती की बोलचाल, हँसना तथा वार्त्तालाप आदि इतना चित्ताकर्षक था कि तीक्ष्ण बुद्धि वाला कुमार भी उसकी धूर्तता को नही जान पाया। धीरे-धीरे राजमहल में उसका आना-जाना बढ़ गया। परन्तु जिस प्रकार बिल्ली नित्य चूहे के ही ध्यान में रहती है वैसे ही निष्कारण दुश्मन ऐसी वह मलया सुन्दरी को मारने अथवा वैसे ही घोर संकट में डालने के लिए निरन्तर उसके छिद्र देखने लगी। यद्यपि वे दम्पती इस समय अद्वितीय संसारसुख का अनुभव कर

रहे थे परन्तु उन्होंने अपने ही हाथों से अपने आंगन में कटुफल देने वाला विषवृक्ष लगा लिया।

पुण्य रूप वृक्ष के सुखरूप मधुर फल को भोगते हुए मलयासुन्दरीने गर्भ धारण किया। महाबलकुमार ने उसके तमाम मनोरथ पूर्ण किये। गर्भ के साथ ही मलयासुन्दरी का लावण्य दिनप्रतिदिन बढ़ने लगा। सुख से समय बिताते हुए गर्भ प्रसूति का समय भी अब नजदीक ही आने लगा।



(२५)

दुर्जन की दुर्जनता सती पर संकट

एक दिन महाराजा सूरपाल महाबल से बोले बेटा महाबल ! हमारे राज्य की पूर्व सरहद पर रहनेवाला क्रूर नामक पल्लीपति हमारे देश में घुसकर प्रजा को लूट ले जाता है। उसके पास कुछ सेना बल भी हो गया है। मैंने उस पर आक्रमण करने के लिए दो बार सेनापति को भेजा, परन्तु वह पराजित न हो सका उल्टा हमें ही बहुत कुछ नुकसान उठाना पड़ा। तुम्हारे बिना उसके बढ़ते हुए गर्व को और कोई नही उतार सकता। सीमा के समीप किसी की भी ताकत को बढ़ने देना हमारे लिए बड़ा खतरनाक है। इसलिये मेरी

आज्ञा है कि इस समय प्रबल सेना को साथ लेकर तुम खुद ही उस पर आक्रमण करदो और उसे परास्त कर अपने सीमाप्रान्त को सदा के लिए निरुपद्रव करदो। यह सुनकर विनय पूर्वक हाथ जोड़कर राजकुमार बोला—पिताजी ! आपकी आज्ञा शिरोधार्य है। आप आज ही सेनापति को सेना तय्यार करने की आज्ञा फरमावें। आपके आशीर्वाद से मैं आपकी आज्ञानुसार आक्रमण कर उसे आपका सेवक बनाकर ही वापिस लौटूंगा।

राजाज्ञा से सेना में पल्लीपति पर चढाई करने की तैयारियाँ होने लगी। राजकुमार स्वयं सेनापति बनकर पल्लीपति पर आक्रमण करेंगे, यह जान कर सैनिकों में उत्साह का पार न रहा। वे दूने उत्साह से युद्ध की तैयारी करने लगे।

कुमार महाबल पिता को नमस्कार कर अपने महल में गया। पिता की आज्ञा सुनाकर उसने युद्ध में जाने के लिए मलयासुन्दरी से विदा मांगी। वह बोली-प्राणनाथ ! आप खुशी से युद्ध में पधारें, परन्तु मैं

आपके साथ ही चलूँगी। आप मुझे यहाँ रहने के लिए विवश न कीजिये। आपके परोक्ष में ही मुझ पर विपत्ति के पहाड़ टूट पड़ते है। इसलिये आप इस दासी को दूर न करे।

महाबल—प्यारी! युद्ध-भूमि में तुम्हे साथ ले जाने का समय नही है। तुम सगर्भा हो, और पूरे दिन होने आए है। थोडे ही दिन बाद भावी राज्यकर्त्ता का जन्म होने वाला है। ऐसी परिस्थिति में मेरे साथ चलना तुम्हारे लिए सर्वथा अनुचित है। प्रसूति का समय आ रहा है। इस वक्त पहाडी विषमता और युद्ध का प्रसंग, ये सब तुम्हारे कोमल शरीर के लिए बिल्कुल प्रतिकूल हैं। तुम धैर्य धारण कर यहाँ ही रहो। यहां तुम्हें सब तरह से आराम रहेगा। जहांतक होगा शत्रु को परास्त कर मैं शीघ्र ही वापस आजाऊँगा। कभी विषम प्रसग आजाने पर मैं तुम्हें पुरुष रूप धारण करने की ये गुटिकाएँ दे जाता हूं सो आम के रस में घिसकर तिलक करने से स्त्री का पुरुष रूप बन जाता है। इन गुटिकाओं को हर समय सँभाल

कर अपने पास रखना। प्यारी ! मैं स्वयं तुम्हारा वियोग सहने के लिये असमर्थ हूं परन्तु क्या किया जाय ? कुलीन पुत्रों का पिता की आज्ञा का पालन करना परम कर्त्तव्य होता है अतः प्रिये ! तुम मुझे प्रसन्न होकर समर के लिये विदा करो।

पति की आज्ञा से विवश हो अपने मन को मसोसती हुई मलयासुन्दरी मन्द स्वर से बोली—स्वामिन् ! इच्छा न होने पर भी आपकी आज्ञा को शिरोधार्य कर मैं यहां पर ही रहती हूँ। आप जल्दी ही पधारे, इतना कहते हुए उसका कण्ठ भर आया, वह आगे कुछ न बोल सकी। आंखो से गालों पर मोती से आंसू ढलक पड़े। यह देख कुमार ने उसे हृदय से लगा लिया और प्रेम से उसका मुख चूम लिया। प्रेमी हृदय वाले राजकुमार को अपनी प्राणप्यारी से बिछड़ने का बहुत दुःख हुआ। उसकी आंखें भर आई तथापि वह कठिन-दिल बन कर रूमाल से आंखें पोंछता हुआ महल से बाहर निकल गया। तमाम सेना तय्यार खड़ी थी। महाबल अपने घोड़े पर सवार हो

सेना के साथ पल्लीपति पर चढ़ाई करने के लिये सीमा प्रदेश की ओर चल पड़ा।

कनकवती अपने मकान में बैठी हुई अपने मलिन हृदय के अनुसार विचार तरंगों में गोते खा रही है। मलयासुन्दरी को किस प्रकार कष्ट में डालूँ? कोई उपाय नही सूझता कि जिससे उसको संकट में डाल कर अपने चित्त को शान्त करूँ। न जाने क्यों उसे देख कर मेरे दिल में डाह पैदा होता है? मैं अवश्य मौका पा कर उसे संकट में डाल अपने कलेजे को ठण्डा करूँगी।

इन्ही विचारो की उधेड़बुन में उसे महाबल के युद्ध में जाने का समाचार मिला। अब मलयासुन्दरी को अकेली देख उसे बड़ी प्रसन्नता हुई। उसने सोचा महाबल के यहां रहते हुए मेरा कोई भी उपाय काम न आ सकता था। यह ठीक हुआ मलयासुन्दरी अकेली रह गई। यदि महाबल की अनुपस्थिति में भी मैं किसी उपाय से इससे बदला न ले सकी तो फ़िर मेरे लिए कोई भी ऐसा अच्छा मौका नही आने का।

यह सोच वह शीघ्र ही उठ कर मलयासुन्दरी के महल में आई। इस समय मलया अपने महलमें उदास हो कर बैठी थी। पति वियोग के दुःख से उसके नेत्रों से आँसुओं की बूँदें गिर रही थी। वह मुख पर हाथ रख कर विचार दशा में निमग्न हो रही थी। कनकवती के आने की आहट सुन उसने ऊँची गर्दन की अपनी सोतेली माता की आई देख उसका कुछ आदर किया। अवसर देख कर कनकवती ने उसकी उदासीनता को दूर करने के लिये कोई और विषय छेड़ा; उसकी बातों के प्रसंग से मलयासुन्दरी का सारा दिन आराम से व्यतीत हो गया।

पतिवियोग के दुःख में उस नागिन की मीठी बातें सुन सरल-दिल मलयासुन्दरी बोली—माताजी! आप रात को भी यहीं रह जाया करो जिससे दिन के समान तुम्हारे रहने से मेरी रात भी आराम से बीत जाया करे।

कनकवती की इच्छानुकूल यह बात होने से उसने प्रसन्नतापूर्वक उसकी बात स्वीकार कर ली। रातको

भी कनकवती ने दिन के समान ही अनेक प्रकार की मीठी बातों से मलयासुन्दरी का मन बहलाये रखा।

प्रातःकाल होते ही कुछ सोच विचार कर कनकवती ने मलया से कहा— बेटी ! तुझे दुःखी करने के लिए रात्रि में यहां पर एक राक्षसी फिरा करती है। रात को जब तू सो गई थी उस समय मैंने प्रत्यक्ष उसको देखा था। जागृत रहने के कारण मैंने तुझ पर कोई उपद्रव नहीं होने दिया। यदि तेरी मर्जी हो तो मैं भी उस राक्षसी के साथ उसके जैसा ही वेष धारण कर उसे ऐसी शिक्षा दूँ कि जिससे वह फिर कभी इधर देख भी नही सके। क्योकि मैं भूत प्रेतों को निग्रह करने के मंत्र तन्त्रादिक भी जानती हूं क्या तुम्हें मालूम नही कि राक्षसी और चुड़ेलो को निवारण करने के अनेक प्रकार के तांत्रिक प्रयोग होते है।

विचारशील होने पर भी भाग्य के चक्कर में पड़कर मलयासुन्दरी ने उस दुष्ट की बात मंजूर करली।

दैव-वशात् इस समय नगर में महामारी का जोर बढ़ रहा था। कोई दिन ऐसा न जाता था, कि जिस

दिन दस पन्द्रह मनुष्य मृत्यु के ग्रास न बनते हों।

मलयासुन्दरी को पूर्वोक्त प्रकार से समझा कर अपने घर जाने का बहाना ले कनकवती सीधी महाराज सूरपाल के पास पहुँची। वहां जाकर उसने राजा से एकान्त में बात करने की प्रार्थना की। प्रार्थना मंजूर होने पर उसने महाराज सूरपाल से कहा—महाराज! यदि आपकी मुझ पर पूर्ण कृपा हो तो मैं आज आपके हित की एक बात करना चाहती हूँ। राजा बोला—भद्रे! मैं तुझे अभय वचन देता हूँ; चाहे जैसी गुप्त बात हो तू निःशंक होकर कह। यदि उससे तुझे कुछ भय उत्पन्न होने की संभावना हो तो मैं तेरी पूर्ण रक्षा करूंगा।

कनकवती—महाराज! आपको मालूम ही होगा आपके शहर में कई दिनों से महामारी चल रही है। यह उपद्रव किसी राक्षसी का किया हुआ है। राक्षसी के जैसी चेष्टाये करने वालों से भी रोग की उत्पति या उसकी वृद्धि हो सकती है। ऐसा करनेवाली को राक्षसी कहने में किसी प्रकार का दोष नहीं है इस

प्रकार का जन संहार करनेवाली राक्षसी यदि आपके ही राजकुल में हो तो क्या आप उसे शिक्षा देकर अपनी प्रजा को नहीं बचा सकते ?

यह सुनकर राजा बोला—भद्रे ! मेरे राजकुल में ऐसी कौन दुष्टा है ? सच बोल ! मैं उसे पूर्ण शिक्षा देकर अपनी प्रजा की रक्षा करूँगा।

कनकवती बोली—महाराज ! सच पूछो तो गुलाब में कांटे के समान आपकी प्रजा का संहार करने वाली आपकी पुत्रवधू मलयासुन्दरी ही है। यदि आप को मेरे इस वचन पर विश्वास न हो रात्रि के समय आप दूर रहकर सब चेष्टाएँ प्रत्यक्ष देखले, फिर निश्चय करे। वह रात्रि के समय राक्षसी का रूप धारण कर अपने गृहांगण में भ्रमण करती हैं, इसी कारण से शहर में महामारी विशेष फैलती है। ये चेष्टाएँ देखकर यदि आप रात्रि में उसी समय उसे पकड़ना चाहेंगे तो वह आपको भयंकर उपद्रव कर सकती है। इसलिये सुबह होने पर आप उसे सुभटों द्वारा पकड़वा कर इच्छित शिक्षा करें। इस प्रकार कपट प्रपंच

की बातें कर कनकवती मौन होकर खड़ी रही ।

राजा पहले से ही शहर में फैल रही महामारी का कारण जानने के लिए उत्सुक था । अब इस कनकवती की बातें सुन कर उसे बड़ा आश्चर्य हुआ । वह इस औरत के कपटपूर्ण वचनों से प्रेरित हो विचारने लगा । अहो ! यह कैसी बात ? मेरे निर्मल कुल में ऐसा कलंक ? क्या सचमुच ही मेरी पुत्रवधू राक्षसी है ? क्या उसीने नगर में यह महामारी फैला रखी है ? यह बात मेरा मन मंजूर नहीं करता । परन्तु इस औरत का असत्य बोलने में क्या स्वार्थ होगा ? खैर, आज रात्रि में देखने से इस बात का निर्णय हो जायगा ।

यह बात विचार कर चिन्ताग्रस्त हो राजा ने कनकवती से कहा—भद्रे ! यह बात तुम किसी अन्य के सामने नही कहना । ऐसी बात जनता में प्रकट हो जाने से मेरे निर्मल कुल को कलंक लगने की संभावना है । इस बात की सचाई का निर्णय आज की रात में हो जायगा फिर जो योग्य होगा सो किया

जायगा।

कनकवती बोली—महाराज! मैं इतनी मूर्ख नहीं हूं, इसीलिए तो मैंने एकान्त में यह प्रार्थना की है।

अच्छा अब तुम जाओ, यों कह राजा ने कनकवती को विदा किया।

राजमहल से विदा हो कनकवती सीधी अपने मकान पर आई और वहां आ कर राक्षसी का रूप धारण करने के योग्य वह तमाम सामग्री को साथ ले मलयासुन्दरी के पास आ पहुची।

रात होने पर उसने मलयासुन्दरी से कहा—बेटी आज मैं उस राक्षसी का विग्रह धारण करूँगी। जब तक मैं मकान में वापिस न आऊँ तब तक तू बाहर आंगन में मत आना। यदि तू उस समय कमरे से बाहर निकली तो भयंकर उपद्रव खड़ा होना संभव है।

मलयासुन्दरी को इस प्रकार की शिक्षा दे वह बाहर आई और निर्वस्त्र होकर उसने अनेक प्रकार के रंगबिरंगे चित्रों द्वारा राक्षसी के समान अपने शरीर

को चित्रित किया . साक्षात् राक्षसी की भांति रूप बना कर उसने अपने मुंह में लम्बे-लम्बे दांत लगा लिये। एक हाथ में खप्पर और दूसरे हाथ में लम्बा छुरा लेकर जिस तरह राजा को समझाया था उसी प्रकार की चेष्टाएं करना शुरू कर दी।

इस समय महाराज सूरपाल कितनेक सुभटों को साथ ले थोड़ी दूर जानने के लिये आ खड़े रहे। उनने दूर से ही मलयासुन्दरी के गृहांगन में राक्षसी के सारे आचरण अपनी आंखों से देखे। वह मन ही मन सोचने लगा; अहो ! कनकवती की कही हुई तमाम बातें सत्य ही साबित हुई। इसी स्त्री द्वारा मेरा उज्ज्वल वंश कलंकित हुआ। अब मुझे इस विषय में विलम्ब या सोचविचार नहीं करना चाहिये। इसके निवारण का जल्दी ही उपाय करना हितकर है। यह बात जनता में प्रकट हो जाने पर मेरे कुल की भारी बदनामी होगी और शीघ्र ही उपाय न करनें से प्रजा का अधिक संहार होगा। इस कुलकलंकिनी राक्षसी को इसी समय दण्ड देना चाहिये। मेरे साथ बहुत-से

सुभट है, वह मुझे क्या उपद्रव कर सकती है ? अब रात्रि समय में ही शिक्षा देने से जनता में भी यह बात प्रकट न होगी।

इस प्रकार सोच कर क्रोध से विचारशून्य हो राजा ने अपने विश्वासपात्र सुभटों को आज्ञा दी अरे-सुभटो ! तुम इसी वक्त जाकर इस दुष्टा को पकड़ लो। एक रथ में बैठा कर इसे घोर अटवी में लेजा-कर किसी को मालूम न हो इस तरह मार डालो। राजा का आदेश होते ही हथियारबन्द अनेक सुभट उसे पकड़ने के लिए दौड़ पड़े।

उन राजपुरुषों को आते हुए देख कर वह दुष्टा भयभ्रांत हो मलयासुन्दरी के पास आकर कम्पित स्वर में बोली बेटी ! कितने एक राज-सुभट शस्त्र हाथ में लिये मुझे मारने को आरहे है। मालूम होता है मैं राजा की आज्ञा बिना रात के समय तेरे पास रहती हूं। इसी कारण राजा मुझ पर क्रोधायमान हुए है सम्भव है राजपुरुष मुझे अवश्य ही मार डालेंगे इस-लिये तू मुझे ऐसी जगह छिपा, जहां पर ढूँढने से भी

उन्हें मेरा पता न लगे। दया प्रेरणा से उसके कपट को न समझने वाली मलयासुन्दरी ने वैसे ही वेष में कनकवती को एक सन्दूक में छिपा कर बाहर से ताला लगा दिया। बस इतने ही में राजा के भेजे हुए शस्त्र-धारी सुभट वहाँ पर आ पहुँचे।

इधर राजपुरुषो ने मलयासुन्दरी के महल में प्रवेश किया और उसका स्वाभाविक रूप देख कर वे आपस में बोलने लगे—अरे! हमारे भय से इसने कितनी जल्दी अपने राक्षसी रूप को त्याग कर कैसा सुन्दर रूप बना लिया!

दूसरा बोला—कुछ भी हो महाराज की आज्ञा होने से हम इसे छोड़ नही सकते।

तिरस्कार के शब्दों से वे मलयासुन्दरी को बोले अरे पापिनी! अभी तक तू कितने मनुष्यों का संहार करेगी? अरे भाई! देखते क्या हो? इसे पकड़ कर बांध लो! यों कह कर राजपुरुषों ने मलयासुन्दरी को पकड़ कर मजबूत बन्धनों से बांध लिया और उसे महल के बाहर ले आये। राजा ने पहले से ही द्वार

रथ तय्यार रखाया था। मलयासुन्दरी को उसमें बैठाकर शीघ्रता के साथ उस रथ को भयंकर अटवी की तरफ लेगये।

इस आकस्मिक घटना से मलया एक-दम स्तब्ध हो गई। उसने सोचा—मैंने क्या अपराध किया है! कि जिससे ये राज-पुरुष मेरा इतना तिरस्कार कर रहे हे? हाय मालूम होता है, किसी कारण ये मुझे मारने के लिए या कही भयानक जंगल में छोड़ आने के लिए ले जारहे है! हाय कर्म की कैसी विचित्र गति है!! मेरे सामने कोई नजर भर के भी नही देख सकता था। परन्तु आज एक पति-देव के अभाव में मुझ पर कितना भयंकर जुल्म किया जारहा है न मालूम इसका क्या कारण होगा? मैंने राजा का ऐसा क्या अपराध किया होगा? या मेरा पुण्य पूर्ण होने पर किसी पूर्व जन्म के अशुभ कर्म का फिर से उदय हुआ है। मनुष्य को मालूम नही होता, क्लिष्ट कर्मों के विपाक का किस वक्त उदय होगा? हे हृदय! अब तू इन दुःखों को सहने के लिए फिर से वज्र के समान

कठोर वन जा। मन को धीरज देकर वह महाबल के बतलाए हुए श्लोक का स्मरण करने लगी।

सती मलयासुन्दरी सहित रथ को लेकर राज-पुरुष उस भयानक अटवी में जो कि मनुष्यों से रहित और हिंसक पशुओं से व्याप्त थी, वहां पर आ पहुँचे। उसे रथ से नीचे उतारा गया। उसका सुन्दर राज-तेज और करुणा पैदा करने वाली सौम्य मुख-मुद्रा तथा उसके कमल के समान नेत्रों से मोतियों के जैसे टपकते हुए अश्रुबिन्दु देख कर उनमें से एक क्षत्रिय राजपुरुष का हृदय द्रवित हो उठा। वह अन्य सुभटों से बोला— भाइयो ! किसी भी कारण से राजा ने इस भद्राकृति वाली स्त्री को राक्षसी समझ कर हमें इसके वध करने की आज्ञा दी है परन्तु इस स्त्री की करुणाजनक मुखाकृति देखकर मुझे यह सर्वथा निर्दोष जान पड़ती है अतः ऐसी निर्दोष अबला पर शस्त्र चलाना वीरपुरुषों के लिये बिल्कुल अनुचित है। ऐसी स्त्री पर हाथ उठाना यह महान् निर्दयतावाला कर्म चाण्डालों का है। पहले जन्म में किये हुए अशुभ

कर्मों के कारण हम यहां दूसरे के सेवक बने है, फ़िर निर्दोष स्त्री की हत्या करके न जाने कौनसी नीच गति प्राप्त करेंगे। इसलिए हमें चाहिये कि इस औरत की हत्या अपने ऊपर न लेकर हिंसक पशुओं से परि-पूर्ण इस अटवी में इसको जिन्दा छोड़ दे जिससे किसी हिंसक प्राणी का शिकार बन कर यह स्वयं अपने प्रा-णों को त्याग देगी और हम इस पाप से बच जायेंगे। वे परस्पर ऐसा विचार कर मलयासुन्दरी को जीवित ही उस निर्जन जंगल में छोड़ कर वापिस लौट आये। उन्होने राजा से आकर कह दिया, 'महाराज ! आपकी आज्ञानुसार हम उस स्त्री को जंगल में मार आये हैं।

यह सुन राजा बहुत खुश हुआ और विचारनेलगा कि उस राक्षसी के मर जाने से अब शहर की सारी बीमारी स्वयं ही शान्त हो जायगी। अब कनकवतीको खुश करने के लिए राजाने नगर में उसकी तलाश करवाई परन्तु उसका कही पर भी पता न लगा। राजकुमार का महल सूना रहने के कारण राजा ने तमाम दरवाजों पर सीलबन्द ताले लगवा दिये।

कनकवती का प्रपंच प्रकट
दुःखी महाबल

महावल की सेना विजय गर्व से आनन्द मनाती लौट रही है। उसके सैनिको को अपनी-अपनी वीरता पर गर्व के साथ पूर्ण विश्वास हो रहा था। यों तो महाबल के सैनिको मे सभी तलवार के धनी, बात पर जान देने वाले, उसके इशारे पर आग में कूद जाने वाले, उसकी आज्ञा पाकर एकबार आकाश के तारों को भी तोड़ कर लाने वाले थे किन्तु युद्ध कुशलता में महाबल सब से बढ़ा हुआ था। वह अन्य वीरों की भांति अक्खड़, मुँहफ़ट और घमडी नही था। और लोग तो अपनी वीरता को खूब बढ़ा चढ़ा कर कहते थे, आत्म-प्रशंसा करते हुए उनकी जबान नही थकती थी। महाबल जो कुछ करता वह शान्ति-

पूर्वक और विचार करके ही करता था। अपनी प्रशंसा करना तो दूर रहा – वह चाहे किसी शेर को ही क्यो न मार आया हो, उसकी चर्चा तक नही करता। उसकी विनयशीलता व नम्रता अपनी सीमा से भी अधिक वढ़ी हुई थी। और लोग तो समर में रात्रि के समय मीठी नीद सोते थे परन्तु महाबल तारे गिन गिन कर रात काटता था क्योंकि वह शरीर से समर भूमि में आया था परन्तु उसका हृदय अपनी प्राण प्यारी मलया के पास ही रह गया था। वह मलया–सुन्दरी को शीघ्र जा मिलने की उत्सुकता से विलम्ब रहित प्रयाण से पृथ्वीस्थानपुर के समीप ही आ पहुँचा रास्ते में उसे कई जगह अपशकुन भी हुए, बांई ओर की आंख भी फड़की, परन्तु विजय की खुशी और प्रिया से मिलने की उत्सुकता में उसने उस ओर कुछ भी ध्यान न दिया। वे सब राजनगर में आ पहुँचे। राजसभा में आ कर महाबल ने पिता के चरणों में नमस्कार करके विजय का समाचार सुनाया।

पल्लीपति को जीतने का समाचार सुन कर राजा

को बड़ा भारी हर्ष हुआ और उसने कुमार की खूब प्रशंसा की। पिताकी आज्ञा ले मलयासुन्दरी से मिलने की उत्कंठा में कुमार अपने महल की तरफ चल पड़ा। परन्तु तुरन्त ही रोक कर महाराज सूरपाल ने उसका हाथ पकड़ एकान्त मे ले जा कर मलयासुन्दरी के राक्षसी होने का तथा उसे दी हुई शिक्षा का सर्व वृत्तान्त कह सुनाया।

पिता के मुख से यह वृत्तान्त सुनते ही दीर्घ निःश्वास के साथ हाथ से हाथ घिसते हुए कुमार के मुख से एकदम चीत्कार शब्द निकल पड़ा। वह रुद्ध कंठ से बोला—हा! हा!! पिताजी! आपने महान् अनर्थ कर डाला। उसके प्राणों के साथ आपने मेरे भी प्राण ले लिये। आपने मुझे और अपनी पुत्रवधू को शत्रु से भी बढ़ कर असह्य दण्ड और अन्याय किया है। मलयासुंदरी राक्षसी थी यह भ्रम आपको कैसे हुआ? पिताजी! आपकी इतनी विचारशून्यता! आपकी दीर्घदृष्टि कहां चली गई? यदि आपको उस में कोई दोष मालूम हुआ भी था तथापि आपको मेरे

आने तक तो धैर्य रखना था ! जिस छिन्न-नासिका वाली स्त्री के कहने से आपने मुझ पर यह अनर्थ ढाया है उस कपट की खान कनकवती को मैं भली-भांति जानता हूं। पिताजी ! आप उस धूर्त स्त्री के वचनों से सचमुच ही ठगा गये। मुझे जल्दी बतलाइये कि वह मेरी निष्कारण दुश्मन नकटी कहां पर है ? मैं उससे तमाम बातें पूछूं तो सही ! कुमार के इस प्रकार के दुःख, शोक और तिरस्कारपूर्ण वचनों से राजा सूरपाल का मुख-मंडल मुरझा गया। उसने नीचे देखते हुए कहा—बेटा ! इस घटना के बाद हम ने उसकी सब जगह तलाश की परन्तु वह नकटी कहीं पर भी देखने में नहीं आई। अगर सच ही यह उस-का प्रपंच होगा तो शायद वह उसी रात को अन्यत्र भाग गई होगी।

महाबल—पिताजी। उस पापिनी के असत्य व-चनो से प्रेरित हो आपने व्यर्थ ही अपने निर्मल कुलमें कलंक लगाया है। इतना ही नही परन्तु आपने अपने वंश का विच्छेद भी किया है।

इस प्रकार बोलता हुआ पत्नी-वियोग से दु:खित राजकुमार महाबल उदासमुख अपने महल की तरफ चल पड़ा। पुत्र की नाराजगी से दुःखित हो राजा भी कुमार के पीछे-पीछे उसके महल में आया और दरवाज़ों पर लगे सील तोड़ कर ताले खोल दिये। एक जगह की ओर दृष्टि जमा कर राजा बोला— देखो बेटा ! इस स्थान पर तुम्हारी प्रिया मलयासुन्दरी को राक्षसी बनी हुई, नग्न नाचती कूदती हुई को मैंने सामने वाले उस मकान से अनेक सुभटों सहित अपनी आँखों से फुँकार करती हुई देखा है; इसलिए उसको प्राणदण्ड देने मे मेरा अपराधही क्या है ? यदि शरीर का कोई अंगोपांग गल जाय, सड़ जाय तो क्या उसे नही कटवा दिया जाता ? कुमार मन ही मन विचारने लगा ठीक है अब अधिक बोलने की कोई कीमत नही। अगर वह जीवित मिल गई तो तमाम बातें मालूम हो जायगी। इत्यादि विचार करते हुए वह अपने मकान में रखी हुई सारी वस्तुएँ उलट - पलट कर देखने लगा।

क्रम से उस सन्दूक का ताला खोलने पर निरी नग्न राक्षसी के रूप में भूख से दुर्बलावस्था में वह छिन्न-नासिका कनकवती सन्दूक में पड़ी दिखाई दी। उसे देखते ही राजा आदि सभी स्तब्ध रह गये। महाबल जोश में आकर बोल उठा—पिताजी! राक्षसी के रूप मे नाच करती हुई आपने उस रात में क्या इसी स्त्री को देखा था ?

यो कह कर कुमार ने उस स्त्री को हाथ पकड़ कर सन्दूक से बाहर खीच कर निकाली। जब निष्ठुरता पूर्वक कुमार ने उस पर लातों का प्रहार करना प्रारम्भ किया तब उसने कांपते हुए अपना तमाम प्रपंच सहज ही प्रकट कर दिया। अब अविचारित किये हुए कार्य का राजा को महान् पश्चात्ताप करना पड़ा। सचमुच ही ऐसे उलझन भरे प्रसगों मे ही बुद्धिमानों की बुद्धिमत्ता, धैर्यवानो की धीरता, विवेकी पुरुषों की विवेकता, दीर्घदर्शिता तथा विचारशीलता का पता लगता है।

राजा के पश्चात्ताप और गुस्से की हद न थी। वह

इस कार्य से लोगों में मुख दिखाने लायक भो नहीं समझता था। इसलिए उस नकटी कनकवती को उस ने तुरन्त ही देशनिकाले की आज्ञा दी। परन्तु इससे क्या महाबलकुमार की दु.खित आत्मा को शान्ति मिल सकती थी। पूरे दिन की गर्भवती और निर्दोष पत्नी के ऐसे अनिष्टपूर्ण भविष्य से कुमार के शोक अथवा दुःख का पार न रहा। उसका हृदय पराधीन वन गया। उसने अपना मन मसोस कर किसीसे बोलने तथा भोजन करने का त्याग कर दिया। उसके नेत्रों से रह-रह कर सावन भादोंकी वर्षा के समान आंसुओं की झड़ी लगी रहने लगी। विशेष क्या कहें? वह अपनी बेकसूर प्रिया के वियोग में फकीर बनकर मरने के लिए तय्यार हो गया। सचमुच ही मोह के उदय में मनुष्यों के अन्तर्नेत्रो पर पर्दा पड़ जाता है। राजकुमार को मृत्यु के लिए उत्सुक देख राजा और रानी भी वैसी ही दुःखद अवस्था का अनुभव करने लगे। इस समय राजकुल में ही नहीं बल्कि सारे नगर में शोक और उदासीनता का साम्राज्य छाया हुआ था।

दीर्घ निश्वास के सिवा किसी के मुँह से और कोई शब्द न निकलता था

दैववशात् इस समय कही से फ़िरता हुआ वहां पर एक निमितज्ञ पुरुष आ पहुँचा। मालूम होने से उसे राज-सभा में बुलाया गया। उसके हाथ में एक अष्टांग निमित्त का पुस्तक था। प्रधानमत्री ने उसका आदर सत्कार कर उसे उचित आसन पर बिठाया।

प्रधान—निमितज्ञ महाशय ! महाबल कुमार की पत्नी मलयासुन्दरी निर्दोष होने पर भी एक स्त्री के प्रपच से निकाल दी गई है। इसी कारण आज हम उसके वियोग से दुःखित हो शोक सागर में डूब रहे है। इसका परिणाम हमें बहुत भयङ्कर मालूम होता है इसलिये आपके निमित्त बल से आप यह बतला सकते है कि महाबल कुमार की पत्नी किसी जगह जीवित है या नही ? बतला सकते हों तो बतला कर हम पर उपकार करें।

प्रश्नकुण्डली बना कर और उसे अच्छी तरह देख निमितज्ञ बोला—महाशयजी ! राजकुमार की पत्नी जीवित है और एक वर्ष बाद महाबल कुमार को अवश्य ही मिल जायगी। मलयासुन्दरी

जीवित है, यह अमृत के समान वचन सुनकर पुनर्ज-न्मसा प्राप्त कर, कुमार एकदम बोल उठा—पण्डितजी ! विलम्ब न कीजिये, आप मुझे कृपया शीघ्र बतलाइये कि वह इस समय कहां पर है ?

निमितज्ञ—कुमार ! आपकी पत्नी जंगल में है या बस्ती में, दुःख में है या सुख में, इत्यादि विस्तार वाली बातें मैं नहीं जान सकता । तथापि यह मैं निश्चित रूप से कह सकता हूं कि वह सुन्दरी जीवित है, और उसकी आयुष्य आपसे लम्बी है। यह बात सुनकर राजा के मन में शक पैदा हुआ कि उसे मैंने निर्जन अटवी में भेजकर मरवा डाला है। तब फिर वह जीवित किस तरह रह सकती है ? इस बात का निर्णय करने के लिए उसने फौरन सुभटों को बुलवाया जिनके हवाले मारने के लिए किया था। राजा—सुभटों ! मैं तुम्हें यह बात पूछने से पहले अभयदान देता हूँ, सच बोलो, मैंने तुम्हे मलयासुन्दरी को अटवी में लेजाकर मार डालने का आदेश दिया था। क्या तुमने सचमुच उसे लेजाकर मार डाला था ?

सुभट—महाराज ! हम सच कहते हैं, आपकी आज्ञा पाकर, जब हम उसे रथ में बैठा कर, उस निर्जन अटवी में लेगये तब प्रातःकाल हो गया था। हमने उसे रथ से नीचे उतारा, उस समय उसका शरीर भय से काँप रहा था, आंखों से आंसू बह रहे थे। हमने उसकी सौम्य मुख मुद्रा को देख कर विचार किया कि महाराज को उसके राक्षसी होने का किसी ने यो ही भ्रम डाल दिया है। ऐसी सुन्दर आकृति और सुलक्षणों वाली स्त्री कदापि राक्षसी नही हो सकती। इसलिए महाराज की आज्ञानुसार यदि हम इसका वध करेंगे, तो हमें निष्कारण ही दो प्राणियों की हत्या का पाप लगेगा। अतः यह समझ कर कि इस हिंसक पशुओं वाली अटवी मे आप ही यह किसी हिंसक पशु का शिकार बन जायगी, उसे जंगल में छोड़कर हम वापस चले आये और हमने आपके समक्ष आकर भय के कारण आपको उसके मारने का असत्य समाचार दिया।

राजा—(दीर्घ निश्वास ले पश्चात्ताप पूर्वक) अहो ! इन नौकरों में जो दया और बुद्धिमत्ता है उतनी

भी दया और बुद्धिमत्ता मुझमें नही ! धन्य हैं ऐसे दयालु और विचारशील मनुष्यों को, मेरे जैसे विचार-हीन एवं दयाहीन मनुष्यों को धिक्कार है।

उन लोगों की प्रशंसा कर राजा ने सुभटो और निमित्तज्ञों को बहुतसा धन देकर उनका आदर सत्कार किया।

कुमार बोला—ज्ञानी महाशय ! आपका कहना बिल्कुल सच है, सुभटों ने भी उसे जीवित छोड़ दिया है। (फिर पिता की तरफ देख) पिताजी ! जिस जगह सुभटों ने उसे जंगल में छोड़ दिया था वहां जाकर तलाश तो करें और राजपुरुषों को भेज-कर चंद्रावती में भी खबर तो करावें, न जाने हमारे पुण्योदय से वह किसी तरह अपने पिता के वहां पहुंच गई हो ! कुमार के कहने से राजा ने जगह-जगह राजपुरुषों को भेजकर मलयासुन्दरी की शोध कराना शुरू कर दिया। राजा ने कुमार को समझा बुझाकर भोजन कराया और खुद ने भी भोजन किया।

मलयासुन्दरी की खोज में भेजे गये राजपुरुष

कुछ समय के बाद जहां तहां ढूँढकर वापस आने लगे उसके न मिलने का समाचार देने लगे। उनके समाचारों से कुमार की आशा निराशा में परिवर्तित हो गई। वह अपनी प्रिया के सम्बन्ध में नाना प्रकार की कल्पनाएँ करने लगा। युद्ध में जाते समय प्रेम भरे शब्दों से साथ चलने की उसकी प्रार्थना को याद कर विशेष दुःखित होने लगा। वह मन ही मन उसे प्रत्यक्ष समझकर कहने लगा—प्यारी! राजमहल के उत्तम सुख का थोड़ासा अनुभव कर अब तुम दुःख के अगाध समुद्र में जा पड़ी। प्रिये! ऐसे घोर दुःखों का अनुभव तू किस तरह करती होगी? तुमने मेरे साथ आने के लिये बहुत हट किया, मगर पापी की तरह मैंने तुम्हें साथ न लिया। अब तू कहां और मैं कहां? सुन्दरी! राज-पत्नी होकर भी आज तू जंगल में मारी-मारी फिरती होगी। हिरनों के टोले से अलग हुई हिरनी की तरह वन में तू अकेली इधर उधर भ्रमण करती होगी। अरे तुझे निराधार अकेली घूमती हुई देखकर कोई दुष्ट मनुष्य उठा ले गया होगा। अथवा

जंगली जानवरों ने तुझे शिकार बना लिया होगा। अथवा मेरे वियोग दुःख से एवं जंगल की भयंकरता देखकर तेरा हृदय फटगया होगा। हाय ! इस भयंकर दुःख को मै कैसे सह सकूँगा। इत्यादि विलाप करता हुआ कुमार तीक्ष्ण शल्य के समान विह्वल बन गया। मलया की बैठक, रतिघर, उसके वस्त्र आभूषण अलंकार आदि देख देखकर महाबल की आंखों से अश्रुधारा बहने लगी। मन में अत्यधिक बैचेनी होने लगी। बार-बार मलयासुन्दरी का स्मरण होने लगा। जिस महल में गांधर्व के गायन, वारांगना के नृत्य सारंगी की झनझनाहट और मृदंगों के मधुर नाद गूँजते थे आज वही महल खाने को दौड़ता था। शून्याकार और भयंकर मालूम पड़ता था। महाबल को यह महल स्मशान जैसा दीखता था।

अरे जो मनुष्य मलया की तलाश करने के लिये गये थे, वे भी इधर-उधर फिरकर वापस आगये। उनको क्या स्वार्थ कि वे कष्ट उठाकर भी कहीसे मलया का पता लगावें, मलया के लिये जो दुःख दर्द मुझे है

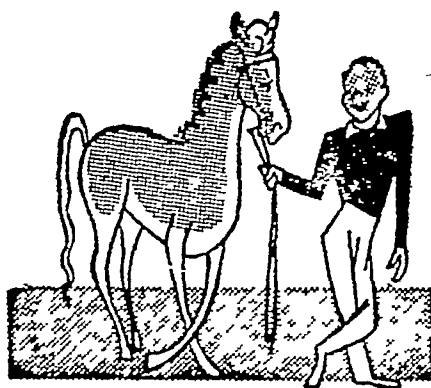
वह दूसरों को कैसे होगा ?

इन्ही विचारों से महाबल को किसी भी जगह चैन नही पड़ती थी। सूक्ष्म ज्वर के रोगी के समान अपनी प्रिया के वियोग से उसे खाना पीना बिलकुल अच्छा न लगता था।

उसने निरुपाय होकर एक दिन यह निश्चय किया कि जब उस अष्टांग निमितज्ञ ज्ञानी ने यह बतलाया है कि एक वर्ष बाद वह तुझे जीवित मिलेगी। तब मुझे स्वयं क्यों न तलाश करनी चाहिये ? उसके बिना मेरा अब यहां पर क्या रक्खा है ? यदि वह एक वर्ष पर्यन्त ढूंढने पर भी न मिली तो मुझे यहां न आकर स्वय भी उसके वियोग में प्राण त्याग देना चाहिये।

यह निश्चय कर एक रोज रात के समय किसी को मालूम न हो इस प्रकार हाथ में तलवार ले वह अपने शहर से निकल गया। अब वह भयानक जंगलो में बस्ती, और ग्रामों में मलयासुन्दरी की शोध करता हुआ, भूख-प्यास सहन कर, निद्रा को त्याग कर भिखारी के समान फिरने लगा।

इधर प्रातःकाल होने पर जब ढूँढने से भी राजकुमार का पता न लगा तब राजा के दुःख का पार न रहा। वह समझ तो गया कि अपनी प्रिया के वियोग से कुमार यहाँ पर न रह सका। उसकी खोज के लिये ही वह रात में एकाकी चला गया मालूम होता है। अभी तक महाराज सूरपाल को एक ही चिन्ता थी किन्तु कुमार के जाने से उनपर डबल चिन्ता का भार आ पड़ा। उसने दोनों की तलाश में चारो तरफ राजपुरुषों को भेजा।



(२७)

जंगल में पुत्र जन्म

सूर्य निकल आया, वैसा ही जैसा चमकीला और सुर्ख रंग का हमेशा निकला करता है। आसमान भी वैसा ही नीला है। जंगल के दरख्तों का वैसा ही नीला रंग दीख पड़ रहा है, सब कुछ वैसा ही है, जैसा कि मैं बचपन से देखती आ रही हूँ। परन्तु दुर्भाग्य-वश खुद मैं ही वह नही हूं जो कल थी। यह मैं जानती हूँ कि बदनसीबी अकेली ही नहीं आती, किन्तु अपने साथ और भी नई-नई आफतों को ले आती है। जब संकटों का सिलसिला शुरू हुआ है तब वह अपना पूरा जोर दिखाये बिना न रहेगा। हतभाग्य मलया-सुन्दरी! अब तू आनेवाले इन तमाम संकटों का सामना करने और निर्वासित जीवन बिताने के लिए

कठिन-हृदया बन जा। राजा और राजपुरुषों का इसमें क्या दोष है ? मेरे अशुभ कर्म उदय होने पर वे सब निमित्त बन गये हैं। परन्तु मेरे हृदय में यह बात अधिक खटकती है कि मुझे मेरे बुद्धिमान श्वसुर ने किस अपराध में निर्वासित की है ? इस प्रकार का अविचारित कार्य करने के लिए उन्हें अवश्य ही महान् पश्चात्ताप होगा।

हे नाथ ! आपतो मेरे सुख के लिए ही मुझे घर छोड़ गये थे। परन्तु आपके बिना मेरे भाग्य में सुख कहाँ है ? जब आप युद्ध से वापिस लौटेंगे तब मेरी यह दुर्दशा सुनकर आपके स्नेही हृदय को कितना दुःख होगा ! प्यारे ! क्या इस जीवन में मुझे फिरसे आपका समागम हो सकेगा ? हां ! मैंने जो कुछ भी अपने सुख के लिए किया था, वह सब कुछ उल्टा होगया।

चारों तरफ सन्नाटा देख अब वह कुछ जागृत सी हुई। उसने रोने-धोने से अपनी आंखे सुजा ली थी; परन्तु रुदन और चिन्ता का कुछ भी अच्छा परिणाम न देख उसने स्वयं अपने आप को शिक्षा दी। संध्या के

समय विलाप और चिन्ता के कारण उसके गर्भपूर्ण उदर में पीड़ा होने लगी। कुछ देर वेदना सह-कर जिस तरह प्रातःकाल में पूर्व दिशा सूर्य को जन्म देती है, उसी तरह उसने तेजस्वी पुत्र रत्न को जन्म दिया।

जिस राजरमणी के पास अनेक दास-दासी हाजिर रहते थे। जिसका प्रसूती-कर्म गगनचुम्बी राजमहलों मे प्रसूति कराने वाली कुशल दाइयों की देख-रेख में होना था और जिसे ऐसे प्रसंग में अनेक प्रकार के सुभीतों की आवश्यकता थी वह राजरमणी भाग्य चक्र में पड़कर निर्वासित हो आज एक भिखारिन के समान जङ्गली पशुओ की स्थिति में रहकर पुत्र को जन्म देती है। इस समय उसे बाह्य और आभ्यन्तर कितना दुःख हुआ होगा यह तो कोई ज्ञानी जानते हैं या वह स्वयं ही जानती थी।

ऐसी दुःखद स्थिति में भी पुत्र प्राप्ति ने उसे आ-श्वासन दिया। बच्चे को साफ कर गोद में बिठाकर माता मलया प्रेम भरी दृष्टि से उसके मुख की तरफ एक-टक देखने लगी। इस समय वह अपने ऊपर पड़े

हुए तमाम दु:खों को भूल गई। उस पुत्र की मुख-मुद्रा सूर्य बिम्ब के समान तेजस्वी और सुन्दर देखकर माता के नेत्रों से हर्ष के अश्रु वहने लगे।

वह अपनी स्थिति को याद करके पुत्र के सन्मुख देख कर कहने लगी—हे पुत्र ! आज हजारों मनोरथों के साथ तेरा जन्म हुआ है, परन्तु तेरी हत-भाग्य माता ऐसे भयङ्कर अरण्य में तेरा क्या जन्मोत्सव कर सकती है ? यदि तेरा जन्म घर पर हुआ होता तो आज के दिन राज्य-भर में महोत्सव मनाया जाता। घर घर मङ्गल गाये जाते। बेटा ! मुझ कमनसीब स्त्री के सब मनोरथ मनमें ही विलीन हो गए। यों बोलते हुए फिर से उसका हृदय भर आया और वह फूट-फूट कर रोने लगी। अरण्यवासी हिंसक पशुओं के भय से सावधान रहकर उसने बड़ी मुश्किल से रात बिताई।

मनुष्य की दुःखित अवस्था में सुकुमार शारीरिक परिस्थिति भी कठोरता धारण कर लेती है और अधिक समय तक रहने वाला दु:ख भी उसके हृदय में घर कर लेता है। राज पुत्री होने के कारण धैर्य और

साहस धारण कर वह वहां से पूर्व दिशा की ओर चल पड़ी। कुछ दूर जाने पर उसे एक नदी बहती हुई नजर आई। नदी पर जाकर उसने अपनी तमाम अशुचि को दूर कर पास में रहे वृक्षों के नीचे पड़े हुए पके हुए कुछ फल खाकर अपनी क्षुधा शान्त की।

नदी के किनारे पर वृक्षों की घटा घिरी हुई थी, उन वृक्षों के एक निकुंज में रह कर मलयासुन्दरी अपने पुत्र का पालन करती हुई अपने निर्वासित जीवन के दिन बिताने लगी।



(२८)

पुत्र-हरण सती की कसौटी

एक दिन बहुतसे परिवार सहित बलसार नामक सार्थवाह ने उसी नदी के तट पर अपना पड़ाव डाला जहां कर्मों से पीड़ित मलयासुन्दरी अपने संकटपूर्ण समय को बिता रही थी। सन्ध्या समय बलसार दिशा-शौच के लिए अपने तम्बू से बाहर निकला। जब वह शौचादि से निबट कर उस घनी वृक्ष-घटा के पास हो कर वापिस निकला तब उसने वहां एक बच्चे के रोने की आवाज सुनी।

इस आवाज को सुनकर उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। वह सोचने लगा—ऐसे भयंकर जङ्गल में छोटे बच्चे की आवाज कहां से आ रही है? बच्चे के शब्द की

आवाज के सहारे-सहारे जाकर वहां उसने वनदेवी के समान पुत्र को गोद में लिये वृक्ष के निकुंज में बैठी हुई मलयासुन्दरी को देखा। वह चकित हो।साहस कर पूछने लगा—भद्रे !, तुम कौन हो ? ऐसे जगल में अकेली क्यों बैठी हो ? तुम्हारी मुखाकृति से मालूम होता है कि तुम किसी उत्तम कुल में जन्मी हो। मैं बलसार नामक सार्थवाह हूं और सागरतिलक नामक शहर में रहता हूं। व्यापार के निमित्त प्रायः देश-देशान्तरों में विशेष घूमता रहता हूँ। तुम मुझसे किसी तरह का संकोच मत करो और इस पास ही के पड़ाव में मेरे साथ तम्बू में चलो।

मलयासुन्दरी के रूपलावण्य को देख कर बलसार का मन विचलित हो गया था। अतः वह उसका दुःख दूर करने के लिये नहीं बल्कि अपनी वासना शान्त करने हेतु मलयासुन्दरी को अपने तम्बू में ले जाना चाहता था।

बलसार का भाव मलयासुन्दरी समझ गई थी। अतः उसने उसे उत्तर दिया, श्रीमान् ! मैं एक चांडाल

की लड़की हूं और माता-पिता के साथ क्लेश हो जाने से क्रोधावेश में मैं यहाँ भाग कर आई हूँ और वापस अपने घर चली जाऊँगी। आप जाइये, मैं आपके साथ हरगिज नही आऊँगी। सार्थवाह भी इस बात को ताड़ गया कि इसकी बोलचाल मुखाकृति से सचमुच यह अच्छे और ऊँचे खानदान की स्त्री मालूम होती है परन्तु किसी कारणवश यह अपने आपको छुपा रही है। वह बोला—सुन्दरी ! तुम मेरे साथ चलो। मैं तुम्हारा चाण्डाल होना किसीको भी प्रकट न होने दूँगा और जैसे तुम कहोगी वैसा ही करूँगा।

इस तरह बोलता हुआ बलसार सार्थवाह मलया-सुन्दरी के निकट आ गया और जिस प्रकार कोई लु-टेरा किसीका धन छीन कर ले जाता है उसी तरह वह मलया की गोद से उसके बच्चे को उठा कर अपने पड़ाव की ओर चल दिया।

मलयासुन्दरी एक आपत्ति पर दूसरी आपत्ति देख अधिक सावधान होगई। उस महासती ने प्राणांत कष्ट आने पर भी सदाचार से विचलित न होने के

लिए अपने मन को खूब दृढ़ बना लिया। परन्तु पुत्र मोह से प्रेरित हो जैसे गाय अपने बछड़े के पीछे चली जाती है वैसे ही पुत्र को वापिस लेने के लिए दीनता भरे वचन बोलती हुई वह सार्थवाह के पीछे-पीछे चली गई।

मलयासुन्दरी को अपने पीछे आती देख सार्थवाह को बड़ी खुशी हुई। तंबू में जाने पर मलयासुन्दरी ने अपने बच्चे को वापिस लेने के लिये बहुत ही दीनता प्रकट की, परन्तु बलसार ने न तो उसे उसका पुत्र ही दिया और न ही उसे वहां से जाने दिया। पुत्र को पैदा हुए अभी आठ दिन ही हुए थे इसलिए स्तनपान न मिलने के कारण उसकी मृत्यु की शंका से मलया-सुन्दरी ने भी पुत्र को छोड़ वापिस जाना उचित न समझा। पुत्र की रक्षा के लिए इच्छा न होने पर भी वह बलसार के पटावास में रह गई। बलसार ने किसी को मालूम न हो इस तरह उसके रहने का प्रबन्ध कर दिया और उसका दिल बहलाने के लिए उसके पास एक दासी भी नियुक्त करदी। उसे विश्वास दिलाने के

लिए सार्थवाह उचित वचनों से संबोधित करने लगा। अब वह अपने सार्थ के साथ मलयासुन्दरी को लेकर अपने सागरतिलक नामक शहर में आ पहुँचा। वहाँ आकर उसने एक गुप्त मकान में मलयासुन्दरी के रहने का प्रबन्ध किया। एक दिन बलसार मलयासुन्दरी के पास आकर नम्र शब्दों में बोला—सुन्दरी ! तुम्हारा नाम तो बतलाओ। मलयासुन्दरी ने मन्द-स्वर में उत्तर दिया मेरा नाम मलयासुन्दरी है। यह नाम सुनकर उसके उच्च खानदान के विषय में जो उसका अनुमान था वह और भी दृढ़ हो गया। वह बोला—सुन्दरी ! तुम मुझे अपना स्वामी स्वीकार करो तो मैं सदा के लिए तुम्हारा सेवक बनकर रहूंगा और मेरी इस अतुल सम्पत्ति का मालिक तुम और यह तुम्हारा पुत्र ही होगा; क्यों कि मेरे कोई सन्तान नहीं है।

मलयासुन्दरी—सार्थवाह ! आप भी बड़े उच्च कुलीन मालूम होते हैं, इसलिए आप विचार करें कि पर–स्त्री गमन करना संसार में महान् पाप माना है। उसमें भी सती स्त्री के सतीत्व पर हाथ डालना यह

और भी अधिक घोर पाप गिना जाता है। आप जैसे कुलीन पुरुषों के लिए यह काम सर्वथा अनुचित है। तथापि मेरे सर्वस्व का नाश हो और शरीर के टुकड़े-टुकड़े होजाने पर भी चन्द्रमा के समान निर्मल मैं अपने शील को नष्ट न करूंगी। बलसार ने अभी तक यह समझ रक्खा था कि स्त्री जाति है, समझाने बुझाने से और खातिर तवज्जह करने पर खुद-ब-खुद धीरे-धीरे रास्ते पर आ जायगी। परन्तु मलयासुन्दरी के निश्चयात्मक वचन सुन उसके तमाम मनोरथों पर पानी फिर गया। अब उसके हृदय ने मलयासुन्दरी के ऊपर प्रेम के बजाय क्रोध का रूप धारण कर लिया। उसने क्रोध में आकर फ़िर से उसके बच्चे को छीन लिया और उसे एक मकान में बंद कर वह अपने घर चला गया।

घर पर अपनी प्रिय सुन्दरी नामक स्त्री के पास जाकर बोला—प्रिये ! आज मैं अशोक वगीचे में गया था वहां पर मुझे श्रेष्ठ लक्षणों वाला और सुन्दररूप-वान यह लड़का पड़ा हुआ मिला है। निःसन्तान होने

से हमें रात-दिन पुत्र की चिंता रहती थी। आज हमें परमात्मा ने यह पुत्र दिया है। तुम बड़ी हिफाजत के साथ इसका पालन-पोषण करो। निःसन्तान प्रिय सुन्दरी भी उस सुन्दर बालक को देख बड़ी खुश हुई। बलसार ने उसका नाम भी अपने नाम पर बल रक्खा और उसका पालन करने के लिये एक धाय भी रख दी।

सागरतिलक भी एक बड़े बंदरगाह का शहर था। वहां पर कंदर्प नामक राजा राज्य करता था और व्यापारी लोग भी वहां पर बड़े धनाढ्य थे। उन बड़े व्यापारियों में से ही एक यह बलसार सार्थवाह भी था। बलसार अति धनाढ्य होने पर भी उसके हृदय में पूरे संसार का धन बटोर कर अपने घर में एकत्रित कर लेने की लोभ की भावना सदैव जागृत रहती थी। इसलिये वह प्रायः व्यापार के निमित्त परदेश में ही अधिक फिरा करता था।

अब उसने व्यापार के निमित्त समुद्र मार्ग से बर्बरकूल जाने की तय्यारी की। जहाज तय्यार होगये।

मोहान्ध बलसार ने जबरदस्ती मलयासुन्दरी को अपने साथ ले लिया। समुद्रमार्ग में गमन करते हुए जहाज मे बैठी हुई मलयासुन्दरी के मन मे अनेक प्रकार की भावनाएँ पैदा होने लगी। क्या यह दुराशय सार्थवाह मुझे समुद्र में डाल देगा अथवा परदेश मे ले जाकर बेच तो नही देगा ? खैर, मेरा चाहे जो भी हो परन्तु इस दुष्ट ने मेरे बच्चे को नजाने किस हालत में रखा होगा ? पुत्र–वियोगसे दुःखित हो उसने फ़िर बलसार से पूछा—तुमने मेरे बच्चे को कहा रखा है ? यह सुन बलसार ने फिर वही अपनी पुरानी याचना प्रकट की। मलयासुन्दरी चुप होरही।

पवन अनुकूल होने से बलसार सार्थवाहके जहाज थोड़े ही दिनो में बर्बरकूल जा पहुचे। उसने अपना माल वहां पर काफी नफा ले कर बेच डाला। मलयासुन्दरी से किसी तरह अपनी इच्छा पूरी होती न देख उस दुष्ट ने उसे बहुत-सा धन ले कर किसी रग का काम करने वाले रङ्गरेज को बेच दिया। वहा पर भी उसे विषयवासना में अन्धे बने और उसके रूप पर

मोहित हुए युवक पुरुषों ने कामयाचना करके बहुत समझाया परन्तु उसकी मानसिक दृढ़ता को देख कर वह अपने कार्य में सफल न हुए। मलयासुन्दरी ने जब उनकी याचना स्वीकार न की तब उन निर्दय युवक रंगरेजों ने उसके कोमल शरीर में सुइयां चुभो कर रुधिर निकाला। इससे मलयासुन्दरी को असह्य वेदना हुई और मूर्च्छा आ गई। कुछ दिन के बाद जब उसके शरीर में फिर से रुधिर भर आया तब फिर उन्होंने पूर्ववत् ही उसके बदन से खून निकाला। इस तरह नित्य वे खून निकाल कर कपड़े रँगने के काम में लाते थे। इस जगह मलया को जो वेदनाएँ भोगनी पड़ीं वैसा दुःख उसने कभी कानों से भी न सुना था।

एक दिन उन लोगों ने फिर मलयासुन्दरीके बदन से खून निकाला, इससे मलयासुन्दरी असहनीय वेदना के कारण बेहोश होकर मुर्दे की तरह ज़मीन पर पड़ी थी। उसका सारा शरीर रुधिर में सना हुआ था। उस समय उस घर के तमाम मनुष्य किसी प्रसंगवश घर के बाहर गये हुए थे। ठीक इसी समय आकाश–

मार्ग से अकस्मात् एक भारण्ड पक्षी वहां आ पहुँचा। वह पक्षी उस मकान के आंगन में अन्य कोई न होनेसे बेहोश पड़ी मलयासुन्दरी को मांस का लोथड़ा समझ कर उठा कर ले गया।

भारण्ड पक्षी बहुत बड़ी पङ्खों वाला ताकतवर होता है। सुना है कि उसमें हाथी को भी उठा कर ले जाने की क्षमता होती है। वही भारण्ड पक्षी मांस-पिण्ड की भ्रान्ति से मलयासुन्दरी को उठा कर ले गया। अब वह समुद्र पर से उड़ता हुआ किसी द्वीप को तरफ जा रहा था। रास्ते में सामने से आता हुआ एक भारश्ड पक्षी और मिल गया। उस मांस के लोथड़े को देख सामने आने वाले भारण्ड ने उस पर आक्रमण किया। दोनो की लड़ाई में मलयासुन्दरी उस भारण्ड के पञ्जों से निकल पड़ी। भारण्ड के पंजों से नीचे गिरती हुई को उसे ठण्डी हवा लगने के कारण होश आ गया। अतः वह पंचपरमेष्ठि नमस्कार महा मन्त्र का स्मरण करने लगी और स्मरण करते हुए ही वह समुद्र के अगाध जल में आ गिरी।

मात्मा का नाम स्मरण कर रही थी। उसका शब्द सुन-कर आश्चर्य चकित हो मगर-मच्छ ने गर्दन झुका कर अपनी पीठ की तरफ देखा। मलयासुन्दरी को अपनी पीठ पर बैठी देख वह एकदम स्तब्ध सा हो गया।

कुछ देर पानी पर स्थित रह कर वह समुद्र-तट की ओर ऐसा चला जैसे कोई शीघ्र वेग वाली किश्ती दौड़ती है। मगर-मच्छ की प्रवृत्ति देख विस्मय के साथ मलयासुन्दरी विचारनें लगी—यह मत्स्य मुझे इसतरह कहाँ ले जायगा ? सचमुच ही किसी हितैषी मनुष्य के समान यह मच्छ बारम्बार मेरे सन्मुख देखता है। यह अज्ञान जलचर प्राणी भी मुझ पर कितना उपकार करता है ! इस प्रकार विचार करती हुई मच्छ पर मलयासुन्दरी किनारे की तरफ आने लगी। थोड़े ही समय में शीघ्रगामी किश्ती के समान वह सागरतिलक नामक नगर के बन्दरगाह के पास आ पहुँची।

मलयासुन्दरी का शरीर अनेक व्रणों से परिपूर्ण था। इस समय वेदना, क्षुधा, तृषा और परिश्रम से

उसका शरीर बिल्कुल अशक्त होगया था। उसमें उठकर चलने और अच्छी तरह बात करने की भी ताकत न रह गई थी।

मच्छ के वापस लौट जाने पर कंदर्प राजा अपने साथियों सहित मलयासुन्दरी के पास आया। अशक्त शरीर होने पर भी मलयासुन्दरी की लावण्यता सर्वथा नष्ट न हो गई थी।

अतः उसके सन्मुख देख राजा अपने साथियों से बोला—यह तो कोई सुन्दर युवती है। घने काले भीगे हुए बालों की चोटी बड़ की जटा के समान पीठ पर होकर नीचे तक लटक रही है। इसकी बड़ी-बड़ी आंखें संध्या समय के कमल दल के समान मुंदी हुई हैं। कौन कह सकता है कि इनके अन्दर कैसी दृष्टि छिपी हुई है? उठी हुई सीधी लम्बी नाक के नीचे होठों में राजसी दर्प से युक्त हास्य छिपा हुआ है। उसके नीचे ठोड़ी मानो सुधा-पात्र के समान उस विगलित हास्य को ग्रहण करने के लिये तैयार है। ऊंची और टेढ़ी गर्दन से इस समय भी अभिमान

प्रकट होरहा है। सिकुड़े हुए गीले कपड़ों के नीचे इस का यह गोरा बदन उसी प्रकार शोभ रहा है जैसे पतले बादलों से घिरा हुआ आकाश में चन्द्रमा। ऐसी दुर्दशा में भी इस सुन्दरी का तेजवान एवं सौम्य मुख-मडल कितना सुन्दर और लुभावना है ?

परन्तु इस मत्स्य का इसके साथ क्या सम्बन्ध होगा ? इस तरह प्रयत्न पूर्वक यह जलचर प्राणी इसे समुद्र के किनारे क्यों छोड़ गया है ? यह तमाम बातें इस स्त्री से ही मालूम होगी। इसके शरीर पर नक्र-चक्रादि जलचर प्राणियो के किये हुए ही यह अनेक व्रण मालूम होते हैं। इससे यह भी साबित होता है कि यह स्त्री किसी जहाज के डूब जाने से समुद्र में बहुत समय से पडी होगी।

इन तमाम बातों को जानने की उत्सुकता से राजा कन्दर्प बोला—सुन्दरी ! मैं सागरतिलक बंदर का कदर्प नामक राजा हूँ। तू जरा भी भय न रखना सच कह, तू कौन है और तुम्हारी ऐसी स्थिति क्यों हुई ? यह मकर कहां से तुझे यहां ले आया ?

राजा के शब्द सुन कर मलयासुन्दरी को कुछ आनन्द कुछ खेद पैदा हुआ।

वह सोचने लगीं—अहा! अभी तक मेरे प्रबल पुण्य शेष है यहां पर कुछ आशा-किरणों की झलक दिखाई दे रही प्रतीत होती है। उस दुष्ट सार्थवाह ने भी मुझे पुत्र सहित प्रथम यहां ही लाकर रखा था। जिस नगर में उसनें मेरे बच्चे को रखा है वही यह सागरतिलक नगर है। कर्मों ने मुझे फिर यहां ही ला पटका है। सम्भव है किसी तरह मुझे यहां मेरे प्यारे पुत्र का मिलन हो जाय!

दूसरी तरफ से मुझे यहाँ पर भय भी है कि यह कन्दर्प राजा मेरे पिता और श्वसुर का कट्टर शत्रु है। इसके सामने मुझे बड़ी सावधान हो कर रहना होगा, इसको अपना परिचय देना मेरे लिए और भी अधिक सङ्कटदायक होगा! यह सोच मलयासुन्दरी ने उत्तर दिया।

राजन्! इस अभागी स्त्री का वृत्तान्त सुनने की आपको क्या आवश्यकता है? मेरे वृत्तान्त से आपको

कुछ भी लाभ नहीं होगा । मैं दूर देश की रहनेवाली अपने दुष्कर्मों के प्रभाव से ऐसी दशा को प्राप्त हुई हूँ । मलयासुन्दरी के दुःख भरे वचन सुन कर राजा के साथी बोले—महाराज ! यह बेचारी इस समय दुःख-भार से दबी हुई है, अपने इष्ट मनुष्यों के वियोग से दुःखित हुई मालूम होती है । इसी कारण अच्छी तरह से बोल भी नहीं पा रही है । इस समय इससे कुछभी न पूछ कर इस पर थोड़ा उपकार करना चाहिये ।

राजा फिर बोला—भद्रे ! इस समय तू अत्यन्त दुःखी मालूम होती है । तथापि अपना नाम तो बता । मलयासुन्दरी ने मन्द स्वर से उत्तर दिया— 'मेरा नाम मलया है ।'

राजा ने तुरन्त ही राजपुरुषों से पालखी मँगवाई और मलयासुन्दरी को पालखी में बैठा कर वह अपने राजमहल में ले गया । उसने वैद्यों को बुला कर सं-रोहिणी औषधि द्वारा मलयासुन्दरी का इलाज कराया औषधि के प्रभाव और दासियों की परिचर्या के कारण थोड़े ही दिनों में पहले के समान कांतिवान और तेज-

वान हो गई ।

मलयासुन्दरी का शरीर अच्छा होने पर उसके सौदर्य और तेज को देख राजा ने उसे एक अलग महल मे रखवा दी, और उसकी सेवा में अनेक दासियां नियुक्त कर दी, वह उसका सुन्दर वस्त्रालंकारों से विशेष सत्कार करने लगा। इस सत्कार के कारण मलया को कंदर्प राजा का मनोगत भाव जानने में कुछ भी देर न लगी। वह सोचती थी कि यह विशेष सम्मान मुझे सुखदाई न होगा।

कुछ दिनों के बाद उसका किया हुआ अनुमान सच मालूम हुआ। उसके रूप और लावण्य से मुग्ध हो राजा कंदर्प ने अपनी दासी के द्वारा मलयासुन्दरी के समक्ष अपने मन का भाव प्रकट किया। उसने उसे अपनी पटरानी बनाने के लिए तरह-तरह के प्रलोभन दिये। परन्तु मलयासुन्दरी अपने सतीत्व को प्राणाधिक समझकर जरा भी विचलित न हुई। जब दासियों द्वारा और खुद अपनी प्रार्थनाओं से भी कार्य सिद्ध होता हुआ न देखा तब वह एक रोज मलयासुन्दरी के

पास जाकर बोला—सुन्दरी ! दोनों तरफ के प्रेम से हो सासारिक सुख का आनंद आता है, इसलिये मैं तुम्हें बारम्बार समझाता हूं कि तुम मुझे प्रेम-पूर्वक अंगीकार करो अन्यथा मैं तुम्हें अपनी पत्नी तो बना-उँगा ही। क्योंकि मुझे तुम्हारे रूप और सौंदर्य ने मुग्ध बना दिया है।

मलयासुन्दरी—धिक्कार है इस मेरे सौदर्य को, जिसके कारण मैं नरक के समान मानसिक व शारीरिक यातनायें भोगती हूं ! महाराज ! आप एक प्रजा के राजा है; राजा का कर्त्तव्य होता है कि वह पुत्री के समान अपनी प्रजा का पालन करे। जब आपके जैसे न्यायप्रिय राजा न्याय को छोड़ कर अन्याय में प्रवृत्ति करेंगे तो संसार में न्याय किसके पास रहेगा ? रक्षक स्वयं भक्षक बन जाय तो फिर उसकी रक्षा कहाँ पर होगी ? दूसरी यह भी बात है कि एक सती के शील को विध्वंस करने का प्रयत्न करने वाले पापी मनुष्य संसार में अपनी अपकीर्ति फैलाते है, और जन्मान्तर मे नरकादि की घोर वेदनायें भोगते है। महाराज !

सती की शील का खंडन करना केसरीसिंह की केस-राएँ ग्रहण करने के समान है या दृष्टि-विष सर्प के मस्तक पर रहे हुए मणि को ग्रहण करना और सती के शील पर हाथ डालना एक सरीखा है। इसलिये हे राजन्! आपको यह विचार त्याग देना चाहिये। आप ऐसे कृत्यों के द्वारा अपने निष्कलक कुलको कलंकित न करें।

इस प्रकार समझाने पर भी कन्दर्प अपने दुष्ट अभिप्राय से जरा भी पीछे न हटा। उसने निश्चय कर लिया कि चाहे कुछ भी हो मैं इसे अपनी स्त्री अवश्य बनाऊँगा। मलयासुन्दरी ने भी तह निश्चय कर लिया था कि अगर किसी भी प्रकार से मै अपनी शील की रक्षा होती न देखूँगी तो उस दुष्कृत्य से पहले मैं अपने प्राणों की आहुति देदूँगी। इधर वासना का दास बना हुआ राजा कंदर्प उसे वश करने के लिये अनेक प्रकार के उपाय सोचता है परन्तु उसे किसी भी उपाय में सफलता प्राप्त नहीं हुई तब उस ने मलयासुन्दरी को हमेशा छेड़कर हठोली बनाना

उचित न समझा। अब वह यह सोचकर कि जो काम बल से नहीं होता वह प्रेम और कपट छल से सिद्ध हो जाता है, मलयासुन्दरी को देशान्तरों से भेट में आए हुए अच्छे-अच्छे पदार्थ भेजने लगा।

एक दिन राजा अपने महल पर टहल रहा था उसी समय एक तोता कहीं से पका हुआ एक आम्र-फल लिये जा रहा था; देवयोग से वह उसकी चोंच से निकल जाने के कारण राजा के सामने आ पड़ा। राजा उस सुन्दर फल को हाथ में ले कर सोचने लगा कि फ़ाल्गुन मास में यह आम का फल कहा से आया? विचार करते हुए उसे मालूम हुआ कि नगर के नज-दीक में जो छिन्नटंक नामक पहाड़ है उसीके एक विषम भाग में ऐसा वृक्ष है जिस पर सदा काल फल लगते रहते है। उसी वृक्ष का फल ले कर कोई पक्षी आकाश मार्ग से जा रहा होगा; उसकी चोंच से छूट कर यह फल मेरे सामने गिरा है। यदि यह फल मैं मलया को दूँगा तो शायद उसका मन मेरी ओर झुके।

यह सोच उसने एक नौकर द्वारा वह आम्रफल मलयासुन्दरी के पास भेजा और सेवकों को यह भी आज्ञा दी कि आज उस स्त्री को जनाना महल में ले जाओ। बलात्कार से भी मैं अपने मनोरथ को पूर्ण करूँगा। सेवक ने वह पका हुआ आम्रफल मलया को ले जाकर दिया। मलयासुन्दरी ने आश्चर्य और हर्ष के साथ उस फल को ले लिया। वह इस अवस्था में आम्रफल मिलने पर अपने कुछ पुण्य का उदय समझ अत्यन्त प्रसन्न हुई। राजा की आज्ञा से उसे जनानी ड्योढी में छोड़ा गया, यह समाचार राजा को सुनाया गया कि आम्रफल देख कर वह सुन्दरी बहुत प्रसन्न हुई है और उसको रनवास में पहुँचा दी गई है। मलयासुन्दरी यह बात अच्छी तरह समझ गई कि आज मेरा शील भङ्ग करनेके लिए ही मुझे इस जनान खाने में लाया गया है।

समर में जाते समय महाबल ने मलयासुन्दरी को जो रूपपरिवर्तन करने की गुटिका दी थी वह उसके पुण्योदय से अभी तक उसके पासही थी। अतः समय

देख अन्य कोई न देख सके इसतरह उसने उस गुटिका को आम्ररस में घिस कर अपने मस्तक पर तिलक कर लिया। बस फिर तो देर ही क्या थी; दिव्य गुटिका के तिलक के प्रभाव से क्षण भर में ही वह स्त्री से एक सुन्दर युवा पुरुष रूप में परिवर्तित हो गई। अतः उसकी प्रसन्नता का पार न था। वह निर्भय हो प्रसन्न-चित्त रणवास में टहलने लगी।

जनाने महल में रहने वाली अन्य राजरमणियों ने उसे देख कर बड़ा आश्चर्य प्रकट किया क्योंकि जिनको राजा के अतिरिक्त कभी अन्य पुरुष का दर्शन भी दुर्लभ था आज वे विचक्षण रूपराशि धारण करने वाले नौजवान को देख कर विषयवासना से प्रेरित हो उस पर मोहित हो गई और आपस में कहने लगी— अहा! आज यहां महाराज के बदले यह सुन्दर पुरुष कहां से आ गया? यह तो कोई देव अथवा विद्याधर मालूम होता है।

इस तरह बोलते हुए उनके दिलों में विकार की की तरंगे इस तरह हिलोरे लेने लगी जिस तरह चंद्र-

बिम्ब को देख कर समुद्र में लहरें उमड़ती है। जिस प्रकार पके फल वाले पेड़ को देख कर भूखे बन्दरों का समूह उसके फ़ल खाने के लिए उत्सुक और लालायित होते हैं वैसे ही रणवास में रहने वाली राजमहिलाएँ उस पुरुष के साथ कामक्रीड़ा करने को उत्सुक हो उसके सामने पास आ-आकर अनेक प्रकार के हाव-भाव और कटाक्ष करने लगीं।

अन्तेउर की यह दशा देख आश्चर्य को प्राप्त हुई एक दासी ने महाराज के पास जाकर प्रार्थना की कि महाराज ! आज अचानक आपकी ड्योढ़ी में कोई एक सुन्दर युवा पुरुष बैठा हुआ है और तमाम रानियां उसके संग हँसी मजाक कर रही हैं।

यह समाचार सुनते ही राजा कन्दर्प शीघ्र ही महल में आया और साक्षात् कामदेव के समान सुन्दर रूपवान उस नवीन पुरुष को देख कर वह अचरज में पड़गया। वह एकदम बोल उठा—यह मनुष्य कौन है ? इसने महल में किस प्रकार प्रवेश किया ? इस प्रश्न के उत्तर में राजा को कोई समाधान न मिला।

अकस्मात् याद आने से राजा ने मलयासुन्दरी को तलाश कराई; परन्तु ढूँढने पर भी उसका पता नही लगा अतः आंखें तरेर कर उसने द्वारपाल से पूछा—अरे ! वह जो नई स्त्री आज यहां पर भेजी गई थी वह कहां है ? द्वारपाल हाथ जोड़कर नम्रता से बोला —महाराज ! थोड़ी देर पहले वह औरत यहां पर ही बैठी थी, वह महल से बाहर नहीं गई क्योंकि मैं दरवाजे पर सावधान होकर पहरा दे रहा हूँ। यह सुन राजा विचारने लगा—हो न हो किसी प्रयोग से उस सुन्दरी ने ही यह पुरुष रूप धारण कर लिया लगता है ! यह जानने के लिए राजा ने उससे प्रश्न किया अरे ! तू कौन है ?

मलयासुन्दरी— मैं कौन हूँ सो क्या तू स्वयं अपनी आंखो से नही देख रहा ? राजा ने कुछ देर तक विचार कर निश्चय कर लिया कि यह उस सुन्दरी ने ही मेरे आधीन न होने के कारण किसी तरह अपना रूप परिवर्तन कर लिया है। अगर यह यहां पर रहेगा तो कुछ और अनर्थ हो जाना सम्भव है। यह

विचार कर राजा बोला—सुभटों ! क्या देखते हो ? इस पुरुष को महल से बाहर निकालो और दूसरे मकान में लेजाकर नजर कैद कर दो। राजा की आज्ञा मिलते ही राजपुरुषों ने उसे बाहर निकाल कर नजदीक एक मकान में अपनी निगरानी में रख कर नजर कैद कर दिया।

मलयासुन्दरी को इससे बड़ा हर्ष हुआ। अपने शील की रक्षा होती देख उसके आनन्द का पार नहीं रहा। परन्तु इतने मात्र से ही उसके रूप में मुग्ध बना हुआ राजा उसको छोड़ने वाला न था। थोड़ी ही देर गाद वह राजा फिर से पुरुषरूपा मलयासुन्दरी के पास आया और अनेक विधि उपायो द्वारा पूछने लगा। सुन्दरी ! तुमने अपना यह पुरुष रूप किस कारण और किस प्रयोग से बना लिया ? अब किस प्रयोग से फिर तुम्हारा स्त्रीरूप बनेगा ? मलयासुन्दरी ने इस बात का कुछ भी उत्तर न दिया। इससे क्रोधातुर हो राजा ने उसको बहुत ही ताड़ना-तर्जना की पराधीन बनी हुई अभागिनी मलयासुन्दरी यह सब

दुःख मौन रह कर सहन कर गई। किन्तु कामान्ध कन्दर्प ने उसका पीछा नहीं छोड़ा। जब उस पर प्रतिदिन मारपीट का क्रम शुरू कर दिया तब अति दुःखित हो उसने सोचा कितने दिन इस नारकीय दुःख को सहा जाय ? ऐसी कदर्थनाओं से तो आत्महत्या कर लेना श्रेयस्कर होगा। परन्तु यहां से किसी तरह निकल भागूँ तब न ? पुरुष रूप में अब मुझे अपने शील भङ्ग होने का तो कही पर भी भय नहीं है और इसी कारण इस तरह की यातनाएँ भी मुझे अन्यत्र नही सहना पड़ेगी।

एक दिन रात के समय जब कि उसका पहरेदार नीद में पड़ा बेखबर सो रहा था तब अन्य कोई नहीं जान पावे इस तरह चुपके से मलयासुन्दरी वहा से निकल कर नगर के वाहर आ पहुंची। स्त्री की जाति होने के कारण एवं अनुभव और धैर्य के अभाव से वह वहां से दूर भाग जाने के लिए हिम्मत न कर पाई। दुःख से मुक्त होने के लिए मृत्यु की शरण लेने के अतिरिक्त उसे अन्य कोई उपाय न सूझा। वह

आत्महत्या करने का निश्चय कर वहां पर रहे हुए एक जीर्ण मठ की दीवार के पास खड़ी हो गई। उसी दीवार के पास एक बड़ा अन्धकूप—पानी रहित कुँआ था, वह मलयासुन्दरी के देखने में आगया; उसमें झंपापात करने के इरादे से वह उस कुँए के किनारे पर खड़ी हो विचारने लगी–प्रातः-काल होने पर मुझे वहाँ न देख कर अवश्य ही राजा और राज-पुरुष मेरी खोज में मेरे पीछे आयँगे और क्रोधांध हो मुझे बुरी मृत्यु से मारेंगे। इससे इस कुए में कूँद कर स्वयं मर जाना अच्छा है।

यह सोच उसने पंच परमेष्ठि मंत्र का स्मरण किया। मरने का निश्चय करने पर भी वह महाबल–कुमार का प्रेम और भक्ति–भाव भूल न सकी। अत. दुर्दैव को उपालभ देती हुई वह बोल उठी—हे दुर्दैव! तूने मेरे बन्धुओं से वियोगन बनाई और तूने ही निः–सीम प्रेम वाले प्रियतम महाबल से भी अलग कराया! हे दैव! जन्मान्तर में तो तू अवश्य ही मुझ पर प्रसन्न हो मेरे प्रियतम के साथ मेरा मिलाप करा देना। हे

जंगल के पशु-पक्षियों ! अगर तुम्हें कहीं पर भी मेरे स्वामी महाबल मिल जायँ तो उन्हें मेरा अन्तिम नमस्कार पूर्वक यह संदेश सुनाना कि उस तुम्हारी वियोगिनी मलयासुन्दरी ने दुःख से कायर हो, आपको याद करती हुई इस अन्धकूप में प्राणत्याग किया है। इस प्रकार दैव को उपालम्भ देकर और पशु-पक्षियों को अपना संदेश महाबल से सुनाने की याचना कर मलयासुन्दरी उस अन्ध-कूप में कूद पड़ी।



(३०)

अन्धकूप में पति-मिलन

मलयासुन्दरी की खोज मे महाबल को लगभग एक वर्ष पूरा पोने आया था। उसने भूख, प्यास और निद्रा को त्याग कर देश भर में बड़े-वडे तमाम शहर, जंगल, पहाड़ और गुफाएँ ढूँढी परन्तु उसे मलयासुन्दरी का समाचार तक कहीं भी न मिला। सिर्फ एक सागरतिलक शहर ही बड़े शहरो में से खोज किये बिना रह गया था। वह यहां भी आज संध्या के समय आ पहुँचा। भूख, प्यास और रास्ते के परिश्रम से आज वह बहुत हो थक गया था परन्तु उसके मन में जो अपनी प्रिया का प्रेम था वह जरा भी कम न हुआ था। इसी कारण आज उसके मन में यह विचार पैदा हुए कि "निमित्त-ज्ञानी के कथनानुसार आज

साल भर से अधिक समय हो गया परन्तु मिलने की बात तो दूर रही प्रिया का कही पर समाचार तक भी नही मिला। यदि कल तक इस शहर में भी कुछ पता न लगा तो आत्मघात कर इस भारभूत नीरस जीवन का अन्त कर दूँगा।

रात हो जाने से महाबल शहर के बाहर ही उसी पुराने मठ में ठहर गया। जिसके पास खड़ी हो कर कुछ देर पहले मलयासुन्दरी ने मरणोन्मुख हो कर पूर्वोक्त उद्गार निकाले थे। वही चिन्ता में पड़े हुए महाबल ने पूर्वोक्त विचारों की उधेड़बुन में मलया-सुन्दरी के अंतिम शब्दो को सुन लिया था। इससे वह एकदम चकित हो उठ बैठा। और बोला— अहा यह तो मेरी ही प्रिया की जैसी किसी दुःखित सुन्दरी के मृत्युसूचक अंतिम शब्द मालूम होते है। यह वि-चार और यो बोलता हुआ 'सुन्दरी ! ठहरो ! साहस मत करो; वह दौड़ कर उस अन्धकूप के पास आया परन्तु दुर्दैव के वश महाबल के वहां पहुँचने के पहले ही वह अन्धकूप में कूद चुकी थी। महाबल का भी

अपनी प्रिया के प्रति कुछ कम प्रेम न था। अतः उसने भी मलयासुन्दरी के पीछे उसी अन्धकूप में झंपापात कर दिया।

उस जल रहित कुँए मे गिरने के बाद महाबल ने अपनी तकलीफ को कुछ भी न समझ अपने से पहले गिरे हुए मनुष्य को देखा तो मालूम हुआ कि वह गाढ मूर्च्छा में पड़ा है। और किसी विशेष वेदना का अनुभव करते हुए मन्दस्वर से अव्यक्त स्थिति में प्यारे महाबल ! दासी को भूल न जाना, यह शब्द बोलता था। यह सुनकर महाबल विस्मित हुआ। उसने अपने हाथ से उसके शरीर की शुश्रुषा करनी शुरू की।

कुछ देर बाद उसे कुछ चैतन्य आया। तब महाबल बोला— साहसिक युवक ! तुम कौन हो ? और किस दुःख से तुम इस कुँए में गिरे हो ?

मलयासुन्दरी ने अपने स्वामी महाबल का शब्द सुनकर कुछ उसी के विषय में अनुमान किया। इस-लिये उसने कहा—मुझे भी आपसे यह सवाल पूछना है। परन्तु आप इससे पहले यह काम करे कि अपने

थूँक से मेरे मस्तक पर लगे हुए तिलक को मिटा दें। वैसा करने से मलयासुन्दरी का वास्तविक रूप प्रकट होगया। वह अपने प्राणप्यारे को सन्मुख देख उसके गले में हाथ डाल कर एक-दम लिपट गई और उसके परोक्ष में सहे हुए असह्य दुःखो को याद कर वह फूट-फूट कर रोने लगी।

इस समय कुँए की दीवार के एक गड्ढे में रहने वाले नाग ने अपना फन बाहर निकाला। उसके फन पर दैदिप्यमान मणि होने से कुँए के अन्दर दीपक के समान प्रकाश फैल गया। वियोगी दम्पती ने एक दूसरे के दर्शन किये। मणि द्वारा प्रकाश कर उस नाग ने भविष्य में होनेवाले उनके उदय की सूचना दी। प्रिया से मिलने की उत्कण्ठा से ग्राम, नगर, जंगलो में भटकने वाला महाबल एक वर्ष के बाद ऐसे विषम स्थान में मणि के प्रकाश में मलयासुन्दरी के साक्षात दर्शन कर गद्-गद् हो उठा। उसने अत्यन्त प्रेम से उसे अपनी छाती से लगा लिया। इस समय वे दोनों अपने ऊपर आए हुए सभी दु.खों को भूलकर

जिस अनिर्वचनीय सुख का अनुभव कर रहे थे भला उस सुख को लिखने की इस निर्जीव लेखनी में शक्ति कहा ? दोनों की आंखों से आनन्द के अश्रु बहने लगे। कुछ देर तक आनन्द के वेग से हृदय भर आने के कारण एक दूसरे से कुछ भी न बोल सके। जब अश्रुओं के द्वारा हृदय का वेग दूर हो चुका तब महाबल बोला—प्रिये ! तुम आज तक का तुम्हारा अनुभव किया हुआ सब वृत्तान्त मुझे सुनाओ।

मलयासुन्दरी ने पति की आज्ञा पाकर कपित शरीर, दु:खित हृदय और अश्रु पूर्ण नेत्रों से अनुभव किया हुआ अपना दु:ख गर्भित वृत्तांत कह सुनाया।

उसके दु ख का वृत्तान्त सुन-कर महाबल का हृदय दु:ख से भर आया, फिर से उसके नेत्रों से आंसू बहने लगे। वह बोल उठा—हा ! हा ! प्रिये ! क्या ऐसे दु:खों का अनुभव करने के लिये ही मुझसे तुम्हारा संबन्ध हुआ था ? प्रिये ! भोग के योग्य तुम्हारे इस सुन्दर शरीर ने किस तरह उन असह्य दु खों को सहा होगा ? प्रिये ! बलसार ने तुमसे छीन कर उस हमारे

पुत्र को कहां रखा है ?

मलया—स्वामिन् ! उस सार्थवाह ने इसी नगर में किसी गुप्त स्थान पर पुत्र को रखा है। परन्तु निश्चित स्थान के बिना वह बालक हमें किस तरह मिल सकता है ?

महाबल—प्रिये ! किसी प्रकार इस कुँए से बाहर निकला जाय तो फिर कुमार की तलाश करें।

मलया—स्वामिन् ! पृथ्वीस्थानपुर नगर से मुझे निकालने की चर्चा सुनने के बाद आपने इतना समय कैसे बिताया ? इस प्रश्न के उत्तर में महाबल ने पल्लीपति की विजय से लेकर आज तक का सभी वृत्तान्त कह सुनाया। अपनी बीती बातों में ही उन्होंने शेष रात पूरी की। इधर प्रातःकाल होने पर भी जब मलयासुन्दरी को गायब पाया, तब पहरेदार ने शीघ्र ही राजा कदर्प को उसके भाग जाने का समाचार दिया। राजा अनेक राज-पुरुषों को साथ ले मलया-सुन्दरी के कदम दर-कदम सावधानी से उसकी खोज करता हुआ उसी अन्धकूप के पास आ पहुँचा। कुँए

में नजर डालने से यह दोनों स्त्री पुरुष देखने में आगये।

राजा समझ गया कि यह पुरुष इस स्त्री का अवश्य सगा-सम्बन्धी होगा इसी लिये इसने इस वक्त अपना स्वाभाविक स्त्री रूप बना लिया है और उस से वार्तालाप कर रहा है। इत्यादि कुछ सोच कर राजा ने उनसे कहा—मैं तुम दोनों को अभय-दान देता हूं। तुम दोनों कुँए से बाहर निकलो। रस्सियो से माचियां बांधकर कुँए मे लटकाई जाती है उनपर चढ़ जाओ, मैं उन्हें खिचवाकर तुम्हे बाहर निकलवाता हूं।

मलयासुन्दरी ने महाबल से कहा—प्रिय ! आर्यपुत्र ! यह वही कंदर्प राजा है जो विषयांध होकर मेरी अत्यन्त कदर्थना कर रहा है। यह मेरे पदचिन्हो को देखता हुआ यहां आ पहुंचा है। मुझे यह शक है कि मुझ पर आशिक होने के कारण यह दुष्ट आपको कही मार न डाले।

महाबल बोला—प्रिये ! इस बात का मुझे भय

नहीं है। किसी तरह इस कुँए से बाहर निकल जाऊँ फिर तो इसके निग्रह का कोई न कोई उपाय ढूँढ निकालूँगा। तुम किसी तरह का भय मत करो। एक मंचिका पर तुम बैठ जाओ और दूसरी पर मै बैठता हूँ।

मलयासुन्दरी पति की आज्ञा मंजूर कर एक मंचिका पर बैठ गई और दूसरो पर महाबल। मंचिकाएँ खीची जाने लगीं मानो राजा अपने वंश का उच्छेदन करने के लिए ही पाताल से नागकुमार का आकर्षण कर रहा हो इस तरह इन दम्पति को मंचिकाएँ कुँए के किनारे तक आगई तब राजा ने पहले मलया की मंचिका बाहर निकलवाई। किनारे पर आई हुई मंचिका पर नागकुमार के समान रूपवान महाबल को बैठे देख कर राजा विचार में पड़ गया। ऐसे सुन्दर पति वाली स्त्री ताड़ना तर्जना करने पर भी मुझ जैसे मनुष्य को कदापि स्वीकार नही करेगी। इसलिए इस सुन्दर युवक को बाहर निकालना ठीक नही। यह सोच उसने अपनी तलवार से तुरन्त

महाबल के मंच का रस्सा काट दिया। रस्सा कटते ही निरावलम्बन हो महाबलकुमार अपने मंच सहित वापिस कुँए में जा गिरा। यह देख मलयासुन्दरी भी फिर से कुँए में गिरने के लिए छटपटाई। किंतु राजा ने झट-से उसको पकड़ लिया और उसे अपने महल में ले आया। महल मे लाकर राजाने मलयासुन्दरी से कहा— सुन्दरी! वह मनुष्य कौन था? उसका नाम क्या है? वह तुझे किस तरह मिला और वह कहां का रहने वाला है? इत्यादि अनेक प्रश्न पूछे, परन्तु मलयासुन्दरी को इन प्रश्नों का उत्तर देने का समय ही कहां था? उसको तो पति-वियोग में विवश हो रुदन करने के अतिरिक्त और कुछ न सूझ रहा था। खाने-पीने के लिए आग्रह करने पर भी उसने साफ-साफ़ कह दिया कि जब तक मैं उस मनुष्य का दर्शन न करूँगी तब तक अन्नजल ग्रहण नही करूँगी।

कन्दर्प ने सोचा उस मनुष्य को कुँए से बाहर निकलवाना मेरे लिए किसी तरह भी लाभदायक नही है। और इसको रणवास में रखना भी योग्य

नही। क्यों कि यदि इसने वहां रह कर पुरुष का रूप धारण कर लिया तो यह रणवास की सभी स्त्रियो को खराब करेगा। इत्यादि विचारों से मलयासुन्दरी को राजपुरुषों के विशेष पहरे में राजा कन्दर्प ने एक पुराने महल में बन्द करवा दी। वह सारा दिन, मलयासुन्दरी ने पतिवियोग में रुदन करते हुए बिताया।



(३१)

पुनः पति-वियोग में मलया को सर्प-दंश

जिस मकान में वियोगिनी मलयासुन्दरी को रखा गया था वह राज कैदियो को बद करने के लिये एक पुराना कारा-गृह था। उसके पास एक भी दासी नही रक्खी गई थी। सिर्फ उस महल के बाहर चारों तरफ राजा के सिपाही घूम रहे थे। रात्रि होने पर चारों तरफ अन्धकार फैल गया था। मलयासुन्दरी पति दुःख से दुःखित हो जल हीन मीन के समान ज-मीन पर तड़फ रही थी। इसी समय उस जगह कही से एक भयङ्कर जहरीला सर्प आगया और उसने मल-यासुन्दरी को डस लिया।

मृत्यु बुरी चीज है। मलयासुन्दरी एकदम चिल्ला उठी। हाय मेरे पैर में यह दुष्ट सर्प आ लिपटा ! यों बोल कर वह देव गुरु को याद करने लगी। चिल्लाहट सुनकर एकदम पहरेदार आ पहुँचे। उन्होंने वहां सांप को देखकर उसे किसी शस्त्र से मार दिया, और शीघ्र ही जाकर राजा को खबर दी कि मलयासुन्दरी को जहरीले सांप ने डस लिया है। विषय-स्नेही राजा यह खबर सुनकर, आकुल व्याकुल हो शीघ्र ही वहां आ पहुँचा। राजा ने तुरन्त ही शहर में से मंत्रवादियों को बुलवाया। जड़ी बूँटी सांप का जहर उतारने के सभी साधन मँगवाये। उनका प्रयोग भी करवाया परन्तु सभी प्रयोग निष्फ़ल गये।

प्रातःकाल होते ही राजा की ओर से ढीढोरा पिटवाया गया परदेश से आई हुई अपनी एक रखेल-स्त्री को रात्रि में भयंकर सर्प ने डस लिया है, जो मनुष्य उसका विष उतार देगा, उसे राजा अपना रण-रंग हाथी, एक राज-कन्या और देश का एक प्रान्त देगा। शहर भर में डिम-डिम नाद बजता रहा परन्तु एक भी

मनुष्य उसे रोकने वाला न मिला। जब वे राज-पुरुष वापिस राज-महल को लौट रहे थे, तब उन्हें एक विदेशी युवक मिला। उसके पूछने पर उन्होंने उसे सब समाचार कह सुनाया। वह परदेशी युवक बोला चलो, मुझे राजा के पास ले चलो, मैं उस स्त्री को अच्छा करूँगा। राज-पुरुष उसे साथ ले शीघ्र ही राजा के पास आये। उस युवक को देख राजा एक-दम आश्चर्य चकित हो उसकी ओर आंखे फाड़ कर देखता हुआ सोचने लगा अरे! यह तो वही मनुष्य मालूम होता है जिसे हमने वापस कुँए में डाल दिया था! इसे किस दुष्ट ने बाहर निकाला होगा? नौकरों से बोला—यह कौन मनुष्य है? नौकर बोले—महाराज! सारे शहर में पटह बजाया गया किन्तु किसी भी व्यक्ति ने स्वीकार नही किया। रास्ते में यह परदेशी मनुष्य मिल गया, यह उस स्त्री का विष उतारना स्वीकार करता है।

राजा—(गुस्से को दबाकर) अच्छा, आप खुशी से शीघ्र ही उस सुन्दरी का विष उतारिये, मैं आपको अपना रण-रंग हाथी, एक राज-कन्या और देश का

एकप्रान्त दूँगा ।

महाबल—महाराज ! मुझे आपका इनाम कुछ नहीं चाहिये । मैं परदेशी हूँ, और यह मेरी ही पत्नी है । यह देव की मारी घर से निकली हुई है । मै इसे विषापहार कर अवश्य ही इसे आराम कर दूँगा, आप इसे ही मुझे दे देना । मुझे अन्य कुछ न चाहिये । यह सुन राजा स्तब्धसा होगया । उसे कुछ भी उत्तर देना न सूझा । वह कुछ देर सोचकर बोला—अच्छा ऐसा ही सही, एक काम हमारा बताया हुआ और कर देना फिर हम तुम्हे इस स्त्री को भी दे देगे । महाबल ने भी यह बात स्वीकार करली । राजा महाबल को साथ लेकर मलयासुन्दरी के पास आया । इस समय मलयासुन्दरी के सारे शरीर में विष व्याप्त हो चुका था, और वह गाढ़ मूर्च्छा में अचेतन पड़ी थी ।

अपनी प्रिया की यह दुर्दशा देख महाबल का हृदय भर आया । उसने बड़ी मुश्किल से अपने अश्रु-प्रवाह को रोका । वह राजा से बोला—राजन् ! इसके शरीर में तो श्वासोछ्वास की क्रिया भी मालूम नही होती है ।

तथापि मैं अपना प्रयोग इस पर करता हूं। आप यहां पर सुगन्धिवाला जल छिड़कवा कर तमाम मनुष्यों को बाहर चले जाने की आज्ञा करे। महाबल ने उस जगह को पवित्र बनवा कर वहां एक मंडल बनवाया। फिर राजा आदि सब को बाहर कर दिया।

एकान्त में महाबल ने विष उतारने का प्रयोग शुरू किया। उस मण्डल की मत्रार्चन-विधि पूरी कर महामंत्र का स्मरण करके उसने अपने पास से एक विषापहारक मणि निकाली। उसे स्वच्छ जल से धो-कर वह पानी मलयासुन्दरी के नेत्रो पर, मुँह पर व सारे शरीर पर छिड़का गया। कुछ पानी पिलाया भी गया। मणि-मंत्र और औषधियों में अचिन्त्य प्रभाव होता है। इसीलिये इस मणि-जल के प्रभाव से उस महासती मलयासुन्दरी के नेत्र कमल के समान खुलने लगे, श्वासोच्छ्वास चलने लगा। जैसे नीद से उठती हो वैसे धीरे-धीरे उसे पूर्णतया होश आगया। महाबल भी बहुत खुश हो गया।

इस तरह महासती मलयासुन्दरी संपूर्णतया विष

के उतर जाने पर कुछ देर बाद आनन्द के साथ बैठी हो गई। अपने पास महाबल को बैठा देख उसके हर्ष का पार न रहा। वह एकदम उससे भेट पड़ी और हर्ष के आंसू बहाती हुई बोल उठी—प्रियतम ! आप उस अन्धकूप से किस तरह निकले ?

महाबल बोला—प्रिये ! जब राजा ने मेरी मंचिका की रस्सी काट दी थी तब मैं मांची सहित वापस कुँए में गिर पड़ा। मंचिका पर बैठा होने के कारण मुझे विशेष चोट न लगी। जिसने अपनी मणि से कल रात को हमारे मिलन के समय प्रकाश किया था वह सर्प भी उस कुँए में ही था। वह फिर से निकला तब मैंने उसके मणि-प्रकाश में कुँए के चारों तरफ देखा। जिस जगह वह सांप बैठा था उसी जगह मैंने एक द्वार देखा। उस पर एक शिला लगाई हुई थी। दरवाज़ा होने की शङ्का से मैंने उस शिला को दूसरी ओर खींच लिया। द्वार खुल गया और वह सर्प धीरे-धीरे उसके अन्दर घुसने लगा। मैंने भी साहस कर उस द्वार में प्रवेश किया। वह

सर्प मशालधारी के समान मुझसे आगे-आगे चलने लगा। मणि के प्रकाश से मुझे उस गुफा में बड़ी सहायता मिली। मैंने यह निश्चय किया कि यह गुफा किसी चोर की बनाई हुई होनी चाहिये और इस अन्धकूप से बाहर निकलने का मार्ग भी अवश्य होना चाहिये।

इन्ही विचारों में मैं कितनी ही दूर तक आगे गया तब यकायक वह सांप न जाने क्यों गायब हो गया, जिससे सुरंग में अँधेरा घुप्प हो गया। परन्तु मैं साहस धारण कर जन्मांध के समान उस घोर अन्धकार में टटोलता हुआ आगे बढ़ता ही गया। इसी तरह आगे चलते हुए मैं एक शिला से टकरा गया। उस शिला पर जोर से लात मारने से उस सुरंग का द्वार खुल गया। जिस प्रकार गर्भाशय से प्राणी बाहर निकलता है ठीक उसी तरह मैं उस गुफा में से बाहर निकल आया।

फिर मैंने उस सर्प की घसीट देखी। मैं उसके अनुसार कुछ दूर तक गया तो वह साँप मुझे एक

शिला पर कुंडली मारे बैठा हुआ नजर आया। नागदमनी मन्त्र विद्या द्वारा मैंने सांप को वश में किया और उसके मस्तक से अचिन्त्य प्रभाव वाली उस मणि को ग्रहण किया। पहाड़ से उतरने वाली नदी के नजदीक स्मशान भूमि में सुरंगद्वार होने से मुझे विश्वास होता है कि वह अवश्य ही किसी चोर का बनाया हुआ गुप्त स्थान है। परन्तु देखने से यह भी मालूम हुआ कि उस गुफा में बहुत दिनों से किसी मनुष्य का आना-जाना न होने के कारण वह चोर शायद मर गया होगा। उस सुरंग के द्वार को मैं फिर उसी पत्थर से ढक कर आया हू।

यह राजा मुझ पर अनर्थ और अन्याय करेगा यह जानते हुए भी तेरे विरह को सहन करने में असमर्थ हो कर मैं वहां से सीधा शहर की ही तरफ़ चला आ रहा था शहर में आकर मैंने पटह बजता सुना। उसका कारण पूछने पर मालूम हुआ कि तुझे सांप ने डस लिया है। इसी कारण मैं राजपुरुषो के साथ राजा के पास आया और उसकी सहमति से

अपने साथ लाई हुई उस प्रभाविक मणि द्वारा मैंने इस समय तुम्हें जीवित किया है। प्रिये ! अब तुम जरा भी चिन्ता न करना क्यों कि मैंने राजा से खुशी पूर्वक तुमको अपने साथ ले जाने का वचन ले लिया है। इससे मुझे विश्वास है कि अब तुम्हे वह मेरे आधीन कर देगा। यह बात सुन मलयासुन्दरी बहुत प्रसन्न हुई।

महाबल ने अब राजा को अन्दर बुला लिया और कहा—राजन् ! देखिये, मैंने इस सुन्दरी को बिल्कुल अच्छा कर दिया है। मलयासुन्दरी को अपने पति के साथ अच्छी हालत मे बैठी बात करती हुई देख कर राजा प्रेमावेश में पराधीन हो मस्तक हिला करके बोला—अहा ! जिसके जीवन की आशा न रही थी। उसे हमारे सुख के साथ तुमने जीवित दान दिया है, धन्य है—तुम्हारे विद्या-सामर्थ्य को सत्पुरुष ! तुम्हारा नाम क्या है ? महाबल बोला—राजन् ! मेरा नाम सिद्धराज है। राजा बोला—सिद्धराज ! कल से इस स्त्री ने जरा सा भी भोजन नही किया है अतः पहले

तुम जैसा रुचे वैसा भोजन कराओ।

राजा की आज्ञा होते ही राज-सेवकों ने तमाम सामग्री ला रक्खी। महाबल ने मलयासुन्दरी को भोजन कराया। सिद्धराज—राजन्! अब आप मुझे आज्ञा दें। अपने वचन का पालन करें। मैं अपनी स्त्री को साथ लेकर अपने देश को जाऊँ। राजा ने इस बात का कुछ भी उत्तर न दिया। उसके मौन का आशय समझ कर नगर के प्रधान नागरिकों ने भी उसे खूब समझाया। महाराज! अब यह इसकी स्त्री इसे दे देनी चाहिये। अपने वचन का पालन करके इन वेचारे दु:खियों को सुखी करना चाहिये।

विषयान्ध राजा को नगर निवासियों की बातें बिल्कुल न सुहाई। वह हित शिक्षा को बातें सुन उल्टा मन ही मन उन पर क्रोध करता हुआ कुछ देर सोच कर बोला—सिद्धराज! तुमने हमारा एक काम ओर भी करना मंजूर किया हुआ है। वह कार्य सिर्फ यही है कि हमारे मस्तिष्क में हमेशा दर्द हुआ करता है, शान्ति नही मिलती। वैद्यों का कथन है कि यदि कभी

कोई उत्तम लक्षणों वाला पुरुष मिल जाय तो उसे चिता में जीवित को जला कर और उस चिता की राख मस्तक पर लगाई जाय तो यह दर्द पूरी तरह मिट सकता है।

राजा कंदर्प के इन शब्दों को सुनकर महाबल विचार मे पड़ गया। सचमुच यह राजा मलयासुन्दरी पर आसक्त हो मुझे मारना चाहता है। इसीलिये इसने दुष्ट आशय से मुझसे पहले एक कार्य कराने का वचन ले लिया है। इसने मुझे खूब फँसाया! अगर मंजूर किया हुआ इसका यह कार्य मैं न करूँ, तो यह मलया-सुन्दरी को कदापि मुझे न सौपेगा, और इधर यह कार्य भी मृत्यु के मुख में गये बिना नही हो सकता। कुछ सोच कर धैर्य धारण कर वह बोला—राजन्! इस औषधि के सम्बन्ध में आपको कुछ भी चिंता न करनी चाहिये। यद्यपि यह औषधि प्राप्त करना बडा कठिन काम है तथापि मैं आपको यह दवा ला दूँगा। आप यह कार्य होने पर मेरी स्त्री को मुझे सौप देना।

दुष्ट परिणाम वाला राजा कुछ हँस कर बोला—

परोपकारी सिद्धराज ! यह आप क्या कहते हैं ? क्या मेरे वचन पर विश्वास नहीं है ? यह कार्य करने पर मै तुरन्त ही आपकी स्त्री को आपके सुपूर्द कर दूँगा। महाबल बोला—राजन् उत्तम लक्षण वाला पुरुष जल मरने के लिये और कहाँ मिल सकता है ? मैं खुद ही चिता में प्रवेश कर अपने मृतक की राख आपको ला दूँगा। आप स्मशान भूमि में बहुत सी लकड़ियाँ भिजवा दें। और चिता तैयार करा दे। महाबल की ये बाते सुन राजा कदर्प को बड़ी खुशी हुई। और उसने अनेक गाड़िया भरकर स्मशान भूमि में भिजवा दी। यह बात नगर मे फैलने से नागरिक लोगो में कोलाहल मच गया। वे आपस में बोलने लगे राजा का कितना अन्याय है ? बेचारे परदेशी पुरुष को जीवित जलाने का आग्रह कर रहा है, क्या कभी मनुष्य को राख लगाने से भी सिर के दर्द मिटे है ?



(३२)

जलती चिता में महाबल

महाबलकुमार अन्तिम अवस्था का वेश धारण कर सध्या समय स्मशान भूमि मे आया। अनेक राज-सुभट उसके चारो तरफ खड़े थे। दया दुःख और आश्चर्य से हजारों मनुष्य एकत्रित हो इस दुर्घटना को देख रहे थे। मलयासुन्दरो को भी यह बात मालूम हो गई अत. उसे बड़ा दुःख हुआ। वह अपने आप को धिक्कारने लगी और उसने यह प्रतिज्ञा कर ली कि जब तक मैं अपने प्राण-प्रिय पतिदेव के दर्शन न कर लूँ तब तक अन्न जल ग्रहण न करूँगी। महाबल का सौन्दर्य तेज और साहस देख उस पर प्रसन्न हुए प्रजा के अनेक प्रधान पुरुषों ने दु खित हो राजा के पास जाकर प्रार्थना की—राजन्! यह महान् अन्याय हो रहा

है, राख के बहाने से ऐसे निरपराधी परोपकारी उत्तम पुरुष को पशु के समान मार डालना यह बात किसी तरह भी योग्य नहीं है। ऐसा अन्याय करने की अपेक्षा उसे जीवित ही अपने देश को जाने देने की आज्ञा देना विशेष योग्य है। राजा बोला—प्रजाजनो! इस पुरुष के जीवित रहते हुए यह स्त्री तो मेरे सन्मुख भी नही देखती और इस स्त्री के बिना मेरे चित्त को शान्ति नही मिलती। मै इस तरह दोनों तरफ से संकट में पड़ा हूं। इसलिए मेरे पास तुम्हारे लिए कोई उत्तर नही।

राजा का जीवा नामक प्रधान बोला— भाइयों! इस बात में तुम्हे पड़ने की कोई आवश्यकता नहीं है। यदि सिद्धराज मरता है तो मरने दो। क्या उसके लिए हम राजा को सङ्कट में डालना चाहेंगे? मन्त्री के शव्द सुन निराश हो कर वे वापिस लौट गये, किंतु राजा और मन्त्री के प्रति उनके हृदय में घृणा और तिरस्कार के भाव पैदा हो गया।

स्मशान भूमि में एक स्थान पसन्द कर महाबल ने

राजपुरुषो को वहां पर चिता बनाने की आज्ञा दो। उन्होने शीघ्र ही वहां पर बहुत-सी लकड़ियां लगा कर खूब ऊँची चिता तैयार कर दो। महाबल चिता के बीच में बैठ गया और उसने अपने चारो ओर खूब लकड़ियां रख देने की सूचना कर दी। उस समय चिता के चारो ओर राजपुरुष इस आशय से कि कही वह चिता से निकल कर भाग न जाय बड़ी सावधानी पूर्वक पहरा दे रहे थे।

चिता तैयार होजाने पर उसमें आग लगा दी गई। यह देख लोगो के दिलो में भी दु खाग्नि जल उठी। चिता खूब जल उठने पर भी उसमें से महा-बल की आह तक नही सुनाई दी। इससे लोग उसके अदम्य साहस तथा धैर्य की सराहना करने लगे। जब चिता पूरी तरह जल चुकी तब राजपुरुषो ने वापिस आकर राजा को महाबल के चिता में भस्म होने का सारा वृत्तान्त कह सुनाया। उस रात को राजा कन्दर्प और जीवा मन्त्री के सिवा नगर के प्रायः सभी लोगो को सुख से निद्रा न आई।

प्रात:काल होने पर जब शहर में वहां के लोग महाबल के साहस और राजा के अन्याय की परस्पर बाते कर रहे थे, तभी लोगों ने अकस्मात् सिर पर एक छोटी-सी गठरी लिये हुए स्मशान भूमि की ओर से आ रहे सिद्धराज को देखा। उसे जीवित आते देख जनता के हृदय में आश्चर्य और आनन्द का पार न रहा! आश्चर्यचकित हो वे बोल उठे— धैर्यवान सत्-पुरुष! आप किस प्रकार जीवित रहे और इस गठड़ी में क्या लाये हो? सिद्धराज ने कहा— राजा के लिए उस चिता की राख ले कर आया हूँ। इतना ही कह कर वह महाबल राजमहल की तरफ चला गया।

राज्यसभा में राजा के समक्ष राख की गठड़ी रख कर सिद्धपुरुष ने कहा—राजन्! आपकी दुर्लभ औषधि यह उस चिता की राख है। अब आप अपनी इच्छानुसार जितनी जरूरत हो अपने मस्तक में डाले जिससे आपके मस्तक की व्याधि शान्त हो!

आश्चर्य प्रकट करता हुआ राजा बोला— सिद्ध-राज! तू चिता की अग्नि में जला नही? सिद्धराज

ने समयानुसार विचार कर उत्तर दिया—महाराज ! मैं चिता में जलकर भस्मीभूत हो गया था परन्तु मेरे सत्य के प्रभाव से वहां पर देव आ पहुँचे और उन्होंने चिता को अमृत से सिंचन किया। इससे मैं फिर से जीवित हो आया हूँ। इसलिये महाराज ! आप इस राख को ग्रहण करें, और अपने कहेनुसार वचन का पालन कर मेरी स्त्री मेरे सुपूर्द करदे।

यह सुन राजा विचारने लगा—सचमुच यह कोई महाधूर्त है। सुभटों की नजर बचाकर मालूम होता है यह चिता से बाहर निकल गया है। सिद्धराज के गुणानुरागी या कंदर्प की अनीति से राज-द्रोही बने हुए मनुष्यो ने मलयासुन्दरी को राख लेकर सिद्ध-पुरुष के जीवित आने की खबर दी। यह खबर पाते ही मलयासुन्दरी इस तरह विकसित हो गई जिस तरह रात भर की मुरझाई हुई कमलिनी प्रात.काल सूर्य के समागम से विकसित हो जाती है।

सिद्धराज राजसभा में राख की गठरी रख मिलनें के लिए उत्कंठित हुई मलयासुन्दरी के पास पहुँचा।

उसे देख मलयासुन्दरी हर्ष के साथ गद्गद् हो उठी ! वह बोली—प्राणनाथ ! चिता में प्रवेश करके भी आप किस तरह वापस आगये ?

महाबल ने कहा प्रिये ! मैं उस अन्धकूप में से जिस सुरंग के मुख द्वार से निकला था वहां पर मैंने चारों तरफ बड़ी चिता बनवाई थी और बीच में अपने बैठने के लिये जगह खाली रखवाई थी। चिता में प्रवेश करने के बाद जब चिता जलाई गई थी, तब मैं सुरंग द्वार की शिला को दूर करके उसमें अन्दर चला गया और अन्दर से फिर मैंने द्वार बन्द कर लिया। जब चिता जल कर ठंडी हो गई तब पिछली रात को मैं धीरे-धीरे द्वार के पास आया, और उसे खोल कर बाहर निकला, उस समय वहां पर कोई भी मनुष्य न था। इसलिये राख की गठरी बांध कर प्रातःकाल होते ही मैं यहा आगया।

इसप्रकार परस्पर जब वे बाते कर रहे थे तब राजा उनके पास आकर बोला—अरे भाई ! सिद्ध-राज ! इस बेचारी को कुछ भोजन तो कराओ। इसने

कल से बिल्कुल अन्न जल नही लिया है। सिद्धराज ने उसे भोजन कराया; फ़िर राजा से कहा–महाराज! मैंने आपका कार्य कर दिया है, अब आप अपना वचन पालन कीजिये, और अपनी स्त्री के साथ मुझे देश जाने को आज्ञा दीजिये।

यह सुनकर राजा घबराया, उसे कुछ भी उत्तर देते न बना। वह मलयासुन्दरी को कदापि महाबल को देना न चाहता था। परन्तु इस समय एक–दम वह इन्कार भी नही कर सकता था। इसलिये उसने अपने पास रहे हुए प्रधानमंत्री जीवा के सन्मुख देख सहज में इशारा किया।

मत्री ने कुछ देर विचार कर राजा की इच्छानु–सार महाबल से कहा सिद्धराज! आपने राजा का यह काम कर हम पर बड़ा उपकार किया है। आपके धैर्य और परोपकार की भावना को हम धन्यवाद देते है। परन्तु केवल एक काम आप राजा का और करदे फिर इच्छानुसार आप अपने देश को चले जाइये।

इस शहर के पास जो छिन्न–टंक नामक पहाड़ है

उसके एक विषम शिखर के पिछले हिस्से में निरन्तर फल देने वाला एक आम का वृक्ष है। पूर्व दिशा की ओर से उस शिखर की चोटी पर चढ़ा जा सकता है। क्योंकि अन्य किसी तरफ से इतना ऊँचे चढ़ने का कोई मार्ग नही है। उस शिखर की चोटी से नीचे की तरफ उस विषम खीरण में वह आम्र-वृक्ष नजर आता है। उसे लक्ष्य कर वहां कूदना और आम के पके फ़ल ले कर फिर उस विषम मार्ग से वापस आकर वे फल राजा को देना। सत्पुरुष ! यह काम यद्यपि बड़ा कठिन है, तथापि तुम्हारे जैसे साहसी युवक के लिए यह बनने योग्य है। हमारे राजा को सदैव पित्त की पीड़ा रहती है, और वैद्यों का कथन है कि आम के पके फल खाने से वह पित्त पीड़ा शान्त होगी।

प्रधान के ये शब्द सुन कर कुमार विचारने लगा कि यह आदेश मेरे लिये अति दुष्कर है। इसमें तो मेरी बुद्धि भी कुछ काम नही करती। इस कार्य में मेरे मृत्यु की भी संभावना है। तथापि किसी विधि—योग से यदि यह कठिन कार्य मुझ से हो गया तो मुझे

जीवन और स्त्री दोनों की प्राप्ति होगी। इसलिये इस कार्य को भी करने का मुझे प्रयत्न तो करना ही चाहिये। मेरे कार्यों से और राजा की अनीति से यहां की जनता का मुझ पर पूर्ण प्रेम है। यह भी मेरे विजय का चिह्न है। इत्यादि विचार कर साहस धारण कर महाबल बोला—मंत्रीवर ! मैं आपका यह कठिन काम भी अगर कर दूं तो आप बारबार अपने वचनों से अब न फिरना। यदि आप फिर भी वैसा ही करेंगे तो आप लोगो के हक में अच्छा परिणाम नहीं होगा। इतना कह महाबल अपने स्थान से उठ खड़ा हुआ।

संसार में साहस के द्वारा कठिन से कठिन कार्य भी सिद्ध होते है। साहसमें प्रबल प्रयत्न, उत्साह और अतुल पराक्रम की आवश्यकता है। साहसियो का अनेक मनुष्य आश्रय लेते है इसलिये साहस में अगाध शक्ति है।

इस बात का समाचार मलयासुन्दरी को भी मिल चुका था इसलिये उसके हृदय में अति दुःख होना

स्वाभाविक ही था। उसकी आँखों से आँसू टपकते देख कर भी महाबल धैर्य धारण कर छिन्नटंक नामक पहाड की तरफ चल पड़ा। साहसी लोग अपना स्वार्थ सिद्ध करने में विलंब नहीं किया करते। इस समय भी उसके प्रेम और सहानुभुति से महाबल के पीछे हजारो मनुष्य महाबल के पीछे पहाड़ की तरफ जा रहे थे। क्यों कि स्वामीप्रेम की अपेक्षा संसार में सदैव गुणों पर अधिक प्रेम होता है। महाबल मार्गदर्शक राजपुरुषों के साथ उस विषम पर्वत पर चढ़ गया। इस समय भी जनता के हृदय में शोक-सन्ताप और राजा तथा जीवा मन्त्री के हृदय में आनन्द छा रहा था। शिखर की सबसे ऊँची चोटी पर चढ़ कर राज-पुरुषों ने वहुत दूरी पर नीचे विषम स्थान में स्थित सकेत से एक आम का पेड़ वतलाया। महाबल ने उसको लक्ष्य कर नमस्कार महामन्त्र का स्मरण कर और 'इस जीवन में मैंने यदि कुछ न्यायपूर्वक शुभकर्म उपार्जन किया हो तो उसके प्रभाव से मेरा यह साहस सफल हो।' यो कह कर जनता के हाहाकार करते

मना करते हुए भी पर्वतशिखर पर से महाबल कूद गया। वह देखते ही देखते मनुष्यों की नजर से ओझल हो गया। अरे! कैसा अन्याय? राजा का कैसा घोर पाप? कैसी लम्पटता? निर्दोष मनुष्य को कैसी बेरहमी से बेमौत मार डाला! बेचारे उस सिद्धपुरुष की हड्डियो का चूर्ण बन गया होगा। मालूम होता है कि अब इस राजा का और राज्य का अन्त नजदीक आ गया है। क्या किया जाय? 'विनाश काले विपरीत बुद्धिः' भाइयो! अपने को भी सावधान रहना चाहिये, नही तो इस पापी राजा के पाप से कभी हम भी आफत में पड़ेगे। इत्यादि अमंगल-चिंता और राजा की निन्दा करते हुए सब लोग अपने-अपने घर आ गये। राजपुरुषो ने भी राजा के पास आ कर सब हकीकत कह सुनाई। राजा और मन्त्री ने निश्चय कर लिया कि बस इस बार तो सिद्धपुरुष जरूर ही खतम हो गया होगा।

प्रातःकाल होते ही पके हुए आम्रफलों से भरा एक करण्डिया सिर पर रखे हुए, प्रसन्नता धारण

किये हुए महाबलकुमार को जब नगर - निवासियों ने आते हुए देखा तब उनके हर्ष और विस्मय का पार न रहा। वे एकदम आश्चर्यचकित हो विचारने लगे। अहो ! कैसी विचित्रता ? यह कोई दिव्य पुरुष है या विद्याधर ! ऐसे-ऐसे मरणान्त सङ्कटों में भी पड़ कर यह राजा का कार्य सिद्ध कर लाता है। सचमुच ही इसका सिद्धराज नाम सार्थक है। मालूम होता है इस के कोई देवता वश में है। इसी कारण यह उस देव की सहायता से असम्भव कार्यों को भी कर गुजरता है। इत्यादि विचार करते हुए वे हर्षित हो दौड़ते हुए उसके पास आये और बोले—सत्पुरुष सिद्धराज! आप किस तरह वापिस आ गये ? आपके शरीर का कोई नुकसान तो नही हुआ ?

सिद्धराज बोला—महानुभावों ! आप इस वक्त मुझसे कोई सवाल मत पूछिये। कुछ देर बाद आपको सबकुछ मालूम हो जायगा। इस प्रकार उत्तर देते हुए महावल अनेक मनुष्यों के साथ राज्य - सभा में पहुँचा। वहुत-से मनुष्यों के साथ महाबल को राज-

सभा में आया देख कर राजा का चेहरा श्याह पड़ गया। वह उसके सामर्थ्य को देख कर कुछ भयभीत भी हो गया, इसलिए उसने महाबल का कुछ भी आदर सत्कार न किया। परन्तु राजा को मौन देख जीवा मंत्री बोला—सिद्ध पुरुष ! ऐसा दुष्कर कार्य कर के आप वहुत ही जल्दी आगये ! कहिये, आपके शरीर में तो कुशलता है न।

जी, हाँ मेरा शरीर कुशल है। यो कहते हुए महावल ने अपने सिर से आम के फलो का करंडिया उतारा। और जहां राजा व मंत्री बैठे थे वही उनके पास वह करंडिया रख दिया। महाबल बोला—राजन् ! इन पके हुए आम के फलो को खाकर आप अपने पित्त रोगों को शान्त कीजिये। उसके गम्भीर शब्द सुनकर और ऐसा विषम कार्य करने का सामर्थ्य देखकर सभासदों के दिल में भी कुछ भय पैदा हुआ। इस समय तमाम राज-सभा मौनावलम्बी हो महाबल के अतुल सामर्थ्य का विचार कर रही थी।

महाबल ने करंडिये का मुँह खोलकर उसमें से

दो-चार सुन्दर फल हाथ में ले लिये, और राजा से कहा—आप इसमें से फ़ल खाइये; मैं अपनी स्त्री से मिल आता हूं, यों कहके वह दुःखित हुई मलयासुन्दरी के पास आया। महाबल को पास आया देख मलया-सुन्दरी पूर्व के समान ही हर्षित हो उससे मिली। वह प्रसन्न मुख से बोली, प्राणप्यारे ! ऐसे कठिन कार्य में आपको किस तरह सफलता मिली ?

महाबल—प्यारी ! तुम्हें याद होगा पहले जो योगी मेरी सहायता से सुवर्ण-पुरुष सिद्ध करते हुए अग्नि-कुण्ड में गिर कर मर गया था, वह मर कर व्यन्तर देव हो गया। हमारे सद्भाग्य से वह उसी आम्र के वृक्ष पर ही रहता है। पर्वत शिखा की चोटी से झंपापात करते हुए उसने मुझे देखा और मेरे अंतिम शव्द सुने। उस व्यन्तर देव ने अपने ज्ञान से मुझे पह-चान लिया। जिस समय मैं झंपापात करके नीचे आम के वृक्ष के पास पहुँचा उस समय उसने मुझे नीचे न गिरने दिया और अधर ही धारण कर लिया। उसने प्रत्यक्ष होकर मुझसे कहा—परोपकारी राजकुमार !

आप जरा भी भय मत करना। पृथ्वीस्थानपुर के स्मशान में उत्तर साधक बन कर तुमने मुझपर उप-कार किया है; परन्तु मेरी किसी भूल के कारण सुवर्ण पुरुष सिद्ध न हुआ। मैं वहां से मरकर व्यन्तर देव की योनि में पैदा हुआ हूँ। इस समय मुझे तुम्हारे उपकार का बदला देने का अच्छा अवसर प्राप्त हुआ है। इत्यादि उसने मुझे सर्व वृत्तान्त कह सुनाया।

मैं निर्भय होकर उसके पास ही रहा। सचमुच ही किसी पर किया हुआ उपकार निरर्थक नहीं जाता। प्रात.काल होने पर व्यंतरदेव ने कहा—राजकुमार ! आप मेरे अतिथि है। घर आए हुए अतिथि का सत्कार करना ही चाहिये इसलिये आप फरमाइये, मैं आपका कौनसा इष्ट कार्य करके आपका स्वागत करूँ ? मैंने कहा 'कंदर्प राजा मुझे जो काम बतावे मैं उस काम को करने में शक्तिमान बनूँ आप मुझे इस तरह की सहायता करें।

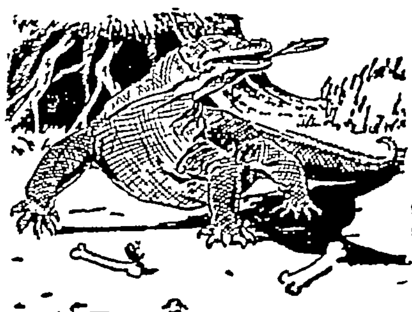
व्यंतर— कंदर्प राजा तो आपको मारना चाहता है इसलिये आपको सहमति हो तो मैं उसे पूरी शिक्षा

कर दूँ ।

मैंने कहा—आपकी सहायता से मैं उसका काम पूरा करूँ तथापि वह अपने दुष्ट अभिप्राय से बाज न आवे तो फिर आपको उचित लगे वैसा करें। व्यंतर-देव ने मेरी बात मजूर करली और कहा—यह तो मैं करूँगा ही परन्तु और भी कभी कोई असाध्य काम करना पड़े तो आप अवश्य ही मुझे याद करना। याद करते ही मैं आपकी सेवा में आकर आपकी इच्छानुसार सहायता करूँगा। यों कहकर वह किसी जगह से एक करंडिया ले आया और उसमें पके हुए सुन्दर फल भर कर करंडिये सहित वह मुझे इस शहर के उद्यान में ले आया।

व्यन्तर बोला—कुमार! इस करंडिये को लेकर तुम राजा के पास चलो, मैं भी अदृश्य होकर तुम्हारे साथ ही चलता हूं और वहां पर जैसा उचित होगा वैसा किया जायगा, यों कह कर वह अदृश्य हो गया। मैं फलों का करंडिया राज-सभा में रख कर इस समय तुम्हारे पास आया हूं। प्रिये! अब घबराने की

आवश्यकता नहीं है। मुझे विश्वास है इस देव की सहायता से अब हमारे सङ्कट शीघ्र ही दूर होंगे और अन्याइयों का निकट भविष्य में अवश्य ही अन्त होगा।



(३३)

पापियों का नाश और राज्य प्राप्ति

महाबल जिस समय अपनी प्रिया के साथ अपने दुःख सुख की बातें कर रहा था; उस समय राजसभा में रखे हुए उस आम के फ़लों के करंडिये से यह भयानक शब्द निकलने लगा 'राजा को खाऊँ या मंत्री को' करंडिये से बार-बार निकलते हुए इन भयानक शब्दों को सुनकर राजा भयभ्रान्त हो गया, और वह लोगों की तरफ देख कर बोला—सचमुच ही यह सिद्धराज कोई चमत्कारिक पुरुष मालूम होता है; अन्यथा ऐसे दुष्कर कार्य भी लीलामात्र में किस प्रकार कर पाता? सम्भव है हमारा सर्वनाश करने के लिए वह इस करं-

डिये में आम के फलों के बहाने कोई विभीषिका ले आया है।

इस प्रकार राजा को भयभीत हुआ देख जीवा मन्त्री हँसते हुए बोला—महाराज ! इस प्रकार डरने से काम न चलेगा। ऐसे तो बहुत-से धूर्त फिरते हैं। क्या हम इससे डर जायँगे ? यदि ऐसी छोटी - छोटी बातों से डरने लगे तो फिर राजकार्य कैसे चलेगा ? इस तरह कहते हुए प्रधान ने उठ कर करण्डिये की तरफ अपना हाथ बढ़ाया। राजा ने उसे बहुत मना किया कि—मन्त्री ! ठहरो; इस कार्य में हमें बल दिखाने की जरूरत नही है। तुम उस करण्डिये के पास मत जाओ। परन्तु **'विनाशकाले विपरीतबुद्धिः'** इस उक्ति के अनुसार राजा के मना करने पर भी मन्त्री करण्डिया के पास आकर जब उसका ढक्कन उठाने लगा तब फिर से मृत्यु की दुन्दुभी के समान वही शब्द सुनाई दिया— 'राजा को खाऊँ या मन्त्री को।'

इस भयानक आवाज को भी सुनी–अनसुनी कर

करण्डिया खोल कर आम्रफल लेने की इच्छा से मन्त्री ने जब उसके अन्दर हाथ डाला उस समय यमराजकी जीभ के समान उस करण्डिये से भयङ्कर अग्निज्वाला प्रकट हुई। इस भयंकर ज्वाला में जीवा मन्त्री पतंग के समान भस्मीभूत होगया। वह अग्निज्वाला इतनेसे ही शान्त न होकर उसने विकराल रूप धारण कर लिया। देखते ही देखते उसने ऊपर बढ़ कर सभा-मण्डप को भी भस्मीभूत कर दिया। सभा में भगदड़ मच गई। राजा डर के मारे कांपने लगा। मौत के भय से उसने शीघ्र ही सिद्धराज को बुलवाया। वहां इस समाचार से सारे नगर में हलचल-सी मच गई।

जीवा मन्त्री के मरने की, करण्डिये में से निकले हुए भयानक शब्द की और अग्निकाण्ड की हुई दुर्घ-टना के बारे बयान कर राजा ने नम्रतापूर्वक महाबल से कहा— हे सत्पुरुष सिद्धराज ! हम पर दया कर यह उपद्रव जल्दी शान्त करो। राजा की नम्र प्रार्थना से एवं उस अग्निज्वाला से किसी निर्दोष प्राणी के जानमाल को नुकसान न पहुँचे यह विचार कर सिद्ध-

राज ने पानी मँगवाकर मंत्र पढ़ कर उस करंडिये पर छिड़का। इससे महाबल की इच्छा के अधीन हुए, उस देव ने आग को शान्त करदी। महाबल ने उस करण्डिये पर फिरसे ढक्कन ढक दिया। फ़िर राज-सभा में पहले जैसी ही शान्ति हो गई।

परन्तु किसी भी मनुष्य की उस करण्डिये के पास जाने की हिम्मत न हुई। सबके दिल में यही विचार होता था कि इस भयंकर करण्डिये को यहां से उठवा दिया जाय। लोगो के यह विचार करते हुए महाबल ने फिर से उस करण्डिये को खोला और उसमें से दो-चार सुन्दर फल निकाल कर राजा को देने लगा परन्तु भयभीत हुए राजा ने उन फलों को लेने से इन्कार कर दिया। महाबल ने वही फल दूसरे मनुष्यों के हाथ में देकर यह निश्चय करा दिया कि अब उन फलों में किसी तरह का भय नहीं है। फिर अन्य पुरुष के द्वारा राजा ने उन फ़लों को ग्रहण किया। मन्त्री की मृत्यु से राजा को इतना दुःख हुआ मानो उसकी दाहिनी भुजा टूट गई हो। परन्तु उसकी मृत्यु में राजा और

मन्त्री का ही अन्याय होने के कारण उसके शोक में अन्य मनुष्यों की ओर से सहानुभूति तक भी न मिली। राजा ने उसी समय जीवा मन्त्री के पुत्र को मत्री का स्थान दे दिया।

कंदर्प—सिद्धराज ! तुम इस करंडिये मे ऐसो क्या भयानक चीज लाये थे, जिसने देखते ही देखते जरासी देर में अचानक हमारे मन्त्री जीवा को भस्मीभूत कर दिया।

सिद्ध०—राजन् ! यह तो आपके अन्याय वृक्ष का एक अकुर ही पैदा हुआ है, इसके बाद अब उसमें पुष्प फलो का लगना बाकी है, और उन फलों का स्वादानुभव आपको भी करना होगा। जो राजा न्यायपूर्वक प्रजा पालन करते है वे कदापि दुःखित नही होते, परंतु दुनिया में कीर्ति और अनेक प्रकार की सपत्ति को प्राप्त करते है। राजन् ! आप भी मेरी स्त्री सहित मुझको विदा कर यहाँ सुख से राज्य पालन कर सकते है। अन्यथा इसका परिणाम आपके लिये भयंकर होगा। यह सुन कर सामन्तादि राजमान्य पुरुषों ने राजा को

आग्रहपूर्वक समझाया, महाराज इस सत्पुरुष सिद्धराज का वचन मानो और इसकी स्त्री को दे कर इसे यहां से विदा करो, ऐसे समर्थ पुरुष को अन्याय के द्वारा प्रकोपित करना राज्य के लिये हितकर नही है ।

मलयासुन्दरी पर अत्यन्त आसक्ति रखने वाला कदर्प सोचने लगा—यह सिद्धराज सचमुच ही सामर्थ्यवान पुरुष है एवं मत्रादि भी जानता है । इसी कारण मैं जो भी काम बताता हूं वह लीला मात्र से कर लाता है । अब कौनसा ऐसा दुष्कर काम बतलाऊँ कि जिसके करने से यह मृत्यु को प्राप्त करे और मै सदा के लिए मलयासुन्दरी को प्राप्त कर सकूँ ।

इस प्रकार विचारो में डूबे हुए राजा को एक युक्ति मिल गई ! सिद्धराज को कहा—सिद्धराज ! तुम बड़े समर्थ और कला-कुशल हो मुझपर बहुत उपकार हो गया । तुम्हारे लिये इस जगत् में कोई भी काम असाध्य नही है । तुम चिंता न करो, तुम्हारी स्त्री तुम को सौप दूँगा । किन्तु मेरा एक काम और करना पड़ेगा । वह काम तुम जैसे पुरुष से ही हो सकता है ।

सिद्धराज—बताइये ऐसा क्या काम है ?

राजा—मैं इन नेत्रों से सामने रही हुई वस्तुओं को तो देखता ही हूं अर्थात् संसार के सभी प्राणी सामने रहे हुए पदार्थों को तो देखते ही हैं किन्तु तुम जैसे सिद्ध-पुरुष का समागम होने पर भी यदि मेरे में कोई विशेषता न आवे तो समागम से फायदा ही क्या ? इसलिये मेरी इच्छा है कि मैं शरीर का पिछला भाग एवं शरीर के पीछे रहे हुए पदार्थों को भी देख सकूँ ऐसा कुछ कर दो तो उसी समय तुम्हारी स्त्री तुमको सौप दूँगा।

सिद्धराज राजा की बदमाशी समझ गया। पाठकगण ! पापको भी हद होती है। सीमा उपरान्त का अन्याय दुःख, त्रास, उपसर्ग आदि होते हों तब निर्बल, अनाथ, दीन, मूर्ख, पागल मनुष्यों को भी रोष आए बिना नहीं रहता। सतानेवाला चाहे कितना भी शक्ति सम्पन्न क्यों न हो एक बार तो वे अपने दु.खो को दूर करने के लिये साहस कर ही लेते हैं। जानवरों को भी अधिक सताया जाय तो वह भी

सीगो का बल बताते है। महात्माओ को सहनशी-लता भी अन्याइयों के प्रति कभी विकराल रूप धारण कर लेती है। तब इस राजकुमार ने तो अबतक बहुत शान्ति रखी थी। शक्ति सम्पन्न होते हुए भी असह्य अन्याय को कहां तक बर्दाश्त किया जाय ?

राजा के प्रपंच भरे शब्दो को सुनते ही कुमार के क्रोध की सीमा न रही। कुमार मनमें सोचता है कि दुष्ट राजा बारबार ऐसा असंभव काम बताता ही रहता है और अपनी दुर्बुद्धि को नही छोड़ता है। फिर भी कुमार ने अपनी असाधारण धैर्यता से कहा कि राजन् ! कोई भी मनुष्य कुदरत के नियम विरुद्ध नही कर सकता है। बार-बार मुझे सताने से कोई लाभ नही है। शरीर का पिछला भाग देखने से आ-पको लाभ ही क्या है ? सिद्धराज के समझाने पर भी राजा ने अपना दुराग्रह नही छोड़ा। तब क्रोधावेश में आकर दांतों को पीसते हुए कुमार ने राजा की गर्दन पकड़ी और जोर से ऐसी घुमा दी कि राजा का मुख आगे था वह पीछे की तरफ हो गया।

सिद्धराज ने कहा— राजन् ! अब तो तुम्हारा इच्छित कार्य पूरा हो गया न ? अब तुम आनन्द से अपने शरीर का पिछला भाग देखते रहना । राजा की बेडोल आकृति देख कर नया प्रधान रोषपूर्वक बोलने लगा कि अरे धूर्त ! मेरे पिता जीवा मन्त्री को भी मार डाला और हमारे देखते-देखते राजा की भी यह स्थिति तुमने कर डाली अतः अभी ही मैं तुमको यमलोक पहुँचा देता हूं ।

नया प्रधान केवल बोलने मात्र का ही दम रखता था । क्यों कि सिद्धराज का सामर्थ्य साहस और तेज के सामने वह निस्तेज बन चुका था ।

राजा की इस दुर्दशा के समाचार जब अन्तःपुरमें पहुंचे तब रानियां भयभ्रान्त हो राजा के पास आई । राजा की करुणाजनक हालत और बेडोल आकृति देख कर सब रानियां करुणस्वर से रोने लगी । राजा की दुर्बुद्धि को वे भली भाँति जानती थी । रानियां समझ गई कि पापकर्मका ही यह फल मिला है । राजा को कुछ हितशिक्षा देना चाहती थी किन्तु इससमय कुछ

बोलना अनुचित समझ कर सिद्धराज के कोप को शान्त करने के लिए दसों अंगुलियां मुंह में डाले वे सब सिद्धराज के पैरों में गिर कर दीन स्वर से कहने लगी— हे उत्तम पुरुष ! कोप को शान्त करो और हम अबलाओं पर रहम करके पति-भिक्षा देकर राजा को पहले के समान बना दो। हम आपका उपकार कभी नही भूलेंगी।

सिद्धपुरुष ने सोचा कि नगरजन यह स्थिति न देखे और नागरिकों द्वारा राजा का तिरस्कार न हो तब तक राजा अपने दुष्कर्मों से बाज नही आयगा। सिद्धराज ने कहा—दुःखी माताओ ! यद्यपि राजा अब दया का पात्र नही रहा है फिर भी तुम्हें दुःखी देख कर एक उपाय बतलाता हूं। इस शहर के बाहर अजितनाथ भगवान का एक जैन मन्दिर है वहां पर यदि यह राजा पैदल चलकर भगवान् के दर्शन कर आवे तो पहले के समान हो सकता है। इसके सिवा दूसरा कोई उपाय नहीं है।

सिद्धराज द्वारा उपाय सुनते ही राजा अजितनाथ

भगवान् के दर्शनार्थ जाने को तय्यार हो गया। सब परिवार के साथ मध्य बाजार में होकर राजा चलने लगा। रास्ते में हजारों मनुष्य इस कौतुहल को देखने के लिए जमा हो गये थे। कोई झरोखों में से देख रहे थे व कई मकानों की छत पर खड़े रह यह नजारा देख रहे थे। सारे शहर में कौतुहल हो रहा था और लोग मन ही मन राजा को धिक्कार रहे थे। राजा खूब शरमिन्दा हो रहा था परन्तु क्या किया जाय अन्य कोई उपाय ही नहीं था। मुख पिछली तरफ और पैर सामने। इस प्रकार बेडोल आकृति से राजा चला जा रहा था। आंखे पीछे होने के कारण कदम-कदम पर राजा स्खलना पाता हुआ जा रहा था। कहीं - कही गिर भी जाता था। इस प्रकार बड़े कष्ट से राजा नगर के बाहर अजितनाथ भगवान् के मन्दिर तक पहुँचा। भगवान के दर्शन करके उसी हालत में वापिस राजमहल पहुँच गया।

हज़ारों मनुष्यों से तिरस्कार पाये हुए राजा को सिद्धराज ने अपने वचनानुसार पूर्ववत् बना दिया।

सिद्धराज की अपूर्व शान्ति देख कर सब रानियाँ वड़ी प्रसन्न हुई। मुक्तकण्ठ से सिद्धराज का उपकार मानती हुई प्रशंसा करने लगी। रानियों ने कहा—उपकारी सिद्धराज! आपने हमारे ऊपर वड़ा भारी उपकार किया है। हम आपको क्या भेट करें? आपको जो चाहिये वह मांग लो।

सिद्धराज ने कहा—मुझे और कुछ भी नही चाहिये, मेरी स्त्री राजा के पास है, वह मुझे दिलवा दो। मलयासुन्दरी को दे देने के लिए रानियों ने राजा को वहुत कहा, और समझाया किन्तु पत्थर के ऊपर पानी डालने के समान रानियों के सब प्रयत्न निष्फल गये। रानिया लज्जित होकर सोचती है कि "**विनाश काले विपरीत बुद्धिः!**" जैसा हो रहा है। इतना हो जाने पर भी राजा अपनी पापबुद्धि से पीछे नही हटा, उल्टा राजा यह सोच रहा है कि अब मलयासुन्दरी को कैसे प्राप्त करूँ?

राजा यह विचार कर ही रहा था, कि उतने में अकस्मात् राजा की अश्व-शाला मे आग लग गई।

देखते ही देखते वह आग इतना जोर पकड़ गई कि उसकी भयंकर ज्वालाएँ आकाश को स्पर्श करने लगी। यह देखकर राजा बोला परोपकारी सिद्धराज ! बस अब मेरा यही एक कार्य करदो। इस जलती हुई अश्व-शाला में मेरा अश्व रत्न जल रहा है। उसे बाहर निकाल लाओ। फिर मैं तुम्हारी स्त्री को तुम्हे सौंपकर आज ही तुमको विदा कर दूँगा।

यह सुन कर जनता में खलबली मच गई। वे एक दूसरे को तरफ इशारा कर कहने लगे। देखो, इतना होने पर भी राजा अपना विचार नहीं छोड़ता। मालूम होता है इस चमत्कारी पुरुष को क्रोधित कर राजा इसीसे अपना सर्वनाश करायेगा। सिद्ध-पुरुष की सहनशीलता और राजा की निर्लज्जता पराकाष्टा तक पहुँच चुकी है। क्या अब भी इसके पापों का घड़ा नहीं भरा ? महाबलकुमार के मनमें भी विचार-परिवर्तन हो गया था। वह अब दुःखित होकर पापी को किसी भी तरह उसके पापो की सजा देना चाहता था। अतः व्यन्तर देव को स्मरण कर साहस पूर्वक वह उस

अग्नि में प्रवेश कर गया। इस समय राजा को संतोष हुआ, परन्तु प्रजामें बड़ा शोक छागया। परन्तु वह हर्ष, शोक बहुत देर न टिक सका। अल्प समय में सिद्ध–राज अग्नि से बाहर निकल आया। वह घोड़े पर सवार था। उसके चेहरे पर इस समय अधिक तेज झलक रहा था। दिव्य वस्त्र और सुन्दर कीमती अलङ्कारों से उसका शरीर सुशोभित था। वह आते ही आश्चर्य पाये हुए लोगों से बोला—महाराज और अन्य सज्जनों! इस समय जो अग्नि प्रज्ज्वलित हो रही है, यह बहुत ही पवित्र है। एवं जिस जगह यह दिव्य अग्नि प्रकट हुई है वह जगह भी मनोवांछित फल को देनेवालो है। उस जगह जाने से मेरे जैसी दिव्य–स्थिति प्राप्त होती है। और एक सुन्दर घोड़ा मिलता है। अब से हम दोनों को किसी भी समय रोग, जरा या मृत्यु पराभव न कर सकेगी। यदि इस समय कोई भी मनुष्य अपना इच्छित कार्य मन में धारण कर इस अग्नि में प्रवेश करेगा, तो वह मेरे ही समान दिव्य–रूपधारी होकर निकलेगा।

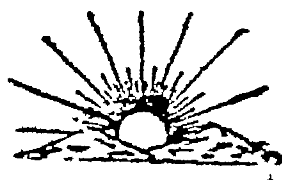
सिद्धराज का बना हुआ प्रत्यक्ष दिव्य-रूप देख, वैसा ही बनने के अर्थी और मनोवांछित सुख के इच्छुक राजा आदि अनेक पुरुष अग्नि में प्रवेश करने के लिए तैयार हो गये। सिद्धराज बोला—सज्जनों ! आप जरासी देर धीरज रखें, यह दिव्य अग्नि सचमुच ही तीर्थ भूमि जैसा है इसलिये मैं पहले इसकी पूजा करलूँ यो कह कर सिद्धराज ने घी व प्रमुख अनेक पदार्थ मँगवाये और मन्त्रोच्चार पूर्वक मंद पड़ी हुई अग्नि मे उन पदार्थों का होम कर उसे विशेष प्रदीप्त किया अग्नि का पूजन होने के बाद, पहले हम प्रवेश करते हैं, इत्यादि कथन पूर्वक सिद्धराज की माया-जाल में भरमाये हुए राजा और मन्त्री ने इच्छित सुख प्राप्त करने के संकल्प से अग्नि में प्रवेश किया। राजा के समान प्रबल इच्छा वाले अनेक राज--पुरुष राजा के पीछे जाने लगे परन्तु राजा और मन्त्री को वापस आने दो फिर जाना यो कह कर सिद्धराज ने उन्हें वहां ही रोक लिया। महाबल के आदेश से वे सब वही खड़े रहे, क्योंकि देखे हुए गुणों से महाबल पर तमाम

प्रजा के हृदय में पूर्ण प्रेम और भक्ति भाव था। राजा और मन्त्री को बहुत देर होगई परन्तु वे वापस न लोटे तब राजपुरुष बोले—क्या बात है? इतनी देर होने पर भी महाराज और मन्त्रीजी वापस नही आये?

महाबल—क्या कभी अग्नि में गया हुआ भी कोई वापस आया है? मैं तो व्यतरदेव की सहायता से अग्नि में न जलकर बाहर निकल आया। यह सुन कर जनता समझ गई कि राजा और पुत्र सहित मन्त्री के पाप का घड़ा फूट गया। सिद्धराज ने अच्छे उपाय से बदला लिया। ऐसे प्रत्यक्ष में अन्याय के कारण राजा आदि के मृत्यु के शोक में प्रजा के किसी भी मनुष्य ने शोक-सहानुभूति नही बतलाई।

राजा की मृत्यु से समस्त राजकीय प्रधान पुरुष मिल कर विचारने लगे कि अब राज्य की क्या व्यवस्था करनी चाहिये? राजा के एक भी ऐसा लायक पुत्र नही जो राज्य की धुरा को धारण कर सके। अधिकतर जनता की राय सिद्धराज को ही राज्यभार

सौपने की हुई । प्रजा बहुमत से बोली— सिद्धराज सब प्रकार से राज्यभार सहन करने में समर्थ है । वह गुणवान तथा सामर्थ्यवान है इतना ही नहीं बल्कि कोई देवता भी उसका सहायक है । ऐसा पुरुष राज्य के लिए मिलना असम्भव है । प्रजा के मत के साथ सबकी सहानुभूति होने से बड़े समारोह के साथ महाबल का राज्याभिषेक किया गया । मलयासुन्दरी को पटरानी का पद दिया गया । महा संकटों में पला हुआ उसका शीलव्रत भी सफ़ल हो गया । अपने दुःखों का अन्त कर महाबल भी सुख से प्रजा का पालन करने लगा । उसने अपने सद्गुणों से व न्यायनिष्ठता से प्रजा को विशेष रंजित व सुखी किया । अपने प्रचंड वाहुवल से शत्रु-राजाओं को भी थोड़े ही समय में उसने परास्त कर वश कर लिया । यहां पर महाबल सिद्धराज के ही नाम से प्रसिद्ध हुआ ।



(३४)

स्वजन-मिलाप

इधर बलसार्थवाह देशान्तरों से व्यापार द्वारा बहुत-सा द्रव्य का लाभ प्राप्त कर बड़ी ऋद्धि-सिद्धि के साथ इतने दिनों के बाद सागरतिलक बन्दरगाह पर आ पहुँचा। क्यो कि वह वहां का ही रहने वाला था। देशावर से लाये हुए माल से भरे जहाजों को बन्दरगाह पर ठहरा कर पुराने रीति-रिवाज के अनुसार वह बहुतसी उत्तम भेट लेकर राजसभा मे सिद्धराज से मिलने के लिये आया। राजसभा में सिद्धराज के सन्मुख भेट रख और नमस्कार कर वह हाथ जोड़ कर खड़ा रहा। इस समय महारानी मलयासुन्दरी भी राजा महाबल के साथ ही सभा में बैठी थी। उसे देखते ही भय से सार्थवाह का हृदय कांप गया क्योंकि

उसने मलयासुन्दरी की कदर्थना करने में कुछभी बाकी न रखा था। भय से व्याकुल हुआ बलसार सार्थवाह किसी कार्य के बहाने से शीघ्र ही राजसभा से बाहर निकल कर अपने घर पहुँचा। वह घर आकर सोचने लगा— इस औरत को मैंने बर्बर द्वीप में ले जा कर बेच दिया था। यह किस प्रकार वहां से आई होगी और किस प्रकार यहां आकर इसने राजा से अपना सम्बन्ध बनाया होगा ? मैंने जो इसकी कदर्थनाएँ की है यदि यह उन सब बातों को राजा से कह देगी तो अवश्य ही राजा मुझे प्राणदण्ड दिये बिना न रहेगा।

इधर मलयासुन्दरी पुत्र-वियोग से अत्यन्त दु:ख पा रही थी। इसलिए ऐसे सुख में भी वह अपने पुत्र का हरण करने वाले दुष्ट-प्रकृति बलसार के बाहर चले जाने पर उसने तुरन्त ही महाबल से कहा— स्वामिन् ! यही वह बलसार सार्थवाह है, जिसने मुझे अत्यन्त कष्ट दिये और मेरे पुत्र को छीन लिया है। मलयासुन्दरी के वचन सुनते ही राजा के शरीर में क्रोधाग्नि की ज्वाला धधक उठी।

वह बोला—इसी दुष्ट सार्थवाह ने निर्दोष और निष्कारण मेरी स्त्री की कदर्थना की है ? अरे सुभटो ! क्या देखते हो ? जल्दी जाओ। इस दुष्टात्मा बलसार को कुटुम्ब सहित बांध लाओ और इसका तमाम माल जप्त करलो। राजा की आज्ञा होते ही सकुटुम्ब बलसार को गिरफ्तार कर लिया गया। और उसका सब माल भी जप्त किया गया। राजा सिद्धराज ने सार्थवाह को लड़का ला देने को कहा, परन्तु उसने कुछ भी उत्तर न दिया। राजा ने उसका अपराध मालूम कर उसे सकुटुम्ब कैद कर लिया।

कैद में पड़ा हुआ सार्थवाह विचार करता है—मेरे ही किये कर्म आज उदय हुए है। इस राजा के पंजे से निकलना बिल्कुल असम्भवित सा मालूम होता है, तथापि एक उपाय है। यदि वह उपाय सफल हो गया तो मेरी जान माल की कुशलता सम्भव है, और उपाय यह है कि इस राजा का चन्द्रावती नरेश वीरधवल कट्टर दुश्मन है। उसके साथ मेरा विशेष परिचय भी है। वह राजा इस सिद्धराज को पराजय कर मुझे छुड़ा

सकता है। इस राजा ने मेरी सम्पत्ति जप्त करली है। तथापि इसे मेरी गुप्त सम्पत्ति का पता नही है। इसलिये उस में से आठ लाख स्वर्ण मोहरें और द्वीपान्तर से लाये हुए लक्षण सम्पन्न आठ हाथी अपना छुटकारा पाने की एवज में चंद्रावती नरेश वीरधवल को भेजूँ तो ठीक है।

इस प्रकार का संकल्प कर कैद में रहते हुए भी उसने अपने विश्वासपात्र सोमचन्द्र नामक एक वणिक को गुप्त संकेत से यह बात मालूम की, कि मेरे गुप्त खजाने में से आठ लाख स्वर्ण मोहरें लेकर चंद्रावती नरेश महाराज वीरधवल को मेरी सहायता के लिये बुला लाओ।

सोमचन्द्र बलसार की आज्ञानुसार आठ लाख स्वर्ण मोहरे ले वीरधवल राजा को बुलाने के लिए चल पड़ा। जब वह रास्ते में रौद्र-अटवी में पहुँचा तब उसे चंद्रावती नरेश वीरधवल और पृथ्वीस्थानपुर के राजा-सूरपाल प्रबल सैन्य सहित वहां ही सन्मुख मिल गये।

इन दोनों राजाओं को यह खबर मिली थी कि रौद्रअटवी में दुर्गतिलक नामक पहाड़ पर भीम नामक एक पल्ली-पति रहता है, उसके पास मलयासुन्दरी है। यह खबर मिलते ही पुत्र-पुत्री के वियोगी दोनों राजाओं ने अपने-अपने राज्य से प्रबल सैन्य ले भीम पल्लीपति को जीत कर मलयासुन्दरी को छुड़वाने के लिए चढाई की थी। दुर्जय पल्लीपति को तो उन्होंने अगणित सैन्य-बल से लीला मात्र में जीत लिया; परन्तु तलाश करने पर भी वहां पर मलयासुन्दरी का पता न लगा।

निराश होकर दोनों राजा अपने नगर को वापिस लौट रहे थे, इसी समय रास्तेमें उन्हे सोमचंद्र मिला। उसने बलसार का कहा हुआ सविस्तार संदेश राजा वीरधवल के समक्ष कह सुनाया। और साथ में लाई हुई आठ लाख स्वर्ण मुद्राएँ भेंट के बतौर राजा के सामने रख दी। राजा वीरधवल ने आठ लाख मोहरों में से आधा धन महाराज सूरपाल को देकर सिद्धराज को पराजित कर बलसार को छुड़ाने की सम्मति दी। महाराज सूरपाल ने भी लोभ के वश हो राजा वीर-

धवल के विचारो से सहानुभूति प्रकट की। महाराजा सूरपाल बोले—सागरतिलक नरेश के साथ तो हमारा वंशपरंपरा से वैर भाव चला आरहा है। चलो यह अवसर ठीक है। उसे पराजित कर उसका राज्य व सारी सम्पत्ति ग्रहण करेंगे।

सिद्धराज कौन है ? और उसने किसलिये इतने बड़े व्यापारी बलसार को कैद किया ? इस बात से वे दोनों ही राजा अनजान थे। इसी तरह यह मुझे कैद करने वाला सिद्धराज कौन है, और मलयासुन्दरी का राजा वीरधवल के साथ क्या सम्बन्ध है ? इस विषय में बलसार भी बिल्कुल अनजान था। अज्ञानता के कारण दोनो राजा अगणित सैन्य ले सिद्धराज पर चढ आए। सागरतिलक शहर के नजदीक आकर उन्होने अपनी अनुकूलता देख एक छोटी सी पहाड़ी पर पड़ाव डाला।

इतना बड़ा सैन्य अपने राज्य पर चढ़ाई करके आया है। किन्तु यह राजा निर्भय क्यों मालूम होता है ? युद्ध की तय्यारी क्यों नही करता है ? इस

प्रकार तर्क-वितर्क करते हुए दोनों राजाओ ने शिक्षा देकर एक दूत को सिद्धराज के पास भेज दिया।

सिद्धराज की राजसभा में आकर नमस्कार कर दूत बोला—राजन् ! पृथ्वीस्थानपुर से महाराज सूर-पाल तथा चद्रावती से महाराज वीरधवल अपना सैन्य लेकर यहां आये हुए हैं। वे आपको मालूम कराते है कि आपने जो बलसार व्यापारी को कैद किया है वह हमारा मित्र है, हम उसकी कदापि उपेक्षा नही कर सकते ! इसलिये यदि आप अपना भला चाहते है तो उसका सत्कार कर उसे छोड़ दे। अगर उसने आपका कुछ अपराध भी किया हो तथापि आप उसका एक अपराध सहन कर ले। राजन् ! आप स्वय यद्यपि शूरवीर है तथापि आपके पास सैन्यबल बिल्कुल कम है। हमारे राजाओं के पास असख्य सेनाबल है अत. आपको इन तमाम बातों पर विचार कर हमारे स्वमी की आज्ञानुसार बलसार सार्थवाह को छोड़ देना चा-हिये। अगर आपको यह बात मंजूर न हो तो हमारे राजाओं का अन्तिम संदेश है कि आप युद्ध के लिये

तैयार हो जावे। वे आपसे बल-पूर्वक बलसार को छुड़ाएँगे और आप को भी शिक्षा करेंगे।

सिद्धराज ने उस दूत के वचन शान्ति पूर्वक सुने और वह अपने पिता और श्वसुर को सन्मुख आया जान कर बहुत ही खुश हुआ परन्तु कुछ सोच विचार कर वह बनावटी क्रोध धारण कर दूत से बोला तुम्हारे दोनों स्वामी बहुत बड़ी सेना लेकर आए हैं तो हम क्या चूड़ियां पहन कर बैठे है? या हमारे भुजाएँ नही हैं? क्या हमें मिट्टी के पुतले समझ रखा है? तुम्हारे स्वामी क्या यह नही जानते कि अकेला ही सूर्य असख्य ताराओं के तेज को नष्ट कर डालता है? एक ही केशरी अनेक मदोन्मत्त हाथियों के मद को ठण्डा कर देता है, क्या वे इस बात को भूल गये है? बलसार बड़ा व्यापारी होने से तुम्हारे राजाओं का मित्र है इससे हमें क्या? बड़ा हो या छोटा, अपराधी मनुष्य शिक्षा का पात्र बनता है। सज्जनों का सन्मान करना और दुर्जन अपराधियों को दण्ड देना यह न्यायवान राजाओं का कर्त्तव्य है। बलसार

गुनाहगार है, अपराधी है इसलिए उसे उचित दण्ड द्वारा शिक्षा देना न्यायसंगत है, अन्याय नहीं। तुम्हारे स्वामी अपराधी का पक्ष ले कर आये है। इसलिए मैं उनसे बिल्कुल नही डरता। तुम्हें याद रखना चाहिये कि उल्लू को आश्रय देने वाले अन्धकार की सूर्य के उदय होने पर जो दशा होती है वही दशा अन्यायी को आश्रय देने वाले की भी होगी। इतने नीतिनिपुण राजा होने पर भी अपराधी का पक्ष लेकर मुझ पर इतनी बड़ी सेना ले चढ़ाई करते हुए तुम्हारे स्वामियों को तनिक भी लज्जा का अनुभव नही हुआ ? अन्याय की पुष्टि करने वाले चाहे जैसे भी बलवान हों युद्धभूमि में मेरे सामने टिक नही सकते। जाओ दूत ! तुम अपने स्वामियो को भी मेरा यह अन्तिम संदेश सुना दो कि वे युद्ध की तैयारी करें रणभूमि में उनकी समस्त इच्छाएँ मेरी यह तलवार पूर्ण करेगी।

सिद्धराज के वचन सुन कर दूत भी स्तब्ध-सा रह गया। वह सिद्धराज को नमस्कार कर वहां से

चला गया। उसने राजा सूरपाल और वीरधवल से जाकर सिद्धराज का सारा समाचार कह सुनाया। उन्हें युद्ध के लिये तैयार होने की सूचना दी। महाराज सूरपाल और वीरधवल की आज्ञा से उनकी सेना में समर की तैयारियाँ होने लगी।

इधर राजा महाबल राजसभा में से उठ कर राज महल में गया। उसने बलसार को छुड़ाने के लिए अपने पिता और श्वसुर के आने का शुभ समाचार रानी मलयासुन्दरी को सुनाया।

अपने पिता और श्वसुर के आने की खबर सुन कर मलयासुन्दरी को अत्यंत आनन्द हुआ। महाबल बोला—प्रिये ऐसी परिस्थिति में सग्राम किये बिना पिताजी और श्वसुरजी से यों ही जा मिलना मुझे उचित मालूम नही होता। मैं यह समझता हूं कि पूज्य पिताजी और पितातुल्य श्वसुरजी के सन्मुख युद्ध करना ठीक नही है तथापि संग्राम करने की भावना से आए हुए होने के कारण उनके सामने जाकर 'मैं आपका पुत्र हूं! या मैं आपका जमाई हूं!,यों कहकर

दीनतासे मिलना क्षत्रिय पुरुषों के लिए अपमान कारक है। इसलिये संग्राम में कुछ हाथ बतला कर फिर पिताजी और श्वसुरजी से मिलना अधिक प्रेम और आनन्द-दायक होगा। तुम यहां रहकर निश्चिन्त हो महल के ऊपर से युद्ध देखना। मलयासुन्दरी को यों कह कर महाबल राज-महल से बाहर चला गया।

दोनो सेनाओं में संग्राम की तय्यारी हो रही है। अपने मालिक की आज्ञा पाकर वीरता में मत्त हो योद्धाओ में उत्साह भर रहा है। सिद्धराज स्वयं सेना–पति बनकर सैन्य संचालन करेगे यह जानकर वीर सुभटो के उत्साह का पार न रहा। आज उन्हें प्रथम ही अवसर मिलेगा जब कि वे अपने नवीन राजा सिद्ध-राज को स्वय शत्रु सेना से लड़ता देखेगे।

उधर विपुल शत्रु सेना देख कायर मनुष्यों का हृदय कांपता था। इधर मुट्ठीभर सुभटों को देख सारा शहर चितासागर में डूब रहा था। दोनों महाशक्ति-शाली राजाओं की असंख्य सेना के सामने सिद्धराज का साहस देख लोगों को उसके पूर्वकृत चमत्कार युक्त

कामों से विश्वास होता था कि वह जिस काम में हाथ डालता है उसे पूरा करके छोड़ता है। इस समय जो उसने अतुल सेना का सामना करना मंजूर किया है तो अवश्य ही कुछ सोच समझ कर ही किया होगा।

सामने शत्रु-सेना युद्ध के लिये तैयार खड़ी है। एक तरफ काले पहाड़ों के समान हाथियों की पंक्ति लगी खड़ी है। सशस्त्र सेनिक उत्साह पूर्वक शत्रु के आक्रमण की राह देख रहे है। घोड़े हिनहिनाहट कर रहे हैं। संग्राम के बाजे बज रहे है। सिद्धराज के सेनिकों में भी युद्ध का अदमनीय उत्साह भरा था। वे सिद्धराज जैसे सेनापति की अध्यक्षता में यमराज से भी युद्ध करने को उत्सुक थे। रण-रंग हाथी पर बैठ और अपनी अदम्य उत्साह वाली छोटी सी सेना को साथ ले महाबल शत्रु सेना के सामने आ पहुँचा। दोनों सेनाओं में मुठभेड़ हो गई। भयंकर युद्ध छिड़ गया। समर-भूमि की उड़ी हुई धूल से आकाश में बादल-से छा गये। उस भीषण संग्राम में तलवारों की

चमक बिजली की भांति मालूम होती थी।

सिद्धराज को आगे बढ़ा देख विश्वालंकार हाथी पर बैठ कर राजा सूरपाल और सग्रामतिलक नामक गज की सवारी कर राजा वीरधवल आगे आकर जी-तोड़ कर लड़ने लगे। अपने स्वामियों को आगे बढ़ते देख दोनों सेनाएँ सिद्धराज की सेना पर टूट पड़ी। हाथी वालो के साथ हाथी वालों, घुड़ सवारों के साथ घुड़ सवारों और पैदल जवानो के साथ पैदल जवानों में घमासान लड़ाई मच गई। अनेक सुभटो के रुंड-मुंड कट कर जमीन पर पड़ने लगे।

इतने में सिद्धराज की सेना का संगठन एकाएक टूट जाने से उसमें भगदड़ सी मच गई। उसके सै-निक परास्त होकर रणभूमि से भागने लगे। अपने सैनिको को भागते देख अपने वशवर्त्ती देव को याद किया। स्मरण करते ही व्यंतरदेव वहाँ पर आ पहुं-चा। "मैं आपकी इच्छित सहायता करूँगा" ऐसा कहकर वह देव उसकी मदद करने लगा। सिद्धराज ने अपने सैन्य का उत्साह बढाया और वह अपने हाथी

पर से सामने की सेना पर विषम बाण-वर्षा करने लगा। सिद्धराज का एक भी बाण खाली नहीं जाता था और देव सहायता के कारण सामने से आनेवाले बाण निष्फल होते थे। व्यंतरदेव रास्ते में ही आते हुए शत्रु-सेना के बाणों को ग्रहण कर लेता था और वही बाण को लाकर महाबल को देता जाता था।

बहुत देर तक इसी प्रकार लड़ाई चलती रहने से अब सामने वाली सेना का संगठन टूट गया। बड़े-बड़े शूरवीरों का हौसला परास्त हो गया। इतनी विपुल सेना को छिन्न-भिन्न होती देख दोनों राजाओं के होश गुम होने लगे। जिस तरह तेजस्वी गुरु और शुक्र को चंद्रमा निस्तेज कर डालता है उसी तरह अकेले महा-बल ने अपनी दिव्य सहायता वाली बाण वृष्टि से दोनों राजाओं को निस्तेज कर दिया। महाबल के शस्त्राघात से उनके हाथ से शस्त्र छूट कर जमीन पर गिरने लगे। अब वे लज्जा से अधोमुख हो चिन्तातुर होकर सोचने लगे—अहो! कैसा आश्चर्य! ये मुट्ठी

भर सैनिकों को साथ लेकर सिद्धराज अकेला ही कैसा पराक्रम बतला रहा है ? धन्य है ऐसे वीर योद्धा को। हे प्रभो ! आज इस दुर्दमनीय महायोद्धा सिद्धराज के सामने किस तरह हमारी लज्जा रहेगी।

अपने पिता और श्वसुर को युद्धक्षेत्र मे पराजित होने के कारण चिन्तित देखकर महाबल ने व्यंतरदेव को कुछ सूचना कर प्रथम से लिखा हुआ पत्र बाण के अग्रभाग में रखकर वह बाण अपने पिता राजा सूरपाल के सामने फेंका। दिव्य प्रभाव वाला सिद्धराज का छोड़ा हुआ बाण राजा सूरपाल को तीन वार प्रदक्षिणा पूर्वक नमस्कार कर तमाम मनुष्यों को आश्चर्य चकित करता हुआ राजा के सामने आ पड़ा दोनों राजा आश्चर्य पाते हुए उस बाण के पास आये और उसके अग्र भाग पर चिपकाये हुए पत्र को महाराज सूरपाल ने उठा लिया। पत्र को देख तमाम सैनिकों को बड़ा आश्चर्य हुआ। मन्त्री वगैरह सेना के तमाम प्रधान पुरुष उस पत्र को सुनने के लिए उत्सुकता पूर्वक महाराज सूरपाल के पास आ कर खड़े

हुए। महाराज सूरपाल ने भी उस पत्र को खोल कर सबके समक्ष उच्च स्वर में पढ़ना शुरू किया।

श्रीमान्, वीर शिरोमणि, रणांगण भूमि में स्थित पूज्य पिता श्री महाराज सूरपाल नरेन्द्र के चरणारविंदों में तथा श्रीमान् चंद्रावती नरेश, महाराज वीरधवल के चरण कमलों में, आपश्री के सन्मुख समरभूमि में स्थित महाबलकुमार आप सबको नमस्कार पूर्वक प्रार्थना करता है कि आपकी असीम कृपा और आशीर्वाद से मुझे इस राज्य का पूर्ण अधिकार प्राप्त हुआ है। पूज्य पिताश्री के प्रमोदार्थ आपके समक्ष जो मैंने अपनी भुजबल का प्रदर्शन किया है और उसमें जो आप पूज्यों का पराभव, अवज्ञा और अपराध हुआ हो तो आप कृपा कर इस बालक को क्षमा करे। पूज्य पिताश्री के दर्शनार्थ मैं स्वयं प्रबल उत्कंठित हो रहा था, इतने ही में पुण्योदय से अकस्मात् पूज्यों के पवित्र दर्शन प्राप्त हए है, इसलिये इस अद्वितीय हर्ष के स्थान पर आपश्री शोक-सागर में क्यों गोते लगा रहे है ?

पत्र पढ़ते ही सारी सेना मे हर्ष-ध्वनि होने लगी।

राजा सूरपाल और वीरधवल के जिस हृदय में कुछ ही देर पहले चिन्ता और शोक ने स्थान प्राप्त किया हुआ था वही हृदय अब हर्ष और प्रमोद से पुलकित हो उठा। राजा सूरपाल आनन्द के आवेश में बोल उठा—अहो! भाग्योदय। जिस प्रियपुत्र के दर्शनार्थ लगभग डेढ़ वर्ष से तरस रहा हूँ आज वह राज्य ऋद्धि-संपन्न अपनी प्रिया सहित मिलेगा!! नरक के समान वियोग दुःख से आज हमारा उद्धार होगा। आज हमारे पिपासित नेत्र पुत्र दर्शन से तृप्त होगे। इसप्रकार बोलते हुए सूरपाल राजा महाराज वीरधवल के साथ उत्सुकता पूर्वक महाबल के सन्मुख चल पड़े।

प्रेम एक ऐसी भावना है कि उसके सामने मान-अपमान, बड़े-छोटे की गणना या तुलना नही रहती। अविवेक या अविनय तो उसके अखण्ड रस के प्रवाह में विलीन हो जाता है। प्रत्युत आन्तरिक लगन को प्रकट कर स्वत्व का पोषण करता है।

महाबल अपने पिता तथा श्वसुर को अपने सन्मुख आता देख रण-रंग हाथी से नीचे कूद-कर पिता के

सामने दौड़ पड़ा। शीघ्र ही पास जाकर पूज्य पिता के चरणों में मस्तक झुका दिया, और आनन्द के आँसुओं से उसने दबी हुई चिरकालीन वियोग-व्यथा को दूर किया। अब समरभूमि में न रहकर महाबल ने अपने पूज्यजनों को बड़े समारोह के साथ नगर में प्रवेश कराया।

राजमहल में पहुंचते ही मलयासुन्दरी ने अपने पिता तथा श्वसुर के चरणों में आकर नमस्कार किया। उन्हें देखते ही उसे अनुभूत दुःख याद आगया। दुःख याद आने पर उसका हृदय उसके आधीन न रहा। उसके नेत्रों से अखण्ड अश्रु-प्रवाह बहने लगा, और वह फूट-फूट कर रोने लगी। वह आप ही नहीं रोई बल्कि अपने स्वजनों को भी उसने खूब रुलाया। अन्त में धैर्य धारण कर उसके पिता और श्वसुर ने उसे सान्त्वना दी। पूछने पर मलयासुन्दरी और महाबल ने अपने पिता और श्वसुर को अपना अनुभव किया हुआ आज तक का समस्त वृत्तान्त कह सुनाया। मलयासुन्दरी के दुःख का वृत्तान्त सुनकर दोनों नरेशों

के नेत्रो से अश्रु टपकने लगे। राजा सूरपाल के हृदय में अपनी की हुई भूल के पश्चात्ताप का पार न रहा। मलयासुन्दरी के सामने उनकी गर्दन नीची होगई। पश्चात्ताप से उनका हृदय गद्‌गद् होगया। वे विनम्र भाव से बोल उठे—बेटी! कुल-वधु! तुम तत्वज्ञा हो इस अविचारी सूरपाल को जो तुम्हारे सर्व दुःखों का कारण बना है, क्षमा करो। देवी! मैं तुम्हारे सामने मूर्ख और अपराधी हूँ।

राजा वीरधवल पुत्री के मस्तक पर हाथ फिरा कर बोले—बेटी! तुमने बड़ा घोर दु.ख सहा! राज-कुल मे पैदा होकर भी निष्पुण्यक भिखारी के समान रुलती फिरी! चन्द्र किरणों के समान निर्दोष और गुलाब कुसुम के समान कोमलाङ्गी पुत्री! तूने किस तरह ऐसे घोर दुःख सहे होंगे! इस प्रकार दुःखित हृदय से सबने मलयासुन्दरी के दु.ख से शोक संवेदना प्रकट की।

स्नान, भोजन कर फिर राज्यप्राप्ति के सम्बन्ध में बातचीत शुरू हुई। सूरपाल बोला— बेटा! तुम्हारी

सहन शक्ति अगाध है। तुमने कंदर्प पर बडा भारी अनुग्रह किया। परन्तु फिर भी वह दुष्ट तुम्हारे अनुग्रह से कुछ लाभ न उठा सका। बेटा ! तुम्हारा साहस, तीक्ष्ण बुद्धि, धैर्य और तुम पर प्रजा का जो असीम प्रेम है वह सब प्रशंसा के योग्य है। इत्यादि पुत्र के गुणो की अनुमोदना करते हुए राजा सूरपाल ने पूछा—बेटा ! जङ्गल में पैदा हुआ था, ऐसा मलयासुन्दरी का वह पुत्र कहां ? पापी दुष्ट बलसार ने उसकी क्या व्यवस्था की है ?

महाबल—बलसार को यहां बुलाकर पूछने से मालूम होगा। बलसार को शीघ्र ही जेलखाने में से राजा सूरपाल के पास बुलाया गया। वह राज पुरुषों के पहरे में और हथकड़ियों बेड़ियों से जकड़ा हुआ राजसभा में हाजिर हुआ। उसको देखते ही राजा सूरपाल त्यौरी चढ़ाकर बोले—अरे दुष्ट ! तूने हमारा भयङ्कर अपराध किया है। इस अपराध का तुझे कठोर से कठोर दण्ड मिलना चाहिये। तू प्रथम तो यह बता कि तूने उस हमारे प्राण-प्यारे पौत्र की क्या व्यवस्था

की है ? और उसे कहां रक्खा है ?

सूरपाल और वीरधवल राजा को वहाँ बैठा देख कर बलसार के छक्के छूट गये। वह और भी घबरा गया और मनमें सोचने लगा कि जिनकी सहायता से मै सिद्धराज के कारावास से छूटना चाहता था, उन्ही के यह पुत्र–पुत्री है। जिस वीरधवल राजा की सहायता से मैं छुटकारे की कुछ आशा रखता था उन्ही की पुत्री मलयासुन्दरी को मैंने घोर दु ख में डाला है, इतना ही नही किन्तु उसे धन लेकर कारू लोगों के हाथ में पशु के समान बेच दिया था। इत्यादि बाते याद आते ही उसके होश गुम होगये।

वह सोचनें लगा कि मेरे सब मनोरथ निष्फल हो गये। राज-द्रोह और स्वामी का अपराध करने वाले मुझको सकुटुम्ब प्राण–दण्ड की शिक्षा के सिवा अब अन्य मार्ग ही नहीं दीखता। अर्थात् मरने से बचने का अब कोई उपाय नही है। इस प्रकार सोच विचार कर बलसार बोला—महाराज ! मैंने आपको बड़ा भयकर अपराध किया है, इससे मैं अवश्य ही शिक्षा का पात्र

हूं, तथापि यदि आप मुझे सकुटुम्ब प्राण-दान देवें तो मैं आपके उस पुत्र को बतला सकता हूँ, अन्यथा मुझे यों भी मरना है, और यों भी।

सूरपाल राजा—खैर यदि तू हमारे जीवित-पुत्र को ला दे तो हम तुझे तेरी इच्छानुसार जीवित—दान देते हैं। यों कह कर राजा ने बलसार के बतलाए हुए गुप्त स्थान पर राज-पुरुषों को भेजे और वहां पर हिफा-जत से रखे हुए उस बालकको राज-सभा में ले आये। जिस तरह वर्षा--ऋतु में मेघागमन से आनन्दित हो मयूर—कुटुम्ब नृत्य करता है; वैसे ही पुत्र को देखकर सारा राज-कुटुम्ब हर्षित हो उठा।

सूरपाल राजा ने बलसार से पूछा—इस कुमार का क्या नाम रक्खा है ?

बलसार ने कहा—महाराज ! इसका नाम बल रक्खा है। राजा ने पौत्र को अपनी गोद में ले लिया, उस समय उनके हाथ में सौ स्वर्ण मोहरों की थैली थी। उन स्वर्ण मोहरो की थेली को बालक नें अपने हाथ से पकड़ कर खीच लिया, यह देख-कर राजा ने

उसका नाम शतबल रख दिया। सूरपाल राजा ने बलसार सार्थवाह का सर्वस्व लूटकर उसे सकुटुम्ब जीवन-दान देकर देश से बाहर निकाल दिया।

एक वर्ष के बाद मलयासुन्दरी का मिलाप होगा यह उस ज्योतिषी का वचन सत्य हुआ। बराबर एक वर्ष पूरा होते ही महाबल को मलयासुन्दरी का प्रथम समागम उस कुँए में हुआ था।

स्वजन सम्बधियो का मिलाप होने के कारण राजकुटुम्ब और सारे राज्य भर में आज के दिन आ-नन्दोत्सव मनाया गया। बहुत समय से पुत्र और पुत्री के विरह से संतप्त दोनों राजा आज शान्ति का अनुभव कर रहे थे। सिद्धराज राजा सूरपाल के महाबलकुमार नामक पुत्र हैं, यह जानकर प्रजा में और ही आनन्द छागया। अपने भुजबल से पैदा किये हुए राज्य को अपने पिता को समर्पण किया। परस्पर परमस्नेह में निमग्न होकर दोनों राजकुटुम्ब सानन्द समय व्यतीत करने लगे।

---

(३५)

चन्द्रयशा-केवली

अनेक प्रकार के पार्थिव वैभवों का अनुभव करता हुआ महाबल का राजकुटुम्ब इष्ट संयोग के सम्बन्ध से पूर्व अनुभूत असह्य दुःखों को सर्वथा भूल गया था। पूर्वोपार्जित प्रबल पुण्य का सूर्योदय पराकाष्टा को पहुंचा मालूम होता था इस समय आन्तरिक ज्ञान प्राप्त करने के लिए उन्हें किसी ज्ञानवान् विरक्त आत्मा सद्गुरु के समागम की आवश्यकता थी। मानो वह पूर्ण करने के लिए ही उनके पुण्य से प्रेरित हो पार्श्वनाथ प्रभु के शिष्य महात्मा चन्द्रयशा-केवली विचरते हुए और भव्य जीवो को उपदेश करते हुए वहां पर आ पधारे।

सागरतिलक नगर के बाहर उद्यान में, आज बहुत नगर निवासियों का जमघट लगा हुआ है। शहर के बडे-बड़े आदमी उत्साह और भक्ति भाव से प्रेरित हो वहाँ जा रहे है। इस समय राजसभा में आकर एक बागवान ने राजा से प्रार्थना की—महाराज ! आज शहर के बाहर महा तपस्वी और केवलज्ञान धारी एक चन्द्रयशा नामक महात्मा पधारे हैं। यह समाचार सुनते ही सारा राजकुटुम्ब इस प्रकार प्रसन्न हो उठा जिस प्रकार सूर्य के आगमन से कमल समुदाय विक-सित हो उठता है। उन्होने जरा भी विलम्ब न किया, पूरे राज-कुटुम्ब को साथ लेकर गुरु महाराज को वंदन करने के लिए उनके दर्शनार्थ महाराज सूरपाल, महा-राज वीरधवल वहां आ पहुँचे। राजा आदि समस्त जनता के उपस्थित होने पर कृपा के समुद्र ज्ञानभानु महात्मा चन्द्रयशा केवली भगवान् ने जगत्-जनों पर करुणा लाकर संसार के जन्म-जरा-मरण के बन्धनों को छेदन करने वाली धर्म देशना प्रारम्भ की और आत्मा का वास्तविक स्वरूप बतलाया।

सुखप्राप्ति की इच्छा रखने वाले सज्जनों ! आप को यह बात याद रखनी चाहिये कि संसार के तमाम सुख निमित्तजन्य होने के कारण विनश्वर है। आत्मा का असली स्वरूप प्राप्त किये बिना मनुष्य को सच्चा सुख प्राप्त नही होता। उस सुख को प्राप्त करने के लिए ज्ञानी पुरुषोंने दो मार्ग बतलाये है। एक संन्यस्थ मार्ग और दूसरा गृहस्थ धर्म है। जिस मनुष्य में उस सुख को प्राप्त करने की तीव्र इच्छा और उत्सुकता प्राप्त हुई हो वह मनुष्य आत्मा के साथ कर्मबन्धन कराने वाले तमाम भावों का सर्वथा परित्याग कर प्रबल पुरुषार्थ द्वारा संन्यस्थ मार्ग से उसे प्राप्त कर सकता है। जिसमें उतना त्याग करने का प्रबल पुरु-षार्थ न हो वह मनुष्य गृहस्थधर्म में रह कर उसके योग्य नियमो को धारण कर धीरे-धीरे आत्म-स्वरूप की ओर गमन करते हुए उस सुख के नजदीक पहुँच जाता है। गृहस्थ-धर्म के योग्य ज्ञानी पुरुषों ने मुख्य-तया व्यवहार और निश्चय नय से बारह व्रत बत-लाये हैं।

(१) दूसरे प्राणी को अपने समान समझ कर उसकी हिंसा न करें। उसे किसी भी प्रकार की पीड़ा न पहुँचावें, इसे व्यवहार नय से प्रथम व्रत या नियम कहते हैं। और यह प्राणी अन्य प्राणियों की हिंसा द्वारा कर्म बन्धन करके दुःख का भागी बनता है। इसलिये आत्मा के साथ लगे हुए कर्मो को दूर करना योग्य है। तथा यह आत्मा अनेक स्वाभाविक गुण वाली है। अतः हिंसादिक प्रवृत्तियों द्वारा कर्म ग्रहण करने का इसका स्वाभाविक धर्म नहीं है। इस प्रकार की ज्ञान-बुद्धि से हिंसा के त्यागरूप आत्मगुणों को ग्रहण करने का निश्चय करना इसे निश्चय नय की अपेक्षा प्रथम स्थूल प्राणातिपात विरमण व्रत कहते है।

(२) लोक निन्दित असत्य भाषण से निवृत्त होना यह व्यवहार से दूसरा व्रत कहलाता है। त्रिकाल ज्ञानी सर्वज्ञ, देव के कथन किये हुए जीव अजीव के स्वरूप को अज्ञानतावश विपरीत कथन करना और पौदुगलिक परवस्तु को आत्मीय कहना यह सरासर मृषावाद है।

अतः इस प्रकार के मृषावाद से निवृत्त होना इसे निश्चय नय की अपेक्षा दूसरा व्रत कहा है। इस पूर्वोक्त व्रत के सिवा अन्य व्रतोंकी यदि विराधना भो हो जाय तो उसका चारित्र नष्ट हो जाता है। किन्तु ज्ञान व दर्शन ये दोनों कायम रहते हैं। पर उपरोक्त दूसरे व्रत की विराधना होने से ज्ञान दर्शन और चारित्र ये तीनों ही जो आत्मीय सुख की प्राप्ति कराते है, नष्ट हो जाते हैं।

(३) किसी की मिलकियत की वस्तु मालिक के दिये बिना या उसकी आज्ञा बिना ग्रहण न करना इसे व्यवहार नयसे तीसरा व्रत कहते हैं। परन्तु द्रव्य से परवस्तु ग्रहण न करने के उपरान्त अन्तःकरण में पुण्य तत्व के बयालिस भेद प्राप्त करने की इच्छा से धर्म कार्य करता हुआ और पांचों इन्द्रियों के तेईस विषय तथा कर्म की आठ वर्गणायें, वगैरह अनात्मीय पर-वस्तु ग्रहण करने की इच्छा तक भी न करना इसे निश्चय नयकी अपेक्षा तीसरा व्रत कहते हैं।

(४) गृहस्थ धर्म में स्वदार संतोष और परस्त्री

का त्याग, तथा साधु मुनिराज के लिये सर्व स्त्री मात्र का परित्याग करना यह व्यवहार से चतुर्थ व्रत कहलाता है। परन्तु विषय की इच्छा का, ममत्व और तृष्णा का परित्याग निश्चय रुप से चतुर्थ व्रत होता है।

(५) गृहस्थ धर्म में नव प्रकार के परिग्रह का परिमाण करना और सन्यस्थ मार्ग में सर्व प्रकार के परिग्रह का त्याग करना, व्यवहार से पांचवां व्रत कहलाता है। भाव कर्म जो राग द्वेष अज्ञान तथा आठ प्रकार के द्रव्य-कर्म और देह की मूर्च्छा एवं पांचों इन्द्रियो के विषयों के परित्याग को ज्ञानवान् पुरुषों ने निश्चय नयसे पाँचवा व्रत कथन किया है।

(६) दिशाओं में आने जाने का परिमाण करना यह व्यवहार से छट्टा व्रत कहलाता है। और नरकादि चतुर्गति रूप कर्म के परिणाम को जानकर उस ओर उदासीन भाव रखना तथा सिद्ध अवस्था की तरफ उपादेय भाव रखना इसे निश्चय नय से छट्टा व्रत कहते हैं।

(७) भोगोपभोग व्रत मे सर्व-भोग्य वस्तुओं का

परिमाण करना यह व्यवहार से सातवाँ व्रत कहलाता है। व्यवहार नय से काम का कर्ता तथा भोक्ता आत्मा ही है। और निश्चय नय से कर्तापन कर्म का ही है। क्योंकि मन वचन व शरीर का योग ही कर्मका आकर्षण करता है, एवं भोक्तापन भी योगमें ही रहाहुआ है। अज्ञानताके कारण आत्माका उपयोग मिथ्यात्वादि कर्म ग्रहण करने के साधनमें मिलजाता है। परन्तु परमार्थ वृत्ति से आत्मा कर्म पुद्गलों से भिन्न ही है। आत्मा ज्ञानादि गुणों की आविष्कर्ता और भोक्ता है। संसार में जितने पौद्गलिक पदार्थ है वे जगत्वासी अनेक जीवों के भोगे हुए हैं। अतएव विश्वभर के सब पदार्थ उच्छिष्ठ भोजन के समान होने के कारण उन पुद्गलों को भोगोपभोग रूप से ग्रहण करना आत्मीय धर्म नहीं है। इस प्रकार के चितन को निश्चय नय से सातवाँ व्रत कहते है।

(८) बिना प्रयोजन पापकारी आरम्भ से निवृत्त होना इसे व्यवहार से आठवां अनर्थदण्ड विरमण व्रत कहते है। मिथ्यात्व, अविरति, कषाय और मन वचन शरीर के योग इन चारों के उत्तर भेद सत्तावन होते

है। आत्मा को मलिन कर अपने स्वरूप से वंचित करने वाले कर्म का आगमन इन पूर्वोक्त हेतुओं से ही होता है और कर्मों के द्वारा ही आत्मा विभाव-दशा को प्राप्त होती है। अतः पूर्वोक्त कर्मबंधन के हेतुओं को त्यागना इसे निश्चय-नयसे आठवां अनर्थदण्ड विर-रमण व्रत कहते हैं।

(९) आरम्भ कार्य को त्याग कर जो सामायिक किया जाता है उसे व्यवहार से नवम व्रत कहते हैं। परन्तु ज्ञानादि गुणो की मुख्य सत्ता धर्म के द्वारा सर्व जीवों को समान समझ कर उन पर सम-परिणाम रखने को निश्चितनय से नवम सामायिक व्रत कहते हैं।

(१०) नियमित स्थान में स्थिति करना यह व्यवहार से दसवां व्रत कहलाता है। परन्तु ज्ञान के द्वारा छः द्रव्यों का स्वरूप समझ कर, पांच द्रव्यो में त्याग बुद्धि रख ज्ञान से आत्मा का ध्यान करना इसे निश्चयनय से दसवां देशावकाशिक व्रत कहते है।

(११) रात दिन के आरम्भ समारम्भ अथवा

पापकारी व्यापार का परित्याग करके ज्ञान-ध्यान में प्रवृत्त होना व्यवहार से ग्यारहवां व्रत कहलाता है। परन्तु ज्ञान-ध्यानादिके द्वारा आत्मीय गुणों का पोषण करना इसे निश्चयनय से ग्यारहवां पौषधोपवास व्रत कहते हैं।

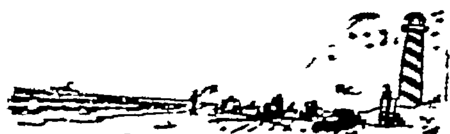
(१२) पूर्वोक्त नियमों को धारण करने वाले गृहस्थ के लिए पौषध पार कर या सदैव साधु मुनि-राज को या किसी विशिष्ट गुणवान् श्रावक को अति-थिसंविभाग करके भोजन कराना, इसे व्यवहार से अतिथिसंविभाग व्रत कहते हैं। परन्तु अपनी आत्मा को तथा अन्य को ज्ञानदान करना, पठन-पाठन, श्रवण श्रावण वगैरह को निश्चयनय से बारहवां अतिथिसं-विभाग नामक व्रत कहते हैं।

पूर्वोक्त निश्चय और व्यवहार भेदों सहित ये बारह प्रकार के नियम गृहस्थ श्रावक को मुक्ति मंदिर की ओर ले जाते हैं। केवल व्यवहार से ही धारण किये गये ये व्रत आत्मा को देवलोकादि सुख प्राप्त कराते हैं।

महानुभावों ! आत्मिक-सुख प्राप्ति का उद्देश्य किये बिना सांसारिक सुख की लालसा में अमूल्य जीवन की कदर्थना करना मूर्खता है, क्या यह कीमती जीवन विषयवासनाओं के प्रवाह में बहा देने के लिए प्राप्त हुआ है ? या उन क्षणिक सुख के साधनों को एकत्रित करने के लिए ही दुर्लभ मानवजन्म पाया है जो बादल की छाया के समान कुछ देर आकर नष्ट हो जाता है ! संसार परिवर्तनशील है, उसमे मनुष्य अपनी जीवन नौका को वहन करता है। यदि वह पतवार को छोड़ हाथ पर हाथ रख कर बैठ जाय तो नौका काल के प्रवाह में बह जाय। परिवर्तनशील संसार में रहने वाले हरएक समझदार मनुष्य को अपने बहुमूल्य मानव जीवन का लक्ष्य कायम कर सदैव उसकी ओर ध्यान रखना चाहिये। बहुत से मनुष्य आत्मीय सुख की ओर दुर्लक्ष्य कर शारीरिक सुख को अधिक महत्व देते हैं। वे सवार की अपेक्षा घोड़े को ही कीमती समझते हैं।

राजन् ! परम सुख प्राप्त करने का मुख्य साधन

शरीर अस्थिर है। सुख की भ्रांति कराने वाली लक्ष्मी बिजली के चमत्कार की तरह चंचल है। संयोग वियोग वाले हैं। प्राणी मात्र के सिर पर मृत्यु का नाच हो रहा है, न जाने किस समय और किस पर उसकी तान टूट जाय। संसार के तमाम सुख स्वप्न के सरीखे है। संकट के समय धर्म के सिवा कोई भी सहाय नही कर सकता। देव–देवेन्द्र, राजा रंक, स्त्री पुरुष और बाल वृद्ध आदि सबको एक समय मृत्यु का ग्रास बनना है। इसलिये हे भव्यात्माओं! आलस्य की घोर निद्रा को त्यागो। सावधान होकर परम शान्ति मार्ग में प्रयत्न करो। निरन्तर सुख की इच्छा वाले मनुष्य को कभी न कभी अवश्य ही इस मार्ग का आश्रय लेना पड़ेगा। अमूल्य जीवन का एक भी क्षण निरर्थक न जाने दो। ये क्षण बड़े ही कीमती है। विपुल संपत्ति व्यय करने पर भी गया क्षण हाथ नही आता, और पुण्योदय से प्राप्त हुई, यह सर्व, सामग्री बार-बार नहीं मिलती।



(३६)

पूर्व भव का वृत्तान्त

केवली भगवान् के धर्मोपदेश को सुन कर अनेक मनुष्यो को बोध प्राप्त हुआ। महात्मा के वचनों से राजकुटुम्ब को बड़ी शान्ति प्राप्त हुई। ज्ञान-पिपासु व धर्म–जिज्ञासु मनुष्यों के आनन्द का पार न रहा। सारी सभा में शान्ति का साम्राज्य छा गया। समय पा कर राजा सूरपाल हाथ जोड़ कर बोला— ज्ञान-दिवाकर भगवन् ! मेरे मनमे एक आश्चर्यजनक शंका है; कृपा कर आप उत्तर देकर कृतार्थ करें। प्रभो ! समुद्र में पड़ी मलयासुन्दरी को उस मगरमच्छ ने कुछ भी कष्ट न पहुंचा कर इसे सुखपूर्वक समुद्र - तट पर क्योकर ला उतारी ? उसमें ज्ञान कहां से आया कि जिससे वह इसे समुद्र–किनारे उतार कर बारम्बार

प्रेमभरी नजर से इसको देखता हुआ वापिस चला गया।

केवली महाराज ने फरमाया—राजन् ! मलया-सुन्दरी की धायमाता वेगवती अन्त समय आर्त्तध्यान से मर कर इसी समुद्र में मगरमच्छ के रूप में पैदा हुई है। जिस समय मलयासुन्दरी भारण्ड पक्षीके पञ्जों से छूट कर समुद्र में पड़ी उस समय देवयोग से वह मगरमच्छ उसी जगह पानी पर तैर रहा था। पुण्यके योग से मलया उसकी पीठ पर आ पड़ी। मलया-सुन्दरी उस वक्त अपना अन्तिम समय समझ कर पर-मेष्ठी महामन्त्र का उच्चारण कर रही थी। उसके शब्द मगरमच्छ के कान में पड़ते ही उसने इसकी ओर देखा। मलया को देख ताजे संस्कार होने उसे अपने पूर्वभव का जातिस्मरण-ज्ञान हो गया। उस ज्ञान के कारण उसने मलया को पहिचान लिया। मगरमच्छ सोचने लगा कि अहो ! राजमहलो में रहने वाली इस मेरी पुत्री पर अवश्य ही कोई भयङ्कर संकट आया मालूम होता है, जिससे यह ऐसे अगाध गहरे समुद्र में

आ पड़ी है। मैं ऐसी तिर्यञ्च की अधम स्थिति में इसे किस प्रकार सहायता करूँ ? जलचर पशु की गति में पैदा होने के कारण मैं इस निराधार लड़की को अन्य किसी भी तरह की सहायता नही कर सकता तथापि इसे अपनी पीठ पर बैठा कर किसी मनुष्य की बस्ती-वाले स्थल प्रदेश तक तो पहुँचा ही सकता हूँ। उसके बाद यह किसी भी प्रकार से अपने सगे सम्बन्धियों से जा मिलेगी।

पूर्वोक्त विचारो से उस मगरमच्छ ने अगाध समुद्र से सुख पूर्वक मलयासुन्दरी को समुद्र तट पर ला छोड़ा। पुत्रीत्व के स्नेह से गर्दन पीछे घुमा कर बार-बार उसे देखता हुआ वह मच्छ वापिस समुद्र में चला गया।

केवली—राजन् ! जातिस्मरण ज्ञान होने के बाद वह वेगवती का जीव निरन्तर निर्दोष आहार करता है, और श्री परमेष्ठी महामंत्र का ध्यान स्मरण करता रहता है। वह अपने मगरमच्छ भव सम्बन्धी आयुष्य को पूर्ण कर पूर्वकृत कर्मों का पश्चात्ताप, महामंत्र

नवकार का स्मरण, और शुभ-भाव की सहाय से देव-गति को प्राप्त होगा। श्री चंद्रयशाकेवलो के मुख से मलयासुन्दरी की धायमाता वेगवती का भवान्तर सुन कर राजा आदि तमाम मनुष्य आपस में बोलने लगे- सचमुच ही उसने इस पशु भव में भी माता के जैसा ही प्रेम बतलाया है। ऐसे तिर्यंच के भव में भी वह अपने कर्त्तव्य को नही भूली।

सूरपाल—भगवन्! इस मेरे पुत्र महाबल ने व पुत्रवधू मलयासुन्दरी ने पूर्व जन्म में ऐसे क्या कर्म किये हैं कि जिनसे इन्हें ऐसे सुखसम्पन्न कुल में पैदा होकर भी घोर दुःखो का अनुभव करना पड़ा ?

केवली—राजन्! आप सावधान होकर सुने। मैं इनका पूर्वजन्म-वृत्तान्त सुनाता हूँ—पृथ्वीस्थानपुर में पहले एक प्रियमित्र नामक जमींदार रहता था। वह वड़ा समृद्धिवान था। परन्तु उसके पुत्रादि सन्तति नहीं थी। प्रियमित्र के भद्रा, रुद्रा, और प्रियसुन्दरी नाम की तीन स्त्रियां थी। रुद्रा और भद्रा सगी वहने थी। अतः उन दोनों में परस्पर अच्छा प्रेमभाव रहता

था। किन्तु प्रियमित्र का उन दोनों पर प्रेम न था। उसका प्रियसुन्दरी पर ही पूर्ण प्रेम था। बस इसी कारण प्रियमित्र, प्रियसुन्दरी के साथ रुद्रा एवं भद्रा का क्लेश रहता था। यह क्लेश उसके घर मे निरन्तर होता था। प्रियमित्र का एक मदनप्रिय नामक मित्र था। वह प्रियसुन्दरी को प्रेम की नजर से देखता था। सदैव आने-जाने के विशेष परिचय से वह प्रियसुन्दरी पर आसक्त होगया। हमेशा वह प्रियसुन्दरी के साथ बड़े प्रेम से वार्तालाप करता। एक दिन एकान्त में रही हुई प्रियसुन्दरी के रूप में मुग्ध होकर मदनप्रिय ने उसे अपनी विषय-वासना पूरी करने का अभिप्राय बताया। प्रियसुन्दरी का हृदय सरल और पवित्र था। वह पति पर पूर्ण प्रेम और भक्ति रखती थी, उसके पति का भी उसका अनन्य प्रेम था। प्रियसुन्दरी ने मदनप्रिय के अभिप्राय को तिरस्कार के साथ ठुकरा दिया और कहा, फिर से मेरे समक्ष न आवे और आप ऐसा अभिप्राय प्रकट न करे, यह भी उसे साम्यभाव से समझा दिया परन्तु मदनप्रिय मदन के आधीन होने से

अपने दुराग्रह से पीछे न हटा। वह जब कभी समय पाता तब प्रियसुन्दरी से वही बात छेड़ता। प्रियसुन्दरी उसे समझाने का प्रयत्न करती, परंतु मदन की आतुरता में और भी वृद्धि होती रही।

एक दिन प्रियसुन्दरी के अलावा घर में अन्य कोई न था। मदन ने आकर प्रियसुन्दरी से फ़िर वही प्रार्थना की तब वह उसे साम दामादि नीति के वचनों से समझा रही थी, कि दैववशात् उसी समय बाहर से वहां पर प्रियमित्र आ पहुँचा। उसने दोनोंका वार्तालाप सुनकर एकान्त में छिपकर उनकी बातें सुनली। क्रोधातुर होकर प्रियमित्र ने यह सारा वृत्तान्त मदनप्रिय के कुटुम्बियों से कहा। कुलीन होने के कारण उन लोगो को बड़ा शर्मिन्दा होना पड़ा। उन्होंने मदन को बुला कर उसका बड़ा तिरस्कार किया, और कह दिया, कि यदि तू कुलीन है, और कुछ शरम रखता है, तो हमें मुंह न दिखाना। यह सुनकर वह नगर छोड़ कर चला गया।

इस बात से प्रभु श्री चंद्रयशा केवली महाराज के

मुखारविंद से पूर्वोक्त बाते सुनकर सभा में बैठे कईएक वृद्ध मनुष्य बोल उठे—गुरुदेव ! आप बिल्कुल सत्य फरमाते है। हम स्वयं पृथ्वीस्थानपुर के ही रहने वाले है। हम खुद इस बात को जानते है। यह घटना हमारे स्मरण में है। मदनप्रिय आज तक अपने घर नहीं आया, और प्रियमित्र का घर अभी तक उसके नाम से पहचाना जाता है। उस घर में आज भी उसके निकट सम्बन्धी रहते है। अहो ! ज्ञान की कैसी महिमा है ! ज्ञानी पुरुष ज्ञानबल से ही पूर्व में बीती हुई सर्व घटनाओं को जानते है।

राजा सूरपाल—शहर छोड़ने बाद मदनप्रिय की क्या दशा हुई ? भगवन् !

श्री चन्द्रयशा केवली—मदनप्रिय घर से निकल कर अपने कृत्य के लिए पश्चात्ताप करता हुआ देशा-न्तर को चल दिया। चलते-चलते उसको दो दिन तक निराहार रहना पड़ा; तीसरे दिन जब वह एक अटवी में जा रहा था तब वहाँ पर उसे बहुत-सी गोएँ घास चरती दिखाई दी। क्षुधातुर मदन ने चरवाहे से दूध

की प्रार्थना की। तीन दिन से भूखे मदन को देख कर चरवाहे को दया आगई। उसके गोकुल में उस समय एक बिनादूही भैंसथी, उसने उस भैंसको दूह कर मदन को बहुत सा दूध दे दिया। मदन बोला—यह नजदीक में जो तालाब दीख पड़ता है वहां जाकर मुँह हाथ धोकर वहाँ ही मैं दूध पीऊँगा। चरवाहे ने खुशी से वहाँ पर दूध का घड़ा लेजाने की सम्मति देदी। मदन दूध के घड़े को लेकर तालाब के किनारे आया। शुभ भावना से वह सोचने लगा मुझे आज अन्न-जल ग्रहण किये दो दिन हो गये, यदि इस समय कोई अतिथि महात्मा तपस्वी आदि उत्तम पात्र मिल जाय तो उसे बहरा कर (देकर) फिर पारणा करूँ तो जन्म सफ़ल हो जाय। मैंने अपने जीवन में कुछ भी सुकृत नहीं किया। इसी से मेरी यह दुर्दशा हुई है इस समय मेरे खाने पीने तक के लिए भी कुछ साधन नहीं रहा। ऐसी बिषम स्थिति मे भी अगर कोई महात्मा दर्शन दे तो मैं उन्हें इस दूध को देकर कुछ सुकृत उपार्जन करूँ।

जिस समय मदन इस प्रकार विचार कर रहा था ठीक उसी समय सद्भाग्य से वहां पर एक मासोपवासी महात्मा पधारे। वह तपस्वी मासोपवास के पारणे के लिये नजदीक गाव की तरफ जा रहे थे। तपस्वी साधु को देख कर मदन के विशुद्ध परिणामों में और भी वृद्धि हुई। वह हर्षित होकर विचारने लगा—अहो ! मेरा सद्भाग्योदय है जिससे मनोरथ करते ही इन महापुरुष के दर्शन होगये। मैं इन्हें दूध बहरा दूँ, यह निश्चय कर उसने मुनि के रास्ते की तरफ जाकर भक्तिपूर्वक हाथ जोड़ कर कहा—हे महात्मन् ! कृपालू मुनिराज ! यह निर्दोष दूध ग्रहण करके मेरा कल्याण करो। मदन के शुभ परिणामो को देख कर द्रव्य, क्षेत्र, कालभाव—से उस द्रव्य को विशुद्ध समझ कर तपस्वी ने इच्छानुसार उसमे से कुछ दूध ग्रहण किया। मदन ने भी शुभ परिणाम से उस महातपस्वी को दूध का दान देकर विशेष पुण्य उपार्जन किया।

सचमुच ही ऐसी गरीब स्थिति में और दो दिन की सहन की हुई भूख प्यास में भी खाद्य या पेय पदार्थ

प्राप्त करके अतिथि-महात्मा को दान देने की जो भावना पैदा होती है यही भावी शुभ दिनों को सूचना के लक्षरण हैं। ऐसी परिस्थिति में योग्य पात्र को दिया हुआ थोड़ा सा भी दान महान् फलदायक होता है। भरे को कौन नही भरता ? सुखी और धनाढ्यों का कौन सत्कार नहीं करता ? परन्तु जो त्यागी संयमी साधु-पुरुष हैं उन्हें दान देने में कितना महान् लाभ होता है इस बात को समझने वाले बहुत कम व्यक्ति होते है।

मुनिराज अन्यत्र विहार कर गये। मदन भी उन तपस्वी-मुनिराज को नमस्कार कर वापस उस तालाब को पाल पर आगया, और मुनिदान से अपने आपको कृतार्थ मानते हुए उसने शेष बचा हुआ दूध पी लिया।

जंगल में मनुष्यो के विशेष उपयोग में न आने के कारण इस जंगली तालाब के किनारे इँटोसे या पत्थर से बँधे हुए नही थे। एवं मदन भी अनजान होने से उस तालाब की गहराई या उसके अन्दर उतरने का सरल मार्ग न जानता था। वह उसके किनारे पर बैठ

कर नोचे झुक कर तालाब से पानी पीने लगा। इतने में ही उसका पाँव फिसल जाने से वह तुरन्त ही ता-लाब में जा गिरा, तालाब के किनारो पर ही अगाध जल था। मदन तैरना नही जानता था। अतः वह तालाब से बाहर न निकल सका। उसे निकालने वाला भी उस जंगल में नजदीक कोई नही था इसलिये उस बिचारे मदन को तालाब में ही अपने प्राण त्यागने पडे।

शुभ-भावना पूर्वक मुनिदान के प्रभाव से मदन मृत्यु पाकर इसी सागर-तिलक शहर के राजा विजय के घर पुत्र रूप में पैदा हुआ। उसका नाम कंदर्प रखा गया। विजयराजा की मृत्यु के बाद कदर्प ही इस शहर का राजा बना।

इधर प्रियमित्र भी सुन्दरी के साथ विलास करता हुआ आनन्द में अपने दिन बिता रहा था। परन्तु इस विषयानन्द में उसने अपनी दूसरी रुद्रा और भद्रा दोनों पत्नियो के साथ अनेक प्रकार की दुश्मनी पैदा करली। एक दिन प्रियमित्र सुन्दरी को साथ लेकर धनञ्जय यक्ष

के दर्शन करने जारहा था। रास्ते में चलते हुए वे एक वड़े वृक्ष के विस्तार से अलंकृत प्रदेश के पास आये, वहाँ पर उन दोनों ने अपने सन्मुख आते हुए मुनि को देखा। मुनि के दर्शन से प्रियसुन्दरी के मन में अपशकुन की भावना पैदा हुई। वह सोचने लगी कि यात्रा के लिए जाते हुए हमें सबसे पहले यह मोड़ा नङ्गे सिर वाला मिला है, इस अपशकुन से हमारी यात्रा सफल न होगी, बल्कि और भी कुछ उपद्रव होगा। इत्यादि बोलती हुई सुन्दरी ने अपनी गाड़ी व परिवार को आगे न बढ़ने देकर वहीं पर ठहरा लिया।

संसार की विचित्रता का पार नही है। जो महापुरुष विषय कषायादि महान् अपमङ्गलो से दूर है, जिनके हृदय मे से सांसारिक मलीन वासनाएँ निकल गई हैं, जो सदैव ज्ञान-ध्यान और आत्मिक विचारों में ही लीन रहते है, जो संसार के विषय-लंपट मनुष्यों को हितोपदेश देकर दुष्कर्मजन्य पापों से रक्षण करते हैं, जो हमेशा दूसरों का कल्याण करने की चिन्ता किया

करते हैं। जिनके दर्शन मात्र से मनुष्यो के सकट दूर हो जाते हैं - ऐसे मगलमय महात्मा महापुरुषों को देख कर अपशकुन या संकट आने का विचार करना यह कितनी भयंकर अज्ञानता है ? शुभकार्य के लिये घर से निकले मनुष्यों को यदि सद्‌भाग्य से सन्मुख किसी महात्मा पुरुष का दर्शन हो जाय तो इससे बढ कर और क्या शुभ शकुन हो सकता है ? यह बात याद रखनी चाहिये कि शकुन को देख कर जैसी मनुष्य की भावना होती है वैसा ही उसे फल मिलता है।

अपशुकन की बुद्धि से मार्ग चलते बन्द हो जाना ही सुन्दरी के लिए अच्छा न हुआ। वह अनेक प्रकार से उस महात्मा को उपसर्ग करने लगी। क्योंकि क्रोधाधीन स्त्री के लिए ससार में कोई भी कार्य अकर्त्तव्य नही होता।

मुनी ने अपने ऊपर आये कष्ट को देखकर विचार किया कि मेरी परीक्षा का समय आगया है। जिस प्रकार ताप ताड़न द्वारा सच्चे स्वर्ण की परीक्षा होती है वैसे ही संकटो द्वारा उत्तम पुरुषो की कसौटी होती

है। इन अज्ञानियों के किये हुए उपद्रव से अज्ञानता में पड़कर मुझे अपने स्वभाव या स्वरूप से विचलित न होना चाहिये। ऐसे ही समय अज्ञानी और ज्ञानवानों का भेद मालूम होता है। यदि संकट के समय ज्ञान-वान मनुष्य भी अज्ञानी प्राणियों के समान अपने रूप को भूलें तो फिर उन दोनों में कुछ भी भेद नही रहता। उपद्रव के समय समभाव रखने से प्राचीन कर्मों को भोग लेने के उपरांत नवीन कर्मबन्धन भी नहीं होता। इसलिए मुझे अब अपने स्वभाव में रहना चाहिये। यह विचार कर मानसिक वृत्ति को निर्मल रख कर आत्मोपयोग में दत्तचित्त हो वह मुनिराज ध्यानस्थ (कायोत्सर्ग) में खड़े रहे। मुनि को सामने खड़ा देख सुन्दरी का क्रोध और अधिक भड़क उठा। वह उन्हें अहंकारी, पाखण्डी कहकर निष्ठुरता से उन मुनिराज की कदर्थना करने लगी। वह अपने सुन्दर नामक नौकर से बोली—सुन्दर! यह जो पास में ईंटों का आवा पक रहा है, जा और वहां से आग ले आ मैं इस पाखण्डी वेशधारी को दाग दूंगी, जिससे

इसके द्वारा उत्पन्न अपशकुन का दोष दूर हो जायगा और इसका अहंकार भी मिट जायगा।

सुन्दर बोला–स्वामिनी! मेरे पैरो में जूते नही है वहा जाने में रास्ते में कांटे बहुत हैं, व्यर्थ ही काटो में कौन जाय? और साधु को दागने से अपने को क्या फायदा होगा? इन निकम्मे विचारों को छोड़ो और गाड़ी हाकने दो अभी हमें बहुत दूर जाना है।

अपनी स्त्री के हुक्म का अनादर होता हुआ देख पत्नी के आदेश में चलने वाला प्रियमित्र दूसरे नौकर की तरफ देख कर क्रोधावेश मे बोला— अरे! इस सुन्दर के दोनों पैर इस वटवृक्ष को शाखा से बांध दो, जिससे इसके पैर में जमीन पर पड़े हुए काटे न लगने पावे। अपने विचारों में पति की सहानुभूति मिलजाने पर प्रियसुन्दरी को और जोश आ गया। वह गाड़ी से नीचे उतर कर बोलने लगी— अरे पाखण्डी! तेरे मुण्डित रूप के दर्शन से हमारी पति-पत्नी रूप इस जोड़ी में कदापि वियोग न हो। तेरा अपशकुन तुझे ही हानिकारक हो। तेरे बन्धुवर्ग से तेरा सदैव वियोग

हो। तू सचमुच राक्षस जैसा है, इसी कारण तुझे देख कर हमें डर लगता है। इस प्रकार अनेक विध कटु वचनों से मुनि का तिरस्कार करती हुई निष्ठुरहृदया सुन्दरी ने मानों अपने ही सुख पर प्रहार करती हो इस तरह मुनि पर तीन बार पत्थर से प्रहार किया। इतना करने पर भी उसे सन्तोष न हुआ। उसने मुनि के पास आ कर उनके हाथ में से रजोहरण (जैनमुनियों का चिन्ह) छीन लिया और उसे अपनी गाड़ी में रख दिया। ऐसा करने पर उसने कुछ सन्तोष माना, बाद में वह नौकरों से बोली—चलो, अब हमारा अपशकुन दूर हो गया। अब हमें कोई भी अनिष्ट नही होगा। चलो अब निर्भय होकर आगे चलो! धनंजय यक्ष की पूजा करेंगे। सुन्दरी की आज्ञा पा कर सब आगे चल पडे और रास्ता पार कर धनंजय यक्ष के मन्दिर के समीप आ पहुँचे।

यक्ष को पूजा कर यात्रा सफ़ल हुई मान कर परिवार सहित प्रियमित्र और प्रियसुन्दरी एक स्वच्छ स्थान में भोजन करने के लिए बैठे। इस समय प्रिय-

सुन्दरी को प्रसन्न देख जैन धर्म में विशेष प्रेम रखने वाली एक दासी ने अपने मालिक और मालकिन से नम्रता से कहा—आप लोगों ने उस क्षमाशील महा-व्रत धारक और त्याग की मूर्ति महा-मुनि को कष्ट देकर, तिरस्कार और कदर्थना करके महान पाप उपार्जन किया है। संसार से विरक्त हुए महात्माओं की हँसी और मजाक करने वाला इस जन्म मे और अगले जन्म मे अनेक दुःखो का अनुभव करता है। जिसमें आप लोगो ने तो उनका बहुतसा तिरस्कार कर, उन्हें पत्थरो से मार कर, अनेक तरह क्रोध पूर्ण वचनों से कदर्थना कर उनका रजोहरण भी छीन लिया है। इससे आप लोगों ने बड़ा भयंकर दुःख भोगने का कर्म उपार्जन कर लिया है। आपको शान्त-चित्त से इस पर स्वयं विचार करना चाहिये। ऐसे महात्मा अनेक प्राणियों का उद्धार करने वाले होने के कारण संसार में जीवो के आधारभूत होते है। संसार विषयो में तपे हुए मनुष्य समाज के लिए ऐसे महापुरुषों का समागम मेघ के समान शान्ति देने वाला होता है। ऐसे

ज्ञानी साधु रात दिन अपने और पराये जीवों के हित-चिन्तन में ही लीन रहते हैं, इसलिये वैराग्य और मंगल-मूर्ति महात्माओं को दुःख देना अपने सुख को नाश करने के समान है।

दासी के इन उपदेश-भरे वचनों को सुन कर उन दोनो के हृदय पश्चात्ताप करने लगे और अपने किये हुए दुष्कर्मजन्य पाप के भय से थर थर कांपने लगे। दुर्गति के डर से वे दीनमन होकर अत्यन्त पश्चात्ताप करते हुए अपने कृत्यो की निन्दा करने लगे। दुर्गति से बचाने वाला उपदेश देने वाली उस दासी की बुद्धि की उन्होंने बहुत प्रशंसा की। उस दासी को अनेक अनेक धन्यवाद देते हुए दोनों ने जैनधर्म को समझने की तीव्र जिज्ञासा प्रकट की।

मुनिका रजोहरण वापिस देने और अपने दुष्कृत्यों की क्षमायाचना करने के आशय से वे शीघ्र ही उस यक्षमन्दिर से वापस लौटे। वे मुनि भी अभी तक ध्यानमुद्रा में उसी जगह खड़े थे। उनका रजोहरण छिन जाने पर उनने यह प्रतिज्ञा कर ली थी कि जब-

तक मेरा रजोहरण मुझे वापस न मिलेगा तब तक मैं अन्यत्र न जाकर यहाँ ही खड़ा रहूंगा।

अब प्रियमित्र और प्रियसुन्दरी मुनि के पास आ पहुचे। सुन्दरी ने मुनि का रजोहरण वापस दे दिया। अपने अज्ञानपूर्ण कृत्यों के लिए पश्चात्ताप करते हुए उनकी आँखें भर आईं। वे क्षमायाचना करते हुए मुनिराज के चरणों में लिपट गये और दीनता पूर्वक प्रार्थना करने लगे कि हे कृपासिन्धु ! अज्ञानता के वश हो, हमने आप जैसे जगत्पूज्य महामुनि की विराधना कदर्थना की। इस विराधना के पाप से कुम्भकार की चाक पर चढ़े हुए मिट्टी के पिण्ड के समान हमें संसार चक्र में परिभ्रमण करना पड़ेगा। अनेक दुर्गतियो में घोर दुःख सहने पर भी हमारा इस पाप कर्म से छुटकारा न होगा। हे दया के सिन्धो ! क्षमासागर ! भगवन् ! प्रसन्न होकर हम अज्ञान पामर प्राणियों को क्षमा करो। हे दीनबन्धो ! करुणा कर हम अविनीतात्माओं का यह अपराध क्षमा करो, और इस पाप से मुक्त होने का हमें कोई उपाय बताओ।

भिक्षा की गवेषणा करते हुए मुनिराज अकस्मात् स्वभाव से ही प्रियमित्र के घर आ पहुँचे। मुनि का दर्शन करते ही अपने जन्म को सफल मानते हुए दम्पत्ती ने बड़े हर्ष पूर्वक मुनिजी को विशुद्ध आहार पानी का लाभ दिया आहार लेकर मुनिराज अन्यत्र विहार कर गये।

परस्पर प्रेम धारण करते हुए प्रियसुन्दरी और प्रियमित्र सम्यक् श्रद्धान पूर्वक मनुष्य-जन्म के सारभूत गृहस्थ धर्म की आराधना करने लगे। आपस में स्नेह रखती हुई रुद्रा और भद्रा भी एक पृथक घर में रह कर अपने माने हुए धर्मानुसार यथाशक्ति दानादि से पुण्य उपार्जन करने लगीं। परस्पर प्रेम होने पर भी एक दिन ऐसा कारण बन गया जिससे उन दोनों में भी खूब क्लेश हुआ। परन्तु कुछ देर बाद शान्त होने पर उन्हें बड़ा पश्चात्ताप हुआ, इससे वे दोनों एक जगह बैठ कर विचार करने लगी कि—धिक्कार है, हमारे जीवन को जिसमें जरा भी सुख नही। हमारा जन्म बिल्कुल निरर्थक है। इस घरमें सदैव क्लेश रहता है।

पति की ओर से तो हमें सर्वथा सुख नहीं, क्यों कि उसे तो प्रियसुन्दरी ने ही अपने आधीन कर रक्खा है। वे दोनों पति-पत्नी हमारे सामने देखते तक नहीं हैं, प्रेम से बोलने की तो बात ही क्या ? हम दोनों में प्रेम है सही पर कभी-कभी हममें भी क्लेश हो ही जाता है। इस तरह क्लेशमय जीवन बिताने की अपेक्षा मरजाना अच्छा है। हमसे जितना बन सका उतना दान पुण्य कर लिया है, अब देह का त्याग करना ठीक है। इस प्रकार प्राण—त्याग का निश्चय कर एक हृदय हो कर किसी को मालूम न हो इस तरह दोनों ने किसी एक कुँए में गिर कर आत्महत्या कर अपने प्राण त्याग दिये।

रुद्रा मरकर जयपुर नगर में चंद्रपाल राजा के घर पुत्री रूप में पैदा हुई। उसका कनकवती नाम रक्खा गया जिसका विवाह सन्मुख बैठे हुए इन चन्द्रावती नरेश वीरधवल के साथ हुआ। प्रियमित्र की भद्रा नाम की दूसरी स्त्री मरकर परिणाम की विचित्रता से व्यन्तर जाति की देवयोनि में व्यन्तरी पैदा हुई। एक

उनके करुणाजनक और पश्चात्ताप पूर्ण वचनों को सुनकर मुनि ने अपना कायोत्सर्ग पूर्ण कर कहा—हे महानुभावों ! मेरे हृदय में क्रोध नही है। अज्ञानता से कर्माधीन, परमार्थ से पराङ्‌मुख और अपने ही किये कर्म से अनेक प्रकार की विडंबना को प्राप्त हुए संसार के पामर प्राणियों पर तत्व को जानने वाले मुनि कदापि क्रोध नही किया करते। वैसे लब्धिगुणधारी मुनि महात्मा किसी कारण से क्रोध करें भी तो वे जगत् को भस्मीभूत कर सकते है।

मेरा हृदय संसार के समस्त प्राणियों के लिए करुणा रस पूर्ण है, इसी कारण मैं किसी को प्रेरणा के बिना ही सर्व जीवों पर क्षमा भाव रखता हूं। तथापि महानुभावों ! मुझे तुम्हे इतना जरूर कहना पड़ता है - कि इस प्रकार की मूढता या अज्ञानता को त्याग कर विवेकी बनना चाहिये और अज्ञानता को दूर करने वाले और आत्म-स्वरूप का ज्ञान कराने वाले तुम्हे जैन धर्म को स्वीकार करना चाहिये। आत्मा की नित्यता और कर्मों की विचित्रता समझनी चाहिये।

समस्त प्राणी सुख की इच्छा रखते है, तुम्हें खुद को सुख प्रिय लगता है और दुःख भयानक जान पड़ता है तब दूसरे प्राणियो को दुःख क्यों देना चाहिये ? सुख की चाहना वाले मनुष्यों को चाहिये कि वह दूसरों को भी सुख ही दे। हर एक मनुष्य को अपने किये हुए शुभाशुभ कर्मों का फल सुख या दुःख रूप में भोगना ही पड़ता है।

करुणा से प्रेरित हो अपकारी पर भी उपकार करने वाले उन त्यागमूर्ति मुनिराज ने उन्हें अनेक प्रकार से हित शिक्षा दी। संक्षेप में द्वादश व्रतरूप गृहस्थ धर्म समझाया। उन दोनों ने मुनि का दिया हुआ हितोपदेश प्रेमपूर्वक सुना और पाप कर्मों से मुक्त होने के लिए एवं भविष्य में सुख प्राप्ति की इच्छा से उन्होने सम्यक्त्व पूर्वक गृहस्थ धर्म अङ्गीकार किया। अब जैनधर्म को स्वीकार कर वैराग्य रंग से सुरंगित हो मुनि को आहारादि निमित्त प्रार्थना कर वे अपने घर आये। मुनि भी कुछ देर बाद समय होने पर भिक्षा के लिए नगर में गये। अपने योग्य निर्दोष

भिक्षा की गवेषणा करते हुए मुनिराज अकस्मात् स्व-भाव से ही प्रियमित्र के घर आ पहुँचे। मुनि का दर्शन करते ही अपने जन्म को सफल मानते हुए दम्पत्ती ने बड़े हर्ष पूर्वक मुनिजी को विशुद्ध आहार पानी का लाभ दिया आहार लेकर मुनिराज अन्यत्र विहार कर गये।

परस्पर प्रेम धारण करते हुए प्रियसुन्दरी और प्रियमित्र सम्यक् श्रद्धान पूर्वक मनुष्य-जन्म के सारभूत गृहस्थ धर्म की आराधना करने लगे। आपस में स्नेह रखती हुई रुद्रा और भद्रा भी एक पृथक घर में रह कर अपने माने हुए धर्मानुसार यथाशक्ति दानादि से पुण्य उपार्जन करने लगी। परस्पर प्रेम होने पर भी एक दिन ऐसा कारण बन गया जिससे उन दोनों में भी खूब क्लेश हुआ। परन्तु कुछ देर बाद शान्त होने पर उन्हें बड़ा पश्चात्ताप हुआ, इससे वे दोनों एक जगह बैठ कर विचार करने लगी कि—धिक्कार है, हमारे जीवन को जिसमे जरा भी सुख नही। हमारा जन्म बिल्कुल निरर्थक है। इस घरमें सदैव क्लेश रहता है।

पति की ओर से तो हमें सर्वथा सुख नही, क्यों कि उसे तो प्रियसुन्दरी ने ही अपने आधीन कर रक्खा है। वे दोनो पति-पत्नी हमारे सामने देखते तक नही हैं, प्रेम से बोलने की तो बात ही क्या? हम दोनों में प्रेम है सही पर कभी-कभी हममें भी क्लेश हो ही जाता है। इस तरह क्लेशमय जीवन बिताने की अपेक्षा मरजाना अच्छा है। हमसे जितना बन सका उतना दान पुण्य कर लिया है, अब देह का त्याग करना ठीक है। इस प्रकार प्राण—त्याग का निश्चय कर एक हृदय हो कर किसी को मालूम न हो इस तरह दोनों ने किसी एक कुँए में गिर कर आत्महत्या कर अपने प्राण त्याग दिये।

रुद्रा मरकर जयपुर नगर में चंद्रपाल राजा के घर पुत्री रूप में पैदा हुई। उसका कनकवती नाम रक्खा गया जिसका विवाह सन्मुख बैठे हुए इन चन्द्रावती नरेश वीरधवल के साथ हुआ। प्रियमित्र की भद्रा नाम की दूसरी स्त्री मरकर परिणाम की विचित्रता से व्यन्तर जाति की देवयोनि में व्यन्तरी पैदा हुई। एक

दिन वह व्यन्तरी आकाश मार्ग से पृथ्वीस्थानपुर के ऊपर होकर जा रही थी, उस समय उसने प्रियमित्र और प्रियसुन्दरी को देखा। देखते ही अपने पूर्व भव की स्मृति हो आने से उसके हृदय में उन दोनों के प्रति वैरभाव जाग उठा। अतः जहां वे घर मे सुख-शान्ति से सो रहे थे, वहां जाकर व्यन्तरी ने अपनी देविकशक्ति से उन पर दीवाल को गिरा दिया और फ़िर वह वहां से चली गई।

वे स्त्रीपुरुष शुभभाव में मृत्यु प्राप्त कर राजन्! प्रियमित्र का जीव आपके घर में महाबल रूप में पैदा हुआ; और प्रियसुन्दरी का जीव वीरधवल राजा की पुत्री मलयासुन्दरी के रूप में पैदा हुआ। पूर्व भव के घनिष्ट प्रेम के कारण इनका इस भव में भी पति-पत्नी का सम्बन्ध कायम रहा।

राजन्! महाबल और मलयासुन्दरी ने पूर्वभव में रुद्रा और भद्रा के साथ जो तीव्र वैर पैदा किया था, उस वैर को स्मरण कर व्यन्तरी ने फ़िर इस जन्म में भी महाबल को मारने का प्रयत्न किया था,

किन्तु इसके पुण्य की प्रबलता से जब वह इसे मारने में सफल मनोरथ न हो सकी तब रात्रि के समय अपने महल में सोते हुओं को सता कर उपद्रव करने लगी। जो चुराये गये वस्त्र और कुण्डलादि चन्द्रावती नगरी के समीप एक वटवृक्ष की खोखल में से राजकुमार को मिले थे वे सब उस व्यन्तरी के द्वारा ही चुरा कर रखे हुए थे। कुमारी मलयासुन्दरी ने महाबल के प्रथम समागम के समय अपने हृदय के समान प्रिय जो लक्ष्मीपुञ्ज हार उसे समर्पण किया था उस हार को भी कुमार के सो जाने पर उसके पास से व्यन्तरी ने ही उड़ा लिया था। और पूर्वभव सम्बन्धी गाढ़े स्नेह के कारण उसने उस हार को कनकवती की गोद में डाल दिया था।

पूर्वोक्त अन्तिम वृत्तान्त सुनते ही आश्चर्य चकित राजा वीरधवल नम्रतापूर्वक बोल उठा— भगवन्! क्या महाबलकुमार स्वयम्बर होने से पहले भी कभी मलयासुन्दरी से मिला था? यह बात तो असम्भवित लगती है। स्वयम्बर के सिवा वह कभी हमारे यहा

आया ही नहीं था। राजा वीरधवल के ये वचन सुन कर महाबल और मलया मुख पर वस्त्र डाल कर अप्रकट रूप से हँसने लगे। क्योंकि उनके प्रथममिलन का समाचार उन दोनों के अतिरिक्त अन्य किसी को मालूम ही न था। राजा की शंका को दूर करने के लिए ज्ञानी महात्मा ने तमाम हालात विस्तार पूर्वक कह सुनाया कि राजकार्य के लिए आये हुए सूरपाल राजा के सेनापतिमण्डल के साथ महाबल कुमार गुप्त रूप में चन्द्रावतीनगर आया था। सन्ध्याके समय वह प्रथम कनकवती के महल में आया, उसीसे रास्ता पूछ ऊपर मलयासुन्दरी से जा मिला था। उस समय प्रथम मिलन में प्रेमबन्धन को दृढ़ करने के लिए मलया ने लक्ष्मीपुंज हार महाबल के गले में डाल दिया था।

पूर्व जन्म के वैर के कारण इस बात को दूसरे रूप में दिखला कर कनकवती ने कपटभाव से आपको उल्टा-सीधा समझा कर मलयासुन्दरी पर आपका विशेष कोप करा दिया था। इत्यादि। कनकवती का भी ज्ञानी गुरु ने संक्षेप में सब वृत्तान्त कह सुनाया।

जिसे सुन कर लोगोंके दिलों में उसके प्रति बड़ी घृणा पैदा हुई। ज्ञानी गुरुदेव के वचन सुन कर महाबल और मलयासुन्दरी हाथ जोड़ कर बोल उठे—ज्ञान-दिवाकर गुरु महाराज जो फरमाते है वह सर्वथा सत्य है। सर्वज्ञ के ज्ञान में कोई बात छिपी नहीं रहती है। जब व्यन्तरी देवी ने कुमार को उड़ाया याने जब वह उस व्यन्तरी के हाथ पर बैठकर आकाश मार्ग से जा-रहा था उस समय महाबल ने उस व्यन्तरी पर जो मुष्ठि प्रहार किया था उससे पीड़ित होकर वह व्यंतरी फिर आज तक कुमार के पास नही आई उसका बैर-भाव वही पर ही पूर्ण होगया।

पूर्व-भव में जिस सुन्दर नामा नौकर को मुनि को दाग देने के लिए जलते हुए आवे में से सुन्दरी ने आग लाने की आज्ञा दी थी वह सुन्दर नौकर मर कर पृथ्वीस्थानपुर के बाहर बड़वृक्ष पर व्यन्तर होकर रह रहा था। जब महाबल योगी की प्रेरणा से लोभसार चोर के मुर्दे को लेने उस वटवृक्ष के पास गया तब उस व्यन्तर देव ने ज्ञान बल से महाबल को पहचान

लिया और उसने जो प्रियमित्र के भव में अपनी पत्नी के वचन को बढ़ावा देने के लिए उसे यह कहा था कि इसके पैर बड़ की शाखा से बांध दो जिससे पैरों में काँटे न लगें। इत्यादि बातें स्मरण होने से उसने विचारा कि इसने स्वामित्व के मद में आकर उस समय मेरा तिरस्कार किया था। इस समय मैं भी इसे इसके वचनानुसार कुछ चमत्कार बतलाऊँ तो ठीक हो। यह सोच-कर उस व्यन्तर ने मुर्दे के शरीर में प्रवेश किया और मुर्दे के मुख से बोला कि—अरे मूर्ख ! मुझे बड़ की शाखा से बँधा देख कर क्यों हँसता है, तू खुद भी आने वाली रात में इसी बड़ की शाखा पर बांधा जायगा और ऊपर पैर अधोमुख कर के लटकाया जायगा। ठीक उस व्यन्तर देव के कथनानुसार ही दूसरे दिन महाबल उस वटवृक्ष की शाखा से लटकाया गया था। पूर्व-जन्म में आक्रोश के वचनों द्वारा जो नौकर को दु.ख दिया था, उसी अशुभ कर्म के परिणाम में बड़ की शाखा से बँधना पड़ा।

एक दिन रुद्रा ने लोभ के वश होकर अपने पति

की अँटठी चुरानी थी। उसे यह काम करते हुए-सुन्दर ने देख लिया था। घर में सब जगह ढूँढने पर भी जब वह अँगूठी न मिली तब प्रियमित्र बहुत ही व्याकुल होने लगा। अपने स्वामी को व्याकुल देखकर अपने पर चोरी की शंका न हो इस कारण सुन्दर ने रुद्रा के समक्ष ही प्रियमित्र से कहा—स्वामिन्! आप किस-लिये व्याकुल होते है! आपकी अँगूठी रुद्रा के पास है, आप इनसे मांग लेवें। ये वाक्य सुन कर रुद्रा रोष में आकर बोल उठी—अरे दुष्ट कपटी नकटे सुन्दर! तू झूँठ क्यों बोलता है? मैंने कब अँगूठी ली है? रुद्रा के तिरस्कार पूर्ण शब्द सुनकर सुन्दर को बड़ा दु:ख हुआ। परन्तु पराधीन होने के कारण उसने मौन रह-कर रुद्रा के वचन सहन कर लिए। असत्य उत्तर देने वाली अपनी स्वामिनी को वह और क्या कह सकता था? यह आप अपने किये का फल भोगेगी यह समझ वह चुप रह गया। प्रियमित्र ने साम दाम आदि नीति से अपनी अँगूठी निकलवा ली और फ़िर उसकी खूब कदर्थना की। नौकर को असत्य और कटु वचन बोल

कर रुद्रा ने रौद्र—भयानक कर्म उपार्जन कर लिया।

पूर्व-भव की अपनी मालकिन रुद्रा को कनकवती के रूप में देख अपने ऊपर तिरस्कारपूर्ण बोले हुए दुर्वचन याद कर व्यन्तर जाति में पैदा हुए सुन्दर के जीव ने चोर के मृतक शरीर में प्रवेश कर कनकवती की नाक काट ली।

मदन का पूर्व-जन्म में सुन्दरी पर जो अनुराग था वह प्रबल होने के कारण इस भव में भी मलयासुन्दरी को देख कर मदन के जीव कन्दर्प के हृदय में उस पर आसक्ति हुई। मनुष्य के हृदय में जो पहले भवों के संस्कार के कारण वासनायें पैदा होती हैं वे बिना भोग के या प्रबल ज्ञान की सहायता के सिवा कभी शान्त नहीं होती। पहले भव में मलयासुन्दरी और महाबल ने बारह व्रत अङ्गीकार पूर्वक गृहस्थधर्म की आराधना की थी और मुनि को दान दिया था। उस शुभ कर्म के प्रभाव से इस जन्म में इन्होंने उत्तम कुल में पैदा होकर सुख की सामग्री प्राप्त की है।

मलयासुन्दरी प्रियसुन्दरी के भव में मुनि को

आक्रोश पूर्वक तिरस्कार वचन बोलते हुए कहा था कि अरे पाखण्डी मुनि ! तेरे सम्मन्धियों से सदा तेरा वियोग हो, तू राक्षस के समान भयानक लगता है। एवं क्रोधित होकर तीन बार पत्थर का प्रहार किया था। महाबल के जोव प्रियमित्र ने भी मौन रह कर अपनी स्त्री के कृत्य की अनुमोदना की थी उस अ-कृत्य के द्वारा इन दोनों ने घोर पाप उपार्जन कर लिया था; परन्तु बाद में अपनी भूल मालूम होने से इन्होने खूब आत्मनिंदा करते हुए पश्चात्ताप किया व मुनि के पास जा कर अपने अपराध की क्षमायाचना करते हुए बहुत-सा पापकर्म क्षय कर दिया था। किंतु क्षय करने पर भी जो दुष्कर्म शेष रह गये थे उसके प्रभाव से इस भव में इन्हे अपने लोगों से तीन बार ससंकट वियोग सहना पड़ा है और मलयासुन्दरी को रंगरेज तथा कंदर्प की आधीनता में अनेक प्रहार सहने पड़े हैं। मुनि को राक्षस कहने के कर्मपरिणाम में निर्दोष होते हुए भी मलयासुंदरी को वैरसबंध से कनकवती की ओर से राक्षसी का कलंक प्राप्त हुआ।

इस तरह राज्यकुल में उत्पन्न होने पर भी इन दोनों ने अपने पहले जन्म में किये हुए पापकर्मों के कारण यहां ऐसे घोर दुःख प्राप्त किये है। प्रियसुन्दरी ने कुपित होकर मुनि के हाथ से रजोहरण छीन लिया था। उस रजोहरण छीनते समय उसके क्लिष्ट अध्यवसाय के प्रताप से वैसे ही विषमफ़ल स्वरूप बलसार द्वारा पुत्र के छिन जाने पर मलया को भी अपने निर्वासित जीवनकाल में अपने पुत्र का वियोग - दुःख सहना पड़ा। जिस मुनि को इन दोनों स्त्री-पुरुषों ने उपसर्ग पहुँचाया था और बाद में अपनी भूल मालूम होने से जिनके पास उनने पश्चात्ताप सहित गृहस्थ-धर्म अङ्गीकार किया था वही मुनि इस समय केवलज्ञानी की अवस्था में विचरते हैं और वह मुनि स्वयं मैं ही हूँ। महाबल और मलयासुंदरी का यह दूसरा जन्म है पर मैं तो अभी तक उसी भव में विचर रहा हूं।

सूरपाल—भगवन्! महाबलकुमार और मलयासुन्दरीको कनकवती अब फिरतो उपसर्ग नही करेगी?

ज्ञानी महात्मा—राजन् कनकवती की ओर से मलयासुंनरी को नही परन्तु महाबल को अवश्य एक दफा भय उपस्थित होगा। वह फिरती हुई यहां ही आयगी और इसी नगर के बाहर एक दफा महाबलकुमार को भयंकर उपद्रव करेगी और उसी पापकर्म के कारण वह संसार-चक्र में पड़कर नीचादि योनियों में पैदा हो कर अनेक प्रकार के घोर दुःख सहन करेगी।

अपने पूर्वभव का वृत्तान्त सुन कर असह्य यातनाओ से बचने के लिए योग्यतानुसार महाबल और मलयासुन्दरी ने गृहस्थधर्म अङ्गीकार किया, और इस जन्म के दुःखों के कारण भूतपूर्व जन्म में विराधित मुनिपद की आराधना करने का विशेष अभिग्रेह धारण किया। इन दोनों के पूर्वभव सम्बन्धी वैराग्य गर्भित चरित्र को सुन कर अनेक मनुष्यों ने वैराग्य प्राप्त कर संयम लेने की उत्सुकता बतलाई। कई भद्रिक परिणामी व्यक्तियों ने गृहस्थ धर्म स्वीकार किया और बहुत से क्रूर मनुष्यों के हृदय पिघल कर कोमल बन

गये। अपने पुत्र व पुत्री का विचित्र और बोधजनक वृत्तान्त सुन कर संसार दुःख से भयभीत हो सूरपाल और वीरधवल राजा चारित्र ग्रहण करने को तैयार होगये। वे हाथ जोड़कर ज्ञानीगुरु से बोले भगवन्! अपने राज्य भार को व्यवस्था करके हम आपके चरणों में संयम ग्रहण करेगे। गुरुजी ने कहा–महानुभावों! ऐसे कार्य में विशेष विलम्ब न करना चाहिये।

गुरुमहाराज का वचन स्वीकार कर उन्हें भक्ति-भाव से नमस्कार कर दोनों राजा शहर मे आए। महाबल वहां पर ही होने के कारण सूरपाल राजा को राज्य को व्यवस्था करने के लिए पृथ्वीस्थानपुर जाने को आवश्यकता न पड़ी। उसने वहां पर ही रहकर महाबल को पृथ्वीस्थानपुर का राज्यभार सौप दिया। और संसार से निश्चिन्त होकर दीक्षा लेने को तय्यार होगया। विचारक धर्मार्थी मनुष्य वस्तु के सत्य स्वरूप समझने के बाद उसे ग्रहण करने और असत्य समझने पर परित्याग करने में कदापि देर नही करते।

संयम ग्रहण करने की सूरपाल राजा की अति

उत्सुकता देखकर वीरधवल राजा ने चंद्रावती न जा-
कर वहां पर ही अपने पुत्र मलयकेतु को बुला लिया,
और उसके आजाने पर वीरधवल राजा ने अपने समस्त
राज्य सम्बन्धी कार्यभार को उसे सौप दिया। बस अब
शेष करना कुछ न था। दोनों राजाओं ने वहां परही
रानियों सहित ज्ञानी गुरुदेव महाराज के पास जाकर
संयम ग्रहण कर लिया। गुरुमहाराज भी कुछ दिन
वहा रहकर उन दोनो राजर्षि शिष्यों को साथ ले अन्यत्र
विहार कर गये। कितने ही समय तक सयम पालकर
और दुष्कर तप का आचरण कर अन्त में आराधना
पूर्वक काल करके वे दोनों राजर्षि स्वर्ग मे गये। वहाँ
से आयु पूर्ण कर महाविदेह में जन्म लेकर पुनः संयम
द्वारा कर्मक्षय करके मोक्ष प्राप्त करेंगे।



(३७)

महाबल मलयासुन्दरी को वैराग्य

महाबल राजा ने सागरतिलक की राजधानी पर अपने कुमार शतबल को स्थापित कर दिया, और वहां पर अपने प्रधान सेनापति को रख कर एवं शतबल कुमार को साथ ले वह अपनी मुख्य राजधानी पृथ्वी-स्थानपुर में आ कर रहा। वहां पर रह कर दुर्जय शत्रुओ पर विजय प्राप्त कर निष्कंटक राज्य पालन करने लगा। ज्ञानीगुरुदेव-महाराज के उपदेश से उसके हृदय में सदैव धर्म भावना जागृत रहती है अतः व्यन्तरदेव की सहाय से वह विशेष प्रकार से धर्म और प्रजा की उन्नति करने लगा। जहां पर धार्मिक, साधनो की

आवश्यकता प्रतीत होती वहां पर राज्य की ओर से वे साधन तैयार कराए जाते। अनेक स्थानों पर राज्य की तरफ़ से दानशालाएँ खोली गईं। विशेषतः वह अपने पूर्व जन्म को याद कर मुनि महात्माओं की सेवा भक्ति करने लगा। गृहस्थधर्म को पालन करते हुए कुछ समय बाद मलयासुन्दरी ने अपने कुल की धुरा को धारण करनेवाले एक सद्गुणी पुत्रको जन्म दिया। जन्मोत्सव पूर्वक राजा महाबल ने उस दूसरे पुत्र का नाम सहस्त्रबल रक्खा।

संसार के प्रपंचमें और पाचो इन्द्रियो के विषय-सुखमें दिन, महीने या अनेक वर्ष बीत जाने पर भी मनुष्यो को कुछ मालूम नही होते। अनादिकाल के लम्बे अभ्यास के कारण निरोगी आयुष्य और इष्ट संयोग की प्राप्ति मनुष्य को विशेष रुचिकर होती है। पूर्व जन्मान्तरों के संस्कारों से स्वाभाविक ही मनुष्य का मन वासनाओं की तरफ आकर्षित होता रहता है। परन्तु अनादि काल से भूले हुए आत्मस्वरूप को प्राप्त करने के लिये बिना किसी सत्पुरुष की प्रेरणाके स्वतः

प्रयत्न करनेवाले भाग्यशाली कितने नजर आते है? जिस तरह भूखे मनुष्य को स्वयं ही अपना खाद्य पदार्थ प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिये वैसे ही आत्म-सुख की इच्छावाले मनुष्य को खुद धर्म की गवेषणा करनी चाहिये। परन्तु यदि पुण्योदय से बिना प्रयत्न किये ही धर्मोपदेशक का समागम मिलजाय तो उससे धर्मस्वरूप समझकर सच्चे सुखकी प्राप्ति के लिये उसे सेवन करने मे जरा भी विलम्ब नही करना चाहिये।

मनुष्य पर जो सकट या विपत्ति आती है वह उसे सच्चा मनुष्य बनाने के लिये ही आती है। सच्चा मानव जीवन जीनेका पाठ सिखाने के लिये ही आती है। संकट मे ही मनुष्य सहनशीलता का शिक्षण प्राप्त करता है। दुःख में ही मनुष्य कर्तव्याकर्तव्य का विचार करता है। सुख में मनुष्य को कुछ भी शिक्षण नही मिलता इतना ही नही बल्कि प्रत्युत् वह अपने आपको भी भूल जाता है। सांसारिक सुख एक प्रकार का नशा है, उसे कोई विरला ही झेल सकता

है। इसे प्राप्त कर अपने स्वरूप का भान रखना यह साधारण बात नही है। बड़े-बड़े विद्वान् भी इस मृग-तृष्णा के लालच में पड़कर अपने कर्तव्यमार्ग से नीचे गिर जाते हैं। जब यह दशा है तो फिर सद्गुणी, सुशीला, सुन्दर स्त्री, गुणवान पुत्र और विशाल राज्य-वैभव प्राप्त कर महाबल क्यो न अपने आप को भूल जाता? अपने ऐश आराम के साधन प्राप्त करते हुए भी याने सासारिक सुख मे निमग्न होकर भी उस ने सुचारु राज्य व्यवस्था के कारण दूर देशों तक अपनी कीर्तिरूपी सुगन्धि फैला दी थी। जितना अच्छा हो सकता है उतना अच्छा राज्य-कार्य करने मे उसने कुछ भी बाकी न रक्खा था।

महाबल राज्य वैभव मे पड़कर सर्वथा धर्ममार्ग विमुख न हुआ था, किन्तु उसे जो आत्मोद्धार का परम कर्त्तव्य पालन करना था, उसे वह अवश्य भूल गया था। राजकार्य और व्यवहारिक मार्ग में प्रवेश किये उसका बहुतसा समय व्यतीत होगया था। एक दिन अर्धरात्रि के समय सुख-शय्या में सोते हुए उसे एक त्याग-मूर्ति

दिखाई दी, जो उसे उद्देश्य कर कह रही थी—इतनी घोर निद्रा ! अभी तक काल्पनिक सुख स्वप्न भङ्ग नहीं हुआ ? समय होगया इस अमूल्य जीवन के कीमती क्षण व्यर्थ न गँवाओ, यह स्वप्नसा देखकर महाबल की निद्रा भंग होगई। उसने सावधान हो उठकर चारों ओर देखा पर उसे कोई नजर न आया। अब वह सुने हुए शब्दों को शान्त वातावरण में तात्विक विचार करते हुए उसके हृदय मे अपने परम कर्त्तव्य ज्ञान के सूर्योदय की एक किरण प्रकाशित हुई।

"निशा विरामे परिचिन्तयामि, गेहे ज्वलिते किमह स्वपामि"

यह श्लोक याद आया। घर जल रहा है मैं किस लिए सो रहा हूं ? मै संसार की वासनाओं में फँस कर सचमुच ही अमूल्य मानवभव के कीमती क्षण व्यर्थ ही गँवा रहा हूँ। क्या संसार में इससे बढ़ कर और भी सुख मिल सकता है ? जिसकी आशा से मैं मृगजल को देख मृग के समान दौड़धूप कर रहा हूं ! मैं क्यों नही इस तुच्छ इन्द्रियसुख लालसा के वन्धन को तोड़ कर आत्मसाधना के मार्ग पर चढ़ जाऊँ ?

मुझमे इतनी कमजोरी ? अहा ! मैं कितना प्रमादी हूँ ? पूर्वभव में किए हुए सुकृत और दुष्कृत का अनुभव करने पर भी उस सच्चे सुख के मार्ग को न स्वीकार कर विनश्वर इन्द्रिय विषय सुख में लुब्ध हो रहा हूँ ? बस अब ऐसा न होगा। अब मुझे यह संसार डरावना लगता है। पिता ! ओ प्यारे पूज्य पिता ! आप धन्य हो ! इस तृष्णामय संसार को त्याग कर परम शान्ति के मार्ग में गमनकर अपनी आत्मा का कल्याण करने वाले पिता ! आप धन्य हो। हे पूजनीय वीरअवल राजर्षी ! आप धन्य है ! मैं भी अब उसी मार्ग का आश्रय लूँगा, अवश्य लूँगा। मेरी निद्रा भग हो होगई है। हे तेजोमय त्यागमूर्ति ! आपने दर्शन देकर मुझे कीचड़ में से खीचलिया।

पूर्वोक्त विरक्त विचारों में ही रात बीत गई। प्रातःकाल होने पर सुखशय्या से उठ कर आवश्यकादि षटकर्म से निपट कर वैराग्यरस पूर्ण हृदय से वह राजसभा में आया। मनुष्य की प्रबल इच्छाशक्ति भी जादू का काम करती है। थोड़ी ही देर के बाद राज-

सभा में एक वनमाली ने आकर विनम्रभाव से कहा— महाराज ! सरकारी बगीचे में ज्ञानदिवाकर और तेजोमय त्यागमूर्ति कोई एक महात्मा पुरुष पधारे हैं। यह सुन-कर महाबल के हर्ष का पार न रहा। अपने मनोभाव को सिद्ध करने वाले महापुरुष का शुभागमन सुनकर वह विकसित होउठा। सचमुच ही मै पुण्यवान हूँ मेरे विचार के साथ ही ज्ञानीगुरु-महाराज का समागम हो गया। बस यही मेरे समुन्नत भविष्य की निशानी है। इच्छा होते ही साधक को उत्तर साधक-सहायक की प्राप्ति होना यही कार्य सिद्धि की सूचना है, यह विचार करते हुए राजा प्रसन्न-चित्त हो सिंहासन से नीचे उतरा। उत्तरासन करके जिस दिशा मे शहर से बाहर महात्मा ठहरे हुए हैं उस दिशा की ओर पांच सात कदम चलकर जमीन पर मस्तक लगा पंचाग नमस्कार किया। गुरुमहाराज के समागम की खबर लानेवाले वनमाली को प्रीति-दान देकर विदा किया। फिर तुरन्त ही राज्य-सभा बरखास्त कर राजा गुरु-महाराज के वन्दनार्थ जाने की तय्यारी करने लगा।

देर ही क्या थी, तुरन्त ही सब तय्यारी होने पर सारा राजकुल साथ ले राजा गुरुमहाराज के समीप जा पहुंचा और उन्हे भक्तिभाव पूर्वक नमस्कार कर धर्मोपदेश सुनने के लिए गुरुमहाराज के सन्मुख बैठ गया। गुरु-महाराज ने धर्मदेशना प्रारम्भ की।

सज्जनो! वास्तविक सुख, क्रोध, अभिमान, कपट, लोभ, लालच और विषय तृष्णाओं को कुचल डालने पर अपने ही भीतर से प्राप्त होता है। बस इसे ही आत्मशुद्धि कहते है। आत्मा में सुख का परम-भण्डार भरा है परन्तु पूर्वोक्त दोनो को नाश किये बिना वह प्राप्त हो नही सकता। आत्मशुद्धि के सिवा सच्चे सुख का लाभ होना असम्भव है। मानलो कि पानी से भरा हुआ एक विशाल कुण्ड है और उसमें एक अमूल्य रत्न पड़ा है, परन्तु उस कुण्ड का पानी गदला है व बार-बार हवा के झोकों से पानी में तरंगे उत्पन्न हो रही है। उस मलीन और हिलते हुए तरंगित पानी की परिस्थिति मे कुण्ड में नीचे पड़े हुए अमूल्य रत्न को क्या आप देख सकेंगे? कदापि नही। बस इसी प्रकार

आत्मा का शुद्ध चैतन्यरूप रत्न मनरूप पानी में नीचे पड़ा है। वह मनरूप पानी विषय कषायों की मलीनता से गदला होरहा है। और अनेक प्रकार की कुत्सित विचार-तरंगों से डोलायमान हो गया है। इसलिये जब-तक विषय-कषाय का अभाव और मनोगत अनेक वितर्कों को शान्ति न हो तब-तक शुद्धात्मरत्न सब सच्चे सुखों के दर्शन की या प्राप्ति की आशा रखना व्यर्थ है। इसी कारण आत्मशुद्धि के लिए मलीन मानसिक वृत्तियों का परित्याग करना चाहिये। बाह्य उपाधियां जो मनोवृत्ति को मलीन करती हैं उनको भी त्याग करनो चाहिये। ऐसा करने पर ही नित्य-अविनाशी आत्मिक-सुख प्राप्त होता है।



(३८)

दीक्षा उपसर्ग और निर्वाण

गुरुमहाराज के मुख से पूर्वोक्त धर्मदेशना सुन कर राजा महाबल आत्मसाधन करने के लिए सावधान हो गया। पुण्योदय के कारण प्रथम से ही उसके अन्दर आत्म जागृति पैदा हो गई थी। धर्मदेशना से उसका पूरी तरह पोषण हो गया। धर्मोपदेश समाप्त होने पर वह सहपरिवार नगर में आ गया। उसने शतबल, सहस्रबल और मलयासुन्दरी को बुला कर उनके समक्ष अपनी संयम अङ्गीकार करने की भावना प्रकट की। जबसे मलयासुन्दरीने अपना पूर्वभव वृत्तांत सुना, तबसे ही संसार से विरक्त थी। वह केवल पति की इच्छा के आधीन होकर इतने समय पर्यन्त गृह-

वास में बिता रही थीं। महाबल के विचार सुन कर उसके उत्साह में और भी वृद्धि हुई। सांसारिक स्नेह बन्धनों को तोड़ कर वह पति के साथ ही संयम ग्रहण करने को तैयार हो गई।

सागरतिलक की राजधानी प्रथम से ही शतबल को सौंप दी गई थी। अब पृथ्वीस्थानपुर की राजगद्दी पर सहस्रबल को आसीन किया। नवीन राजा सहस्र-बल और शतबल ने माता-पिता के संयम ग्रहण करने के अवसर पर नगर में बड़े समारोह से अष्टान्हिका महोत्सव किया। महाबल के साथ अनेक राजपुरुषों और मलयासुन्दरी के साथ अनेक राजकुल की स्त्रियों ने संयम अङ्गीकार किया। दीक्षा ग्रहण करने पर संयम-शिक्षण के लिए मलयासुन्दरी आदि को सपरि-वार महत्तरा साध्वी को सौंप दी गई।

राजर्षि महाबल संयमोचित शिक्षण ग्रहण करते हुए कुछ दिन पृथ्वीस्थानपुर मे विराज कर गुरुमहाराज के साथ अन्यत्र विहार कर गये। साध्वी मलयासुन्दरी भी अपनी गुरु महत्तरा साध्वी के साथ अन्यत्र विहार

कर गई।

अब वे दोनो अलग-अलग स्थलों में विचर कर ज्ञान ध्यान से अपनी आत्मा को कृतार्थ करते हैं। कभी-कभी विचरते हुए सागरतिलक और पृथ्वीस्थान पुर में आकर दोनो पुत्रो को धर्ममार्ग में प्रेरित करते और आत्मगुण-घातक व्यसनो से दूर रहने का उपदेश देते थे। वे दोनों भाई भी परस्पर प्रीतिपरायण होकर सद्गुरु के उपदेश से धर्मध्यान में एवं अपनी - अपनी प्रजा को हरएक प्रकार से सुखी बनाने में सावधान रहते थे। माता - पिता की धर्मप्रेरणा से वे दोनों राजा धर्म में इतने दृढ़ हो गये कि दूसरे मनुष्यों को भी धर्ममार्ग में चलने को प्रेरणा मिलती।

तलवार की धार के समान तीव्र-तपाचरण करते हुए राजर्षि महाबल क्रम से सिद्धान्त के पारगामी हो गीतार्थ होगए। आत्मोद्धार के लिए महान् प्रयत्नशील महामुनि महाबल को गीतार्थ होने के कारण अकेले विचरने की आज्ञा दे दी। अपने क्लिष्ट कर्मनाश करने के लिए उनने भी समुदाय से स्वतंत्र विचरना पसन्द

किया अब वे महातपस्वी अपने साधु-समूह से पृथक होकर जंगलों, स्मशानों, पहाड़ों और गिरिकंदराओं में निवास कर घोर तप के द्वारा आत्मा का उद्धार करने लगे ।

अपनी मनोवृत्ति को दमन करते हुए इन महामुनि ने आत्मधर्म में मेरु-पर्वत के समान निश्चलता प्राप्त की, उपसर्गों को सहन करने में पृथ्वी के समान सहन-शीलता प्राप्त की थी । अपने श्रमण–धर्म में स्थिर रहने के लिए उन्हे आकाश के समान किसी आलम्बन की आवश्यकता न थी । उनकी मुख-मुद्रा चन्द्र के समान सौम्य थी । उनका पवित्र हृदय समुद्र के समान गम्भीर था । वे वैराग्य रस में लीन होकर आत्मध्यान द्वारा कर्म शत्रुओं को निर्मूल करने में निरन्तर साव–धान रहते थे । अपने और पराये के लिए उन महात्मा के हृदय में द्वैतभाव न रह गया था । एक दिन वि–हार करते हुए सन्ध्या के समय परम त्याग की मूर्ति वह महामना महाबल महामुनि सागरतिलक नगर के समीप बाह्योद्यान में आ पहुँचे । अपने क्लिष्ट कर्मरूप शत्रुओं

पर विजय पाकर आत्मीय शुद्ध स्वरूप प्राप्त करने का ही लक्ष्यबिन्दु होने के कारण सध्या समय होने से वे वहां पर ही एक राजकीय बगीचे के पास कायोत्सर्ग ध्यानस्थ हो खड़े हो गये ।

ठीक इसी समय उस बगीचे का माली घूमता हुआ उन महामुनि की ओर आ निकला, उसने ध्यानमुद्रा में खड़े महाबल राजर्षि को देखकर पहचान लिया । क्यों कि वह सरकारी माली ही था, परन्तु सागरतिलक का वच्चा बच्चा भी महाबल को पहचानता था। ध्यानस्थ मुनि को नमस्कार कर वह माली शीघ्र ही शहर में आया और उसने राज्यसभा में जाकर राजा शतबल को सहर्ष यह समाचार सुनाया कि महाराज ! आपके पूज्य पिताजी महामुनि महाबल राजर्षि आज शहर से बाहर सरकारी बगीचे के पास पधारे है, और वहां पर ध्यानमुद्रा में ध्यानस्थ हो खड़े है ।

इस खुश खबर को सुन कर राजा शतबल के हर्ष का पार न रहा । उसने अपने पूज्य-पिता और धर्मगुरु का समागम समाचार देने वाले उस वन-माली को

बहुत सा प्रीतिदान देकर विदा किया। राजा ने विचार किया इस वक्त सन्ध्या का समय होगया है। रात्रि का प्रारम्भ होने आया है, इसलिए प्रातःकाल में ही सर्व परिवार के साथ जाकर पूज्य पिता श्री गुरुमहाराज को वन्दन करूँगा। सचमुच ही मैं भाग्यवान हूं- मेरे पुण्योदय से ही गुरुमहाराज ने यहां पधार कर इस शहर को पवित्र किया है। इस तरह बोलते हुए राजा ने उस दिशा की ओर जहां त्यागमूर्ति महाबल राजर्षि ध्यान में खड़े थे सात-आठ कदम चल कर जमीन पर मस्तक लगाकर पंचांग नमस्कार किया। सुबह होने पर पूज्य पिताजी के दर्शन होंगे! उनके मुखारविंद से धर्मोपदेश सुनूँगा और उनके उपदेशानुसार चलने का भरसक प्रयत्न करूँगा। इन्ही विचारों की उत्सुकता में राजा ने बड़े कष्ट से रात बिताई।

मलयासुन्दरी को राक्षसी का कलंक दिये बाद सन्दूक में से बाहर निकाल कर महाबल राजा ने कनकवती की ताड़ना तर्जना कर उसे देश निकाले की शिक्षा दी थी। स्त्री जाति होने के कारण उसे प्राण-

दण्ड की शिक्षा नही दी गई थी। अब वह अपने दुष्कर्मों से प्रेरित हो देश देशान्तर में भटकती हुई दु.खित अवस्था में दैव–वशात् आज ही कही से साग-रतिलक शहर में आ पहुंची है। किसी कार्य प्रसङ्ग से वह सन्ध्या-समय शहर से बाहर उसी स्थान पर गई जहां पर महातपस्वी राजर्षि महाबल ध्यान लगाए खड़े थे। मुनि महाबल को देखते ही उसने पहचान लिया। अब वह दुष्ट-हृदया स्त्री मन मे सोचने लगी यह क्या ? यह तो सूरपाल राजा का राजकुमार महाबल मालूम होता है, क्या यह साधु बन गया है ? यह तो मेरे सब दुराचरणो को जानता है। यदि इसने मेरे जीवन की घटनाएँ यहाँ पर किसी के सामने प्रकट करदी तो इस शहर में भी मेरी दाल गलनी मुश्किल हो जायगी। फिर तो मुझे यहा रहने तक का स्थान नहीं मिलेगा। लोग तिरस्कार पूर्वक मुझे शहर से बाहर निकाल देंगे। सच कहा है कि 'पापा सर्वत्र शंकिताः' पापी प्राणी सब जगह अपने पाप से शकाशील ही रहता है, मुझे इस वक्त कोई ऐसा उपाय करना चाहिये जिस

से मेरे दुश्चरित्र किसी को भी मालूम न हो सकें। इसी प्रकार के विचार करती हुई और वहां पर चारों ओर गौर से देखती हुई वह वापस शहर में चली गई।

करीब डेढ़ पहर रात बीत चुकी है, चारों ओर घोर अन्धकार छाया हुआ है, सारा शहर निद्रादेवी की गोद में पड़ा सो रहा है, इसी कारण शहर भर में सन्नाटा छा रहा है। रास्ते सुनसान पड़े है। ऐसे मानव संचार रहित समय में एक स्त्री इधर उधर देखती हुई, हाथ में एक जलती हुई लकड़ी लिये शहर से बाहर निकल कर उसी शून्य जंगल की तरफ जा रही है जिधर त्याग-मूर्ति राजर्षि महाबल आत्मध्यान में लीन हो खड़े थे। सचमुच ही इस समय परम संवेग रस में निमग्न हो आत्मस्वरूप के चिन्तन द्वारा यह धर्ममूर्ति महामुनि संसार में जन्म - मरण पैदा कराने वाले अपने कठिन कर्मों को नाश करने में तल्लीन हो रहे थे। ठीक इसी समय वह स्त्री उन महामुनि के समीप आ पहुँची। देवयोग से हमेशा

वहां पर रहनें वाला बगीचे का माली भी आज किसी कार्यवश शहर मे ही रह गया था, अतः उस भूमि भाग को जन-संचार-रहित देख कर वह स्त्री बड़ी प्रसन्न हुई।

पाठक महाशय। भ्रान्ति में न पड़ें। यह अन्य कोई नही, आपकी पूर्वपरिचिता और महाबल मुनि की पूर्व भव की शत्रु कनकवती ही है। आज ऐसी अवस्था में इसे महाबल से बदला लेने का सूझा है। अहा ! कितनी नीचता ! कितना क्रूर स्वभाव ! अपने पराये शत्रु, मित्र, स्वर्ण और पाषाण पर समभाव रखने वाले और आत्मस्वरूप की प्राप्ति के लिए ध्यान–मग्न अवस्था में खड़े हुए महामुनि को जीवित जला देने का घोर पापकर्म करने का भयंकर साहस !! हे सदय हृदय ! धिक्कार नही परन्तु ऐसे घोर पाप कर्म करके भावि परिणाम में नरक की भयंकर यातना भोगने वाले प्राणियों पर तू दया धारण कर।

उसी प्रदेश में किसी मनुष्य ने कोयले के लिए बहुतसी लकड़ियाँ डाल रक्खी थी। उस दुष्टा स्त्री नें

अपने पापकर्म की सिद्धि में उन लकड़ियों का उपयोग कर लिया। घोर अन्धकार वाली रात्रि में उस समय अपना ही आधिपत्य समझ कर कनकवती ने उन लकड़ियों को उठा-उठा कर ध्यानस्थ मुनिराज के चारों ओर चुन दिया। लकड़ियां वहां बहुत थीं अतः पांव से लेकर मस्तक तक लकड़ियों का खूब ढेर लगा दिया जिससे कहीं से भी उनका शरीर दिखाई न दे सके।

मुनि को चारों तरफ से लकड़ियों से ढक कर कनकवती ने चारों गति के अनेक प्रकार के दुःखों से अपनी आत्मा को वेष्टित कर लिया। जन्मान्तर के वैरानुबन्ध से निर्दयी हो उसने उन जीवित मुनि की चिता के चारों ओर अग्नि जला दी। मानो कनकवती के पुण्यसञ्चय को जड़ से ही भस्मीभूत करती हो इस प्रकार अग्नि काष्ट में प्रदीप्त हो गई। आत्मध्यान में सावधान खड़े हुए महामुनि ने स्वयं पर मरणान्तकष्ट आया देख कर मनःसाक्षी आराधना कर ली। अब वे असहनीय वेदना सहन करते हुए अपने आप को बोध देने लगे।

सचमुच ऐसे समय में ही आत्मा और देह की भिन्नता का स्पष्ट आभास होता है। ज्ञानवान मनुष्य की सही परीक्षा ऐसे ही अवसर पर हुआ करती है। ऐसे ही समय पर स्वभाव में स्थिर रहने से कठिन कर्मों का नाश होता है और अपने सच्चे बल की परीक्षा देने का सुअवसर भी ज्ञानी महा पुरुषों को अपने जीवन में कदाचित् ही मिलता है !

अपने चारों ओर लकड़ियां चुन दी है किसने और किसलिए ऐसा किया है ? इसका परिणाम क्या होगा अब अग्नि शरीर तक पहुँचने ही वाली है और उससे मैं जीवित ही अवश्य जल मरूँगा; इन तमाम बातों से महामुनि अनभिज्ञ नही थे। उन्होंने प्रथम ही केवल-ज्ञानधारी गुरुमहाराज के मुख से सुना हुआ था कि एक बार और कनकवती महाबल को दुस्सह उपसर्ग करेगी। एवं महाबल मुनि स्वयं भी उसे अपने सामने देख रहे थे। यदि वह इस संकट से बचना चाहते तो सहज ही बच सकते थे। इतना ही नही किन्तु यदि वह अपने पर अत्याचार करने वाली कनकवती को

सजा देना चाहते तो यह सामर्थ्य भी उनमें था ही। इस शहर का राजा भी उन्हीका पुत्र और परम भक्त था। यह सबकुछ होने पर भी उन महामुनि ने मरणान्त कष्ट क्यों सहन किया होगा ? यह बात साधारण पाठक के मन में आश्चर्य पैदा करने वाली है। जिन त्यागी ज्ञानवान् मुनि ने अपने शरीर के ममत्व को भी त्याग दिया; जिन्हें किसीभी प्रकार की शारीरिक मूर्च्छा नही है वे संसार के कारागृह से मुक्त होकर सदानन्द दाता आत्मस्वरूप की प्राप्ति में रोड़ा बनने वाले शरीर के ममत्व को सामने क्यों आने देगा ?

ऐसे प्रसंग पर जिस जागृतिकी आवश्यकता होती है, वह उन महापुरुष में प्रथम से ही थी। अब वह मानसिक वृत्ति को आत्मस्वभाव में स्थित रखने के लिए स्वयं ही समभाव में दृढ़ होने लगे। आत्मा ! तू जिस देह-मन्दिर में रहा हुआ है वह तुझसे अलग है, उसके जल जाने पर तुझे जरा भी आंच न आयगी। क्यो कि तू अमर है और अरूपी है। यह अग्नि तेरे

पूर्व संचित कर्म मलको जलाकर तुझे विशुद्ध करता है।

इत्यादि प्रबल विशुद्ध भावना बल से कनकवती पर द्वेष और शरीर पर ममत्वभाव पैदा न होने देकर समभाव की सरल श्रेणी से वह महात्मा आगे बढ़े। एकत्व भावना में लीन होने के कारण उनके शुभाशुभ कर्म और देह ममत्व का भाव सर्वथा नष्ट होगया। आत्म स्वरूप में लीन होने से घाति कर्मों का क्षय होते हो उनके हृदयाकाश में केवलज्ञान रूप सूर्य का उदय होगया। ज्यों वह अग्नि जल रही थी त्यों अन्तर अग्नि शुक्लध्यान प्रज्ज्वलित होरहा था। इस शुक्ल-ध्यान रूप अन्तर अग्नि ने देह भस्म होने के पहले ही शेष रहे हुए अघाति कर्मों को भी भस्मीभूत कर डाला। बस अब वह सब कर्मों का नाश होने से कृत-कार्य हो सदा के लिए जन्म-जरा-मरण से मुक्त हो-कर शाश्वत अविनाशी निर्वाण पद को प्राप्त हो गये। धन्य है ऐसी पवित्रात्माओं को।

यह महापुरुषों का अटल उपदेश है कि जो शुभ-कार्य कल करने का विचारा हो उसे आजही करलो

और जो आज करना है उसे अभी करो। श्रेष्ठ विचार आने पर उसे आचार में लाने के लिए विलम्ब मत करो। शुभ-कार्यों में विलम्ब करने से उसमें विघ्न बाधा पड़ते देर नहीं लगती यदि किसी कारण मन में बुरे विचार पैदा हुए है तो उन्हें आचार में लाने की शीघ्रता मत करो विलम्ब करने से मनुष्य बुरे कर्म से बच सकता है। परन्तु शुभ विचार को आचार में लाने के लिए आलस्य या विलम्ब करने से मनुष्य को किसी समय महान् पश्चात्ताप करना पड़ता है।

प्रात.काल होते ही उत्सुकता पूर्वक सकल परिवार को साथ लेकर शतबल राजा अपने पूज्य पिता और धर्मगुरु को वन्दनार्थ उद्यान में आया। परन्तु वहां पर वह महामुनि कही पर भी न दीख पड़ा वनमाली के बतलाए अनुसार जहां पर वह महामुनि कल सन्ध्या समय ध्यानस्थ हो खड़े थे इस समय वहां पर राख का ढेर लगा पड़ा था। उस राख को देखनें से मालूम हुआ कि उसमे किसी मनुष्य को जलाया गया है। खूब बारीकी से [illegible] करने पर यह साबित हो गया कि

किसी दुष्ट ने उन महामुनि को ही जला दिया है। यह दुःखद समाचार सुनते ही धर्मप्रेमी पितृभक्त शतबल राजा अकस्मात् मूर्च्छित हो जमीन पर गिर पड़े यह देख मन्त्री सामन्तों के भी दुःख का पार न रहा। शीतोपचार करने पर राजा होश में आए और पश्चात्ताप करते हुए बोल उठे—अरे! भव-भ्रमण से निर्भीक हो इन महामुनि को ऐसा घोर उपसर्ग किस दुष्टात्मा ने किया है? राख के पुञ्जपर दृष्टि पड़ते ही पिता भक्त कोमल हृदय शतबल को फिरसे मूर्च्छा आगई कुछ देर बाद होश आने पर वह मुक्तकंठ से विलाप करने लगा।

हा! हताश! शतबल! तू इतना निर्भाग्य है। समीप आए हुए दुर्लभ पिता के चरणकमलो में नमस्कार तक भी न कर सका! इतना प्रमाद! हे पूज्य पिता! आपकी करुणा पूर्ण पवित्र दृष्टि मुझ अभागे पर न पड़ सकी। मैं अभाग्यशेखर आपको अमृतमय उपदेश वाणी भी न सुन सका! एक दरिद्र मनुष्य के समान मेरे मनोरथ मनमें ही विलीन होगए! हा!

मेरे ही राज्य में धर्ममूर्ति पिताश्री की यह दशा ! यदि मैं सन्ध्या समय ही यहां आया होता तो मुझे कल ही सब तरह का लाभ प्राप्त हो जाता। परन्तु धिक्कार है मेरे प्रमादी जीव को !

इस प्रकार दुःख मनाते हुए राजा ने राज पुरुषों को आज्ञा दी सुभटों ! जाओ उस दुष्टात्मा के पदचिह्न देख कर उसे जीवित को ही मेरे पास लेआओ।

राजा की आज्ञा होते ही अनेक राजसुभट चारों ओर दौड़ पड़े। पदचिह्न पहचानने वाले राजपुरुष उस स्त्री के पैरों के निशानों के अनुसार धीरे-धीरे शहर से बाहर एक खण्डहर मठ के पास जा पहुचे। बस वहां पर ही वह पापात्मा कनकवती छिपकर बैठी थी। राजपुरुषों ने उसे बांध लिया और राजा के पास ला खड़ी की। राजा ने ताड़ना तर्जना द्वारा मुनिराज को भस्म करने का कारण पूछा। उसने अपना किया हुआ तमाम अकृत्य बतला दिया। राजा ने सुभटों के द्वारा अनेक प्रकार की यातनाओ से उसे मरवा डाली। उसने अपने किये हुए दुष्ट कर्मों के अनुसार ही फल पाया।

वह मृत्यु पाकर छठी नरक में नारकतया उत्पन्न हुई।

अपराधी को दण्ड देने पर भी राजा शतबल का शोक दूर न हुआ। उसके हृदय का भारी घाव न भरा। गुरु और पिता की त्रुटि पूरी न हुई। प्रधान पुरुषों के समझाने पर भी उसके हृदयाकाश से शोक के बादल नष्ट न हुए।

इधर यह समाचार पृथ्वीस्थानपुर में पहुँचने पर राजा सहस्रबल के भी शोक का पार न रहा। उसके आनन्द में निरानन्द छा गया। दोनो राजाओं ने पिता के शोकसागर में निमग्न होकर अपने तमाम प्रकार के सुखों का त्याग कर दिया। अब रात-दिन उनके सामने पिता के गुण और उनकी वह विषम मृत्यु देख पड़ती है, इससे राज्य का सर्व कार्य शिथिल होनें लगा।



(३९)

सा० मलयासु० का उपदेश

इधर साध्वी मलयासुन्दरी ने निर्मल चारित्र पालन करते हुए ज्ञानाभ्यास में आगे बढ़ कर क्रम से ग्यारह अङ्ग का ज्ञान प्राप्त कर लिया था। उसने तत्वज्ञान में गहरा प्रवेश कर लिया था। ज्ञानोपार्जन के साथ वह तीव्र तप भी करती थी। ज्यों क्लिष्ट कर्मों का क्षय करने में वह रात-दिन सावधान रहती थी त्यों नये कर्म वन्ध से भी बचने में बहुत सावधान रहती थी। क्योंकि कर्मों के भयंकर परिणाम का अनुभव उसने इसी भव में किया हुआ था। अभी तक वह उन दुःख के दिनों को भूल न गई थी।

निरन्तर ज्ञान-ध्यान में प्रयत्न करते हुए उस महासती को अवधिज्ञान की प्राप्ति हुई। गुरुमहाराज ने

उसकी उच्च योग्यता देख कर उसे महत्तरा (प्रवर्तनी) की पदवी से विभूषित किया था। अवधिज्ञान से वह मनुष्यों के सन्देह दूर कर उन्हें सद्बोध देकर धर्म-मार्ग में प्रेरित करती थी। अपने ज्ञान के प्रकाश से एक दिन उसने महामुनि महाबल का निर्वाण हुआ देखा। शतबल को पितृ शोकसागर में निमग्न देख उसका उद्धार करने की भावना से महत्तरा मलयासुन्दरी अनेक साध्वी समुदाय के साथ विहार कर सागरतिलक शहर में पधारी।

अपनी माता महत्तरा मलयासुन्दरी का आगमन सुनकर राजा शतबल को बहुत प्रसन्नता हुई। समाचार मिलते ही वह सपरिवार तत्काल महत्तरा को वन्दना करने आया। नमस्कार कर वह धर्म-शिक्षा ग्रहण करने की इच्छा से परिवार सहित उचित स्थान पर बैठ गया।

अमृत के समान मधुर वचनों द्वारा प्रसन्न मुख से साध्वी मलयासुन्दरी ने उपदेश करते हुए कहा—शतबल ! क्या तुम शरीर को क्षणभंगुर, आयुष्य की

अल्पता और संयोगों की वियोगशीलता भूल गये ? पुत्र ! संसार में इस नश्वर देह से कौन अमर रहा है ? अनन्त बलधारक और देवदेवेन्द्रों से सेवित तीर्थंकरों ने भी क्या इस देह का परित्याग नही किया ? महासत्वशाली मनुष्यों में शिरोमणि तुम्हारे पिता महामुनि महाबल उस स्त्री के किये हुए उपसर्ग के बाद केवलज्ञान प्राप्त करके उसी समय निर्वाण पद को पाये हैं।

जिसके लिए धन, धाम, स्वजन स्त्री पुत्रादि सर्व वस्तुओं का परित्याग किया जाता है। जिसके लिए तपश्चरण आदि दुष्कर धर्मक्रियाएं कर महान् दुःख सहन किये जाते है वह दुर्लभ से दुर्लभ परम पद को उन्होंने प्राप्त किया है। वे जन्म जरा और मृत्यु आदि संसार के दुःखों से सदा के लिए मुक्त हो गये हैं। शाश्वत सुख को पाने वाले अपने पिता के लिए तुम किसलिए शोक करते हो ?

यदि कभी किसी अपने प्रिय मित्र को महान् निधि की प्राप्ति हुई हो तो उस समय उस पर भक्ति

या प्रेम का दम भरने वाले मनुष्य को खुशी होगी या शोक ? बस वैसे ही तुम्हारे पिता को केवलज्ञान रूप आत्मनिधान की प्राप्ति हुई है, इससे तुम्हे शोक नही बल्कि आनन्द होना चाहिये।

जिस तरह किसी का कोई सगा-सम्बन्धी बहुत दिनों से कैदखाने में रहा हुआ हो और किसी समय उस कैदखाने से वह सदा के लिए मुक्त होगया हो और यह समाचार उसके किसी इष्ट जन को मिला हो तो इससे वह खुश होगा या शोकातुर ? पुत्र ! तुम्हारे पूज्य पिता भी संसार के बन्धनो से सदा के लिए मुक्त हो गए है, अत ऐसे समय तुम्हे शोक नही करना चाहिये। निर्वाण समय के कष्ट को यादकर जो तुम्हे शोक होता है इसमें भी तुम्हारी विचार शून्यता है। क्या संग्राम में विजय की इच्छा वाले सुभट शत्रुओ के प्रहार सहन नही करते ? उसी प्रकार तुम्हारे पिता ने जीवन संग्राम में कर्म-शत्रुओं के साथ युद्ध करते हुए शुद्धात्मा स्वभावरूप विजय लक्ष्मी की इच्छा से जो उस समय कष्ट या उपसर्ग सहा है वह उस विजय के

सामने उनके मनमें कुछ महत्व नही रखता ।

हे वत्स ! तुम्हें जो इस बात के याद आने से दुःख होता कि मैं पिता के चरणकमलों में नमस्कार न कर पाया । यह दुःख मानना भी उचित नही क्योंकि तुम सदा से ही पितृभक्त रहे हो, पिता की सेवा-भक्ति तुमने हमेशा की है और आज भी तुम्हारा उनके प्रति वही भाव है । इसलिये पिताकी साक्षात् आराधना करने से जो लाभ प्राप्त हो सकता है वह तुमने अपने परिणाम की विशुद्धता से प्राप्त कर लिया है । उनके प्रति इस प्रकार के भक्ति-भाव द्वारा और भी तुम्हे अधिक लाभ होगा । अतः हे पुत्र ! संसार की विचित्रता का खयाल कर तुझे पिता के शोक में पड़कर अपने कर्त्तव्य को न भूलना चाहिये, शोक में निमग्न होकर मनुष्य अपना एवं दूसरों का रक्षण नहीं कर सकता । संसार दुःखों का घर समझो । संसार के सम्बन्धों को स्वप्न के समान अनित्य समझो, लक्ष्मी को विजली के समान चपल समझो और जीवन को पानी के वुलवुले के सदृश जानो । पुत्र ! गुरु शिक्षा ग्रहण

करने में चतुर तुम्हारे जैसे विवेकी पुरुष भी जब इस तरह का शोक करेगे तो फिर धैर्य और विवेक गुण किसका आश्रय लेंगे ?

इसप्रकार महत्तरा मलयासुन्दरी शोक निमग्न राजा शतबल को उपदेश देकर शोक सागर से पार किया। उसके सारगर्भित और युक्तिपूर्ण वचनों का शतबल पर इतना गहरा असर हुआ कि वह शोक रहित होकर धर्म-ध्यान में सावधान होगया। महत्तरा साध्वी अपने कल्प की मर्यादानुसार जितने दिन सागर तिलक शहरमें रही उतने दिन निरन्तर शतबल उनका धर्मोपदेश सुनता रहा। जिस जगह महाबल मुनि का निर्वाण हुआ था उस जगह शतबल राजा ने एक बड़ा विशाल मन्दिर बनवाया और उसमें महाबल की मूर्ति स्थापन कर बड़ा भारी महोत्सव किया और महत्तरा मलयासुन्दरी राजा को धर्म में सावधान एव स्थिर कर वहां से अन्यत्र विहार कर गई।

परोपकार प्रवीणा महत्तरा मलयासुन्दरी सागर-तिलक शहर से विहार कर अपने लघु पुत्र सहस्रबल

की राजधानी पृथ्वीस्थानपुर में आ पहुँची। पिता के शोक से राजा सहस्त्रबल की भी खराब दशा हो रही थी। महत्तरा ने उसे भी उपदेश देकर कर्त्तव्य मार्ग में स्थिर किया।

पृथ्वीस्थानपुर में महत्तरा के आगमन का समाचार सुनकर शतबल भी उसके दर्शन और भाई से मिलने की उत्सुकता से वहां आगया। अब निरन्तर दीनों भाई धर्मपरायण होकर महत्तरा का धर्मोपदेश सुनते हैं और एकाग्र मन से धर्मसेवा करते हैं। उन की धर्मश्रद्धा बड़ी दृढ़ थी। वे सदैव त्रिकाल जिन-पूजन करते थे, सुपात्र दान देते। यथाशक्ति तपश्चरण भी करते। अनेक विधि सङ्घ-भक्ति और स्वामी-वात्सल्य किया करते थे। गरीब अनाथों के लिए जगह जगह पर अन्नदान के क्षेत्र खोल रखे थे। जीव-हिंसा तथा अधर्म एवं अनीति के मार्गानुयाइयो को सख्त कानून से अथवा सत्ता द्वारा रोका जाता था। उन दोनों भाइयों ने अपनी प्रजा में अनेक प्रकार के उपकारी कार्य कर जैनधर्म का खूब प्रचार किया था।

प्रजा के लिये स्वयं अपने खर्च से हरएक शहर में जैन मन्दिर निर्माण कराये थे। धर्मात्माओं के लिये पौषधशालाएँ, बीमारो के लिये औषधालय, अपाहिजो के लिये अनाथालय और बेकार पशुओं के लिये पांजरापोलों का निर्माण करवाया था।



(४०)

साध्वी मलयासुन्दरी का स्वर्गगमन

महत्तरा मलयासुन्दरी अपने दोनों पुत्रों को धर्म-मार्ग में स्थिर कर वहां से अन्यत्र विहार कर गई। अनेक देशदेशान्तरों में विचर कर उसने हजारो मनुष्यों को धर्म में जोड़ा। उसके सारगर्भित धर्मोपदेश में जादू-सा प्रभाव भरा था। उसकी शान्त और आनन्दी मुखमुद्रा दर्शकों को नमन करने के लिए विवश करती थी। राजतेज और तपस्तेज एकत्रित होने से उसकी धर्मदेशना का श्रोताओं पर बड़ा गहरा असर पड़ता था। उसे देखते ही कठिन हृदय वाले मनुष्य के मन में भी पूज्यभाव पैदा हो जाता था।

उसने अपने अन्तिम दिनो में घोर तपश्चर्या कर और निरन्तर ज्ञान ध्यान में ही लीन रह कर बहुत से क्लिष्ट कर्मों को नष्ट कर दिया था। यह तो हम प्रथम ही लिख चुके है कि उसके घोर तपश्चरण और विशुद्ध चारित्र के कारण उसे अवधिज्ञान पैदा हुआ था। एक दिन शरीर शिथिल होने पर उसने अपने ज्ञानबल से जान लिया कि अब मेरा आयुष्य बहुत कम रह गया है। उसने सावधान हो समाधि मरण के लिए तैयारी करली। चारों प्रकार के आहार का परित्याग कर आराधना की। देह को बिसरा कर अरिहन्त, सिद्ध,साधु और सर्वज्ञ प्रणीत धर्म की शरण स्वीकार करली।

अन्त समय संसार के समस्त प्राणियों से, अपने से, ज्ञाताज्ञात हुए अपराधों की क्षमा याचना करते और अरिहन्त, भगवन्त को स्मरण करते हुए इस मानव-जीवन यात्रा को समाप्त कर महत्तरा मलया—सुन्दरी स्वर्ग में पहुंच गई। उसकी आत्मा अच्युत् नामक बारहवें स्वर्ग में जाकर देवतया उत्पन्न होगई।

देव-भव का आयुष्य पूर्ण करके महाविदेह क्षेत्र में उत्तमकुल में जन्म लेकर चारित्र की आराधना करके केवल ज्ञान प्राप्त करके अन्त में निर्वाण-पद प्राप्त करेगा।

पाठक ! महाशय ! बस यहां पर इस महासती का जीवन चरित्र समाप्त होता है। यदि आपने इसे ध्यानपूर्वक पढ़ा है तो इसमें से आपके जीवन को उन्नत बनाने वाली आपको बहुतसी शिक्षाएँ मिल सकती है। ग्रन्थ पाठक के विचारानुसार ही या उसके ग्रहण करने की योग्यतानुसार ही उसे लाभप्रद होता है। इस ग्रन्थ में भी पाठकों को ज्ञेय, हेय और उपादेय योग्य बहुत सी शिक्षाएँ भरी है। आप अपनी इच्छानुसार ग्रहण कर सकते हैं।

ओ ३ म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः

